TIGHT BINDING BOOK

TEXT PROBLEM WITHIN THE BOOK ONLY

TEXT FLY WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL LIBRARY
OU_182437
UNIVERSAL LIBRARY

OUP—707—25-4-81—10,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81 V65V

Accession No. P.G.H5576

Author विद्यापति

Title विद्यापति की पदावली

This book should be returned on or before the date last marked below

समर्पण

हिन्दी के उन 'सफल समालोचकों' के कुशल करों में
जो अपने फतवे को अकाट्य और अलंघनीय साबित करने के लिए
'नवरत्न' में दस रत्न घुसेड़ सकते हैं,
जो 'देव' को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिए 'बिहारी' को,
एवं बिहारी को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिए
कितने अन्य कवियों की
कृतियों पर
सफाई के साथ पर्दा डाल सकते हैं,
जो किसी विशेष कवि के श्रद्धालु समर्थकों को
नीचा दिखाने के लिए
'दास' को आकाश पर चढ़ा सकते हैं
तथा
जो 'केशव' की कविता में 'तुलसी' की कविता से
अधिक काव्य-गुण पाते हैं—
अभिनवजयदेव
मैथिलकोकिल
विद्यापति की पदावली
का
यह संक्षिप्त संकलन
उनके नौसिखे संकलयिता द्वारा
सादर, सविनय और सभय समर्पित ।

मैथिल-कोकिल

कोकिल की कलकंठता कितनी मधुर, कितनी सरस और कितनी हृदय-ग्राहिणी होती है; इसका परिचय इसीसे मिलता है कि जब संस्कृत के सहृदय विद्वानों को कविकुलगुरु महर्षि वाल्मीकि की वंदना के लिए जिह्वा खोलनी पड़ी तब उन्होंने यही कहा—

कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम् ।
आरुह्य कविता-शाखां वन्दे वाल्मीकि-कोकिलम् ।।

इस एक श्लोक ही में—जो समस्त गुण आदिकवि की रचनाओं में है उनका व्यापक निरूपण है—थोड़े से शब्दों में ही बहुत कुछ कह दिया गया है। इसी प्रकार भारती के वरपुत्र विद्यापति की लोकोत्तर रचनाओं का परिचय देने, उनके माधुर्य, प्रसाद, सरसता और मनोमुग्धकारिता की व्याख्या करने के लिए उनको 'मैथिल-कोकिल' कह देना ही पर्याप्त है। आप मैथिली भाषा-राकारजनी के राकेश और कविता-कामिनी के कमनीय कांत हैं। आपकी कोकिल-काकली-कलित मधुमयता, कोमल-कान्त पदावली, भावुक-हृदयविमोहिनी भावुकता और नव-नव भावोन्मेषिणी प्रतिभा देखकर चित्त विमुग्ध हो जाता है। आपके इन्हीं गुणों की आकर्षिणी शक्ति का यह प्रभाव है कि केवल मैथिली भाषा को ही आपका गर्व नहीं है, बंगभाषा और हिन्दीभाषा-भाषी भी आपको अपनाने में अपना गौरव समझते हैं, और आज भी हृदय से आपका अभिनन्दन करते हैं। तीन-तीन प्रान्तों में समान भाव से समादृत होने का गुण यदि किसी कविता में है, तो आपकी ही कविता में है, अन्य किसी की कविता को आज तक यह महत्त्व नहीं प्राप्त हुआ। खेद है, ऐसी अपूर्व रचना का समुचित प्रचार अब तक प्रत्येक प्रान्त में नहीं हुआ। इसी उद्देश्य की पूर्त्ति के लिए यह संग्रह तैयार किया गया है। संग्रहकर्त्ता ने उनकी उत्तमोत्तम रचना-कुसुमावली में से सरस-से-सरस सुमन के संग्रह करने में

जिस मधुप-वृत्ति का परिचय दिया है, उसकी भूयसी प्रशंसा की जा सकती है। पादटिप्पणियाँ तो सोने में सुगन्ध हैं। यदि आपलोगों ने इसका समुचित समादर किया तो अतीव सुन्दर आकार-प्रकार में उक्त कविपुंगव की अधिकांश रचनाएँ आपलोगों के कर-कमलों में अर्पित की जावेंगी। उस समय मैं एक वृहत् भूमिका द्वारा इसी महान् कवि की रचनाओं पर समुचित प्रकाश डालने की चेष्टा करूँगा। आज इन कतिपय पंक्तियों को लिखकर ही संतोष ग्रहण करता हूँ।

हिन्दू-विश्वविद्यालय
काशी

अयोध्यासिंह उपाध्याय

तृतीय-संस्करण

हिन्दी-भाषा के प्रेमियों ने जिस प्रकार विद्यापति की पदावली के इस सचित्र-सटीक संकलन के प्रथम तथा द्वितीय संस्करण को अपनाया है उसका अनुभव कर मैं नितान्त सुखी हूँ। आज इस संकलन का तीसरा संस्करण प्रकाशित होने जा रहा है। इस उपलक्ष में सहृदय प्रकाशक महोदय तथा संकलयिता जी को मैं बधाई देता हूँ।

प्रकाशकजी के अनुरोध से बाध्य होकर संशोधन करने की दृष्टि से मैंने इसकी पुनरावृत्ति की। मुख्यतः यह श्रीयुत नगेन्द्रनाथ गुप्त के संकलन पर अवलम्बित है। जब तक उस संकलन की परीक्षा प्राचीन हस्त-लिपि ग्रन्थों के सहारे न की जायगी तब तक मूल पदों पर कलम लगाना अनुचित होगा। पर इसके लिए जितना अवकाश चाहिए वह मुझे नहीं मिल सका। इस संकलन की बड़ी माँग है, अतएव अधिक दिनों तक इसे अप्रकाशित रखना भी उचित नहीं है। मूल पदों के पाठ को मैंने ज्यों-का-त्यों रहने दिया है; क्योंकि इससे शुद्ध पाठ अब तक पाठकों को देखने का सौभाग्य नहीं हुआ है और वे इससे अभ्यस्त से हो गये हैं। बिना प्रमाण के इसमें यदि हेरफेर किया जाय तो कैसे ? हाँ, कई स्थानों में मुझे सन्देह उत्पन्न हुए थे पर उनका निराकरण तब तक नहीं हो सकेगा जब तक हस्त-लिखित प्राचीन पुस्तकों को मैं न देखूंगा।

टीका में मैंने जहाँ-तहाँ कुछ हेरफेर किया है। समकालीन साहित्य के अभाव के कारण विद्यापति की पदावली का अर्थ लगाना सब स्थानों में सर्वथा विवाद-शून्य नहीं रह सकता। लोग समझते होंगे कि मैथिल इन मैथिली पदों को अच्छी तरह समझते होंगे। यद्यपि साधारणतया यह ठीक है, पर सम्पूर्णतया नहीं। आधुनिक मैथिली विद्यापति के काल की मैथिली नहीं है। दोनों में

बहुत अन्तर हो गया है। कहीं कहीं तो ऐसा मालूम पड़ता है कि इस महाकवि ने अपने अनूठे भावों को संगीत-बद्ध करने के लिए अनूठे शब्दों का निर्माण किया है। ऐसी अवस्था में कितनी टीकाएँ प्रकाशित हुई हैं और होंगी उनके संबन्ध में समालोचना की गुंजाइश है और रहेगी। इन बातों को दृष्टि में रखते हुए मैंने प्रथम संस्करण में की टीका का संशोधन उन स्थानों में किया है जहाँ भाषा का यथार्थ भाव व्यक्त करने के लिए वैसा करना मुझे नितान्त आवश्यक प्रतीत हुआ। यह मानना होगा कि इस प्रकार के गुटके संस्करण में टीका के लिए यथेष्ट स्थान मिलना असंभव है। यदि अपने काम से मुझे कुछ भी संतोष है तो इसीलिए कि इससे अधिक संशोधन मैं इस संस्करण में नहीं कर सकता था।

मैं तो ऐसे संस्करण की प्रतीक्षा कर रहा हूँ जिसमें पदों के पाठ निर्विवाद हों और टीका विस्तृत, समालोचनात्मक और प्रामाणिक। देखूं, यह मधुर स्वप्न कब तक चरितार्थ होता है ? तब तक के लिए सहृदय पाठकों से मेरा अनुरोध है कि ऐसे अधूरे प्रयत्नों से सन्तोष करें। यदि इसमें उनकी तृप्ति न हो तो शिष्ट समालोचना द्वारा तथ्य निरूपण करके ही वे अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हों।

—श्री गंगानंद सिंह

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१. कवि-परिचय	१३-५२	१२. कौतुक	१८७
२. वन्दना	५५	१३. अभिसार	१९७
३. वयःसन्धि	५९	१४. छलना	२१९
४. नखशिख	६७	१५. मान	२२९
५. सद्यःस्नाता	८५	१६. मान-भंग	२६१
६. प्रेम-प्रसंग	९१	१७. विदग्ध-विलास	२७१
७. दूती	११७	१८. वसंत	२८३
८. नोकझोंक	१३५	१९. विरह	२९९
९. सखी-शिक्षा	१४१	२०. भावोल्लास	३३९
१०. मिलन	१५३	२१. प्रार्थना और नचारी	३४९
११. सखी-संभाषण	१७३	२२. विविध	३६९

धन्यवाद

इस पुस्तक के पदों के संकलन में मुझे नगेन्द्रनाथ गुप्त द्वारा सम्पादित और जस्टिस शारदाचरण मित्र द्वारा प्रकाशित बँगला 'विद्यापतिर पदावली' से अधिक सहायता मिली है, अतः इन सज्जनों का मैं अत्यन्त अनुगृहीत हूँ। 'विद्यापति का परिचय' लिखने में उक्त पुस्तक, 'मैथिल-कोकिल विद्यापति', 'हिस्ट्री ऑफ तिरहुत' एवं 'मैथिली-दर्पण' से सहायता मिली है; अतः इनके लेखक भी मेरे धन्यवाद के पात्र हैं।

हिन्दू विश्वविद्यालय के अध्यापन एवं कविता-रचना से अपना अमूल्य समय बचाकर इस छोटे से संग्रह के लिए एक छोटी किन्तु चोखी भूमिका लिख देने के लिए पं० अयोध्यासिंहजी उपाध्याय का मैं चिर-ऋणी हूँ।

सुहृद्वर बाबू शिवपूजनसहाय, श्रद्धेय पं० जनार्दन झा, श्री जगदीश्वर ओझा, 'मैथिली' सम्पादक बाबू उदितनारायणलालदास, मित्रवर श्री रामनाथ 'सुमन', प्रिय 'विकल' आदि ने इस संग्रह को उपयोगी बनाने में मेरी सहायता की है, इनके प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

सबसे अधिक धन्यवाद के पात्र हैं पुस्तकभंडार के प्राण आचार्य श्रीरामलोचनशरणजी जिनके उत्साह-दान से ही पुस्तक लिखी गई है और जिन्होंने इसे सुलभ और सुन्दर बनाने में कुछ भी उठा नहीं रक्खा है।

—श्री बेनीपुरी

विद्यापति का परिचय

सम्मतियाँ

Every reader of this beautiful selection of Vidyapati's poems is sure to be rewarded with delight and pleasure that are the fruit of literary pursuits.

—**The 'People', Lahore.**

प्रस्तुत पुस्तक में विद्यापति के संबन्ध में जितनी जानने योग्य बातें हैं उन सबका बहुत अच्छी तरह विवेचन किया गया है। यह संस्करण बहुत ही अच्छा निकला। पाद-टिप्पणियाँ बहुत ही उपयोगी हैं। इस संस्करण की उपयोगिता के विषय में हम केवल यही कह सकते हैं कि हमारे एक मित्र, जो हिन्दी-साहित्य से सर्वथा विरक्त थे इन पादटिप्पणियों की सहायता से 'विद्यापति' का अध्ययन करके ही 'हिन्दी-साहित्य' के उपासक बन गये।

—**'माधुरी' (लखनऊ)**

जन्मस्थान

विद्यापति का जन्म 'दरभंगा' जिले के बेनीपट्टी थाने के अन्तर्गत 'विसपी' गाँव में हुआ था। दरभंगे से जो रेलगाड़ी उत्तर-पश्चिम की ओर जाती है, उसका तीसरा स्टेशन 'कमतौल' है। कमतौल से लगभग चार मील पर यह गाँव है। विद्यापति के पूर्वज बहुत दिनों से यहीं बास करते थे। इस गाँव का पहला नाम 'गढ़-बिसपी' था। इनको यह गाँव, इनके आश्रय-दाता राजा शिवसिंह की ओर से, उपहारस्वरूप मिला था। इस दान का ताम्रपत्र भी प्राप्त हुआ है। उस ताम्रपत्र का कुछ अंश यहाँ दिया जाता है।

स्वस्तिश्रीगजरथपुरात् समस्तप्रक्रियाविराजमानश्रीमद्रामेश्वरीवरलब्धप्रसाद-भवानीभवभक्तिभावनापरायणरूपनारायण महाराजाधिराजश्रीमच्छिवसिंहदेव-पादस्समरविजयिनो जरैल तप्पायां 'बिसपी' ग्रामवास्तव्यसकललोकान् भूकर्षकांश्च समादिशन्ति। ज्ञातुमस्तुभवताम्। ग्रामोऽयमस्माभिः सप्रक्रियाभिर्नवजयदेव महाराजपण्डित ठक्कुर श्रीविद्यापतिभ्यः शासनीकृत्य प्रदत्तोऽतोऽयमेतेषां वचनकरी भूकर्षणादिकर्म्मकरिष्यथेति ।। ल० सं० २९३ श्रावण सुदि ७ गुरौ।

इनके वंशधर बहुत दिनों तक इसी गाँव में बसते रहे। किन्तु, इधर चार पुश्त पहले वे इस गाँव को छोड़कर इसी जिले के 'सौराठ' नामक गाँव में बस गये हैं। अँगरेजी राज्य के पहले तक वे लोग इस गाँव का उपभोग, लखिराज के रूप में करते थे। किन्तु अँगरेजी सरकार द्वारा सर्वे (पैमाइश) होने के समय इस गाँव का स्वत्व इनके वंशधरों से छीन लिया गया। उस समय इनके वंशधरों ने अपना स्वत्व सिद्ध करने के लिए उपर्युक्त ताम्रपत्र पेश किया था। इस ताम्रपत्र के सम्बन्ध में कुछ दिनों तक खूब विवाद चला। ग्रियर्सन साहब इसे जाली बताते रहे। किन्तु, महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री तथा अन्य बंगीय अनुसंधानकर्त्ताओं ने इस दान-पत्र को प्रामाणिक माना है।

'बिसपी' गाँव इनको शिवसिंह ने अवश्य दिया था। विद्यापति के प्रसिद्ध विद्वेषी पण्डित केशव मिश्र इसी दान की ओर लक्ष्य कर 'अति लुब्ध नगर-याचक' नाम से इनका उपहास किया करते थे।

बंगाली नहीं, बिहारी

इन्हें बंग-देशीय सिद्ध करने के लिए भी कोशिश हुई थी।

बात यों है कि इनकी अधिकांश रचनाएँ शृंगार-रस से ओत-प्रोत हैं। भारतीय शृंगार कवियों के प्रधान उपास्य देव हैं—राधाकृष्ण। संस्कृत और व्रज-भाषा का शृंगार साहित्य राधाकृष्ण की केलिक्रीड़ाओं से भरा पड़ा है। इन्होंने भी अपने पदों में राधाकृष्ण की लीलाओं का वर्णन किया है, और खूब किया है। इस विषय के ऐसे मधुर और कोमल पद भाषा-साहित्य में अत्यन्त मिलना कठिन है।

जिस समय बंगाल में श्रीचैतन्य महाप्रभु का आविर्भाव हुआ, उस समय इस कवि-कोकिल की काकली मिथिला की गली-गली को रसप्लावित कर बंगाल के श्यामल व्योम-मंडल को गुंजा रही थी। श्रीचैतन्यदेव के कानों में भी इसकी मधुर ध्वनि पड़ी। सुनते ही वे मंत्रमुग्ध हो गए। वे ढूंढ़-ढूँढ़कर इनके पद गाने लगे। इनके अलौकिक पदों को गाते-गाते प्रेमावेश में वे मूच्छित हो जाते थे।

श्रीचैतन्यदेव भारत के एक अवतारी पुरुषों में हैं—ऐसा सौभाग्य प्राप्त करना विद्यापति के लिए कितने गौरव की बात है।

श्रीचैतन्यदेव की शिष्य-परंपरा में विद्यापति के पद गाने की प्रथा अनुदिन बढ़ती गई। यही नहीं, विद्यापति के ही अनुकरण पर कृष्णदास, नरोत्तमदास, गोविन्ददास*, ज्ञानदास, श्रीनिवास, नरहरिदास आदि बंगीय कवियों ने कविताएँ बनाना प्रारम्भ किया।

---

*'गोविन्ददास' मैथिल कवि थे। इनके पदों का सटिप्पणी संग्रह 'गोविन्दगीतावली' नाम से 'पुस्तकभंडार' द्वारा प्रकाशित हो चुका है।

बाबू नगेंद्रनाथ गुप्त लिखते हैं—"विद्यापतिर जे रूप अनुकरण हइयाछिल, बोध हय, कोन देशे कोन कविर तद्रूप हय नाई। ताँहारइ भाषा भाँगिया-चुरिया, गढ़िया-गठिया, रूप-रस, छन्दोबंध, ठाम-भंगी शब्द, उत्प्रेक्षा, उपमा, ताँहारइ पदावली हइते लइया लोकमनोमोहन वैष्णवकाव्यसमूह सृजित हइल।"

श्री त्रैलोक्यनाथ भट्टाचार्य, एम० ए०, बी० एल० ने जो लिखा था, उसका भाव देखिये—"विद्यापति और चण्डीदास की अतुलनीय प्रतिभा से समस्त बंग-साहित्य उज्ज्वल और सजीव हुआ है। वैष्णव गोविन्ददास और ज्ञानदास से लेकर हिन्दू बंकिमचन्द्र और ब्राह्म रवीन्द्रनाथ ठाकुर तक सभी उनलोगों की आभा से आलोकित हैं और उनलोगों का अनुकरण करके कविता-रचना में व्यस्त पाये जाते हैं।"

फल यह हुआ कि विद्यापति बंगालियों की रग-रग में प्रवेश कर गये। सैकड़ों वर्षों तक लगातार बंगालियों द्वारा गाये जाने के कारण इनके बंगदेशीय पदों का रूप ठेठ बंगला हो गया। अब तो बंगाली लोग यह सर्वथा भूल ही गये कि 'विद्यापति बंगाली नहीं, मैथिल थे।'

बंगाली भाई अपनी कुशाग्र बुद्धि के लिए प्रसिद्ध हैं। उनलोगों ने इनका निवासस्थान भी बंगाल ही में ढूँढ़ निकाला। यही नहीं, 'शिवसिंह' नामक एक बंगाली राजा भी कहीं से टपक पड़े, 'रानी लखिमा देवी' भी मिल गई! यों सब प्रकार से सिद्ध हो गया कि विद्यापति ठेठ बंगाली थे!

बंगला १२८२ साल में (स्वर्गीय) राजकृष्ण मुखोपाध्याय ने पहले-पहल 'बंगदर्शन' नामक पत्र में यह प्रकाशित किया कि 'विद्यापति बंगाली नही, मैथिल थे।' इसके प्रमाण में उन्होंने उपर्युक्त ताम्रपत्र आदि पेश किये। फिर तो सारे बंगाल में कोलाहल मच गया। विद्यापति पर बंगाली लोग इतने फिदा थे कि उनका अन्यदेशीय सिद्ध होना वे सुनना नहीं चाहते थे।

उस समय एक प्रसिद्ध बंगला-लेखक ने यह अन्दाज लड़ाया था कि विद्यापति बंगाली ही थे—पहले बंगाली लोग मिथिला में विद्याध्ययन को जाते थे। सम्भः

है, विद्यापति यहाँ विद्याध्ययन को गये हो और वहाँ अपनी प्रतिभा से राजा शिवसिंह को प्रसन्न कर गाँव प्राप्त किये हो और बस गये हो।

किन्तु, ये सब गपोडबाजियाँ अब गलत साबित हो चुकी हैं। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री, जस्टिस शारदाचरण मित्र, बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त आदि सभी बगीय विद्वानो ने यह कबूल कर लिया है कि ये मिथिलानिवासी थे और इन्होने मैथिली भाषा मे कविता की है।

हमे धन्यवाद देना चाहिए श्रीयुत ग्रियर्सन साहब को, जिन्होने सबसे पहले विद्यापति का बिहारी होना सिद्ध किया था।

जन्म-काल

प्राचीन कवियो की तरह विद्यापति के जन्म और मृत्यु के समय भी निश्चित नही हैं। किवदन्ती तथा स्फटपदो के आधार पर ही इसकी विवेचना करना सम्प्रति सभव है।

पता तो केवल इसीका लगता है कि लक्ष्मणाब्द २९३ या शकाब्द १२२४ मे वसिह मरे थे, उसी साल शिवसिह राजगद्दी पर बैठे थे, और राजगद्दी पर बैठने के छह महीने के अन्दर उन्होने विद्यापति को 'बिसपी' गाँव उपहार मे दिया था।

शिवसिह के पिता देवसिंह की मृत्यु के विषय मे विद्यापति का एक पद गो है—

अनल[३] रन्ध्र[९] कर[२] लक्खन नरवइ सकसमुद्द[४] कर[२] अगिनि[३] ससी[१]।
चैत कारि छठि जेठा मिलिओ बार बेहप्पय जाहु लसी॥
देवसिंह जू पुहुमि छड्डिआ अद्धासन सुरराअ सरू। इत्यादि

बाबू ब्रजनन्दन सहाय ने अपने 'मैथिल-कोकिल विद्यापति' ग्रन्थ मे लिखा है कि "बिसपी गाँव प्राप्त करने के समय विद्यापति की अवस्था केवल बीस वर्ष की थी—इसके पहले विद्यापति ने 'कीर्त्तिलता' नाम की पुस्तक लिखी थी।" इस

प्रकार सहायजी उसे १६ वर्ष की अवस्था में लिखी हुई बताते हैं। सहायजी का यह कथन अनुमान-विरुद्ध तथा ऐतिहासिक प्रमाणों से असत्य सिद्ध होता है।

सबसे प्रधान कारण तो यह है कि शिवसिंह गद्दी पर बैठने के तीन वर्ष के बाद ही मुसलमानों से युद्ध करते हुए पराजित होकर किसी अज्ञात स्थान में चले गये थे, जहाँ से वे पुनः नहीं लौटे—सम्भवतः वे उसी युद्ध में मारे गये हों। इतिहास से यह[1] सिद्ध है, और स्वयं सहायजी ने भी इसे स्वीकार किया है। इससे तो यही सिद्ध होता है कि कुल तेईस वर्ष की अवस्था तक ही विद्यापति और शिवसिंह की संगति रही।

विद्यापति के अधिकांश पदों में शिवसिंह का नाम है। क्या यह कभी सम्भव हो सकता है कि केवल तीन-चार वर्षों के अन्दर ही इतने पद लिखे गये हों? अनुमान की बात जाने दीजिये, इतिहास भी इसके विरुद्ध है।

सहायजी ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि विद्यापति बचपन में अपने पिता 'गणपति ठाकुर' के साथ राजा गणेश्वर के दरबार में आते-जाते थे। नेपाल-दरबार के पुस्तकालय में विद्यापति रचित 'कीर्त्तिलता' की पूरी पुस्तक महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्रीजी ने देखी थी और उसकी नकल भी उन्होंने करा ली थी। 'कीर्त्तिलता' में लिखा हुआ है कि २५२ लक्ष्मणाब्द में राजा गणेश्वर की मृत्यु हुई थी। अतः राजा गणेश्वर की मृत्यु के पहले तो विद्यापति का जन्म अवश्य हो गया होगा। वे ऐसी अवस्था के जरूर रहे होंगे कि दरबार में अपने पिता के साथ जा सकें। २९२ लक्ष्मणाब्द में यदि विद्यापति केवल २० वर्ष के थे, तो २५२ लक्ष्मणाब्द में वे राजा गणेश्वर के दरबार में कैसे आ-जा सकते थे? उस समय तो उनका जन्म भी न हुआ होगा

---

१. 'मिथिला दर्पण' के रचयिता ने देवसिंह के बाद शिवसिंह का ४६ वर्षों तक राज करने की बात लिखी है। किन्तु 'मिथिलादर्पण' का काल-निर्णय नितान्त अशुद्ध जान पड़ता है। यहाँ तक कि उसमें दी हुई राजाओं की वंशावली भी अशुद्ध है। —लेखक

बात यों है कि सहायजी को बाबू अयोध्याप्रसाद खत्री लिखित 'मिथिलाराज्य की वंशावली' ने धोखा दिया है। खत्रीजी के कथनानुसार शिवसिंह के पिता देवसिंह की मृत्यु १४४६ ईसवी में हुई थी, जो लक्ष्मणाब्द २४७ होता है।[१] सहायजी ने स्वयं इसका खंडन किया है; क्योंकि विद्यापति के कथनानुसार लक्ष्मणाब्द २९३ में देवसिंह की मृत्यु हुई थी। यों खत्रीजी ने सहायजी के गणनानुसार ४६ वर्ष की भूल की है।

किन्तु, एक जगह खत्रीजी के समय को गलत मानकर भी दूसरी जगह सहायजी ने प्रामाणिक मान लिया है। 'दुर्गाभक्ति-तरंगिणी' नामक पुस्तक विद्यापति ने राजा नरसिंहदेव के समय में लिखना शुरू किया था, और उनके बाद के राजा धीरसिंह के समय में समाप्त किया था। नरसिंहदेव का समय खत्रीजी ने १४७० ई० लिखा है। सहायजी ने इस समय को प्रामाणिक मान लिया है।

जब १४७० ई० के बाद तक विद्यापति के जीवित रहने की बात स्वीकार कर ली गई, तब उनके जन्म-संवत् को आगे बढ़ाना सहायजी के लिए जरूरी था। किन्तु, सोचना तो यह था कि जिस प्रकार देवसिंह की मृत्यु के विषय में खत्रीजी ने ४६ वर्ष की भूल की है, वही ४६ वर्ष की भूल यहाँ भी होगी। खत्रीजी की यह भूल भी इतिहास-सिद्ध है।

स्वयं सहायजी ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ २० में लिखा है कि नरसिंहदेव के पुत्र धीरसिंह के राजत्वकाल में 'सेतुबंध' नामक प्राकृत-ग्रंथ की 'सेतु दर्पणी' नामक टीका लिखी गई थी, जिसके अनुसार ३२१ लक्ष्मणाब्द में धीरसिंह सिंहासन पर विराजमान बतलाये गये हैं। ३२१ लक्ष्मणाब्द १४२८ ई० में पड़ता

---

१. लक्ष्मणाब्द और ईसवी सन् के तारतम्य में भिन्न-भिन्न ऐतिहासिकों के भिन्न-भिन्न मत हैं। सहायजी ने शिवसिंह के राज्यारोहण काल (२९३ल०स०) को १४०० ई० माना है, 'हिस्ट्री ऑफ तिरहुत' के रचयिता ने इसे १४१२ ई० लिखा है, और मेरे हिसाब से यह १४०२ ई० पड़ता है। —लेखक

है।[१] सोचने की बात है कि जब पुत्र १४२८ ई० में राजगद्दी पर बैठा था, तब उसका पिता १४२४ में कैसे राजा हुआ? बस, साफ प्रकट है कि खत्री जी ने यहाँ भी ४६ वर्ष की गलती की है।

१५२८ में ४६ घटा देने १३८२ ई० में नरसिंह का राजा होना सिद्ध होता है। नरसिंहदेव ने, सहायजी के ही कथनानुसार, एक ही वर्ष तक राज किया था। सम्भव है १४२५ ई० में वे मर गये हों और १४२८ ई० में उनके पुत्र धीरसिंह राजगद्दी पर विराजमान रहे हों। 'सेतुदर्पणी' से भी यही पता चलता है।

इसी ४६ वर्ष के फेर में पड़कर जहाँ सहायजी ने केवल २० वर्ष की अवस्था में शिवसिंह और विद्यापति की भेंट कराकर तीन ही वर्षों में उनका चिरवियोग कराया, वहाँ विद्यापति की शताधिक वर्ष की अवस्था का भी भ्रम उन्हें हो गया था—जिसका औचित्य प्रमाणित करने के लिए आपने जमीन-आसमान का कुलावा मिलाया है, निजी और सार्वजनिक सब प्रमाणों को पेश किया है।

सहायजी को एक और तिथि ने भी धोखा दिया है। आपने पृष्ठ २३ में लिखा है कि ३४६ लक्ष्मणाब्द में इनके हाथ से भागवत-पोथी की नकल करना सिद्ध होता है। यह गलत है। नगेन्द्रनाथ गुप्त ने मैथिल कविवर 'चंदा झा' के साथ स्वयं 'तरौनी' जाकर उस पुस्तक को देखा। उस पुस्तक के अंत में लिखा है—"शुभमस्तु सर्वार्थगता ल० सं० ३०६ श्रावण शुदि १५ कुजे रजाबनौली ग्रामे श्रीविद्यापतिर्लिपिरियमिति।" इस ३०६ को ही सहायजी ने भ्रमवश ३४६ मान लिया है।

अब यथार्थ बात सुनिये। वह इतिहास और जनश्रुति दोनों पर अवलम्बित है, और आपको युक्तियुक्त भी मालूम पड़ेगी।

एशियाटिक सोसाइटी में एक प्राचीन हस्तलिखित पोथी है, जो १३२२ शकाब्द (=२६० लक्ष्मणाब्द) की लिखी हुई है। वह पोथी शिवसिंह की

---

१. सहायजी की गणना के अनुसार। —लेखक

राजधानी 'गजरथपुर' में विद्यापति की प्रेरणा से लिखी गई थी। दो ब्राह्मणों ने उसे लिखा था। उसमें विद्यापति को 'सप्रक्रिय सदुपाध्याय ठक्कुर श्री विद्यापति' लिखा है, और शिवसिंह का नाम 'महाराज' की उपाधि से युक्त है।

इससे दो बातों का पता चलता है। एक यह कि शिवसिंह अपने पिता के जीवनकाल में ही 'महाराज' कहलाते थे। (मालूम होता है, वृद्ध पिता ने अपना शासन-भार पुत्र को ही सौंप दिया था और जनता शिवसिंह को ही अपना अधिपति मानती थी।) दूसरी बात यह प्रकट होती है कि शिवसिंह के सिंहासनारोहण के पहले से ही विद्यापति दरबार में रहते थे। देवसिंह के नाम से विद्यापति ने कुछ पद भी बनाये हैं।

हाँ, तो यह सिद्ध है कि पिता की मृत्यु के पहले से ही शिवसिंह राज्य-शासन करते थे। मिथिला में यह जनश्रुति है कि शिवसिंह पचास वर्ष की अवस्था में राजगद्दी पर बैठे और विद्यापति उनसे दो वर्ष बड़े थे। अतः शिवसिंह के राज्यारोहण के समय विद्यापति की अवस्था ५२ वर्ष की थी।

यदि यह जनश्रुति तथ्यपूर्ण मान ली जाय, तो प्रायः हम सत्य के निकट पहुँच सकेंगे; क्योंकि विद्यापति को उपर्युक्त ताम्रपत्र में, 'अभिनव जयदेव' लिखा है। उस समय तक विद्यापति की कीर्त्ति चारों ओर फैल गई रही होगी। इनकी कविता के माधुर्य पर मुग्ध होकर लोग इन्हें 'अभिनव जयदेव' कहने लगे थे। इनकी कविता राजा के अन्तःपुर से लेकर गरीबों की झोपड़ियों तक गूँज रही थी। राजसिंहासन पर बैठने के समय शिवसिंह अपने प्यारे सहचर विद्यापति को कैसे भूल सकते थे? जिसकी कवितासुधा का पान कर वे मस्त बने थे, जिसकी कविता उन्हें और उनकी सहधर्मिणी 'लखिमा' को अमर कर चुकी थी, उसे वे कैसे कुछ पुरस्कार न देते? अतः राजगद्दी पर बैठने के कुछ ही दिनों के बाद उन्होंने विद्यापति को 'बिसपी' गाँव प्रदान किया।

'बिसपी' गाँव २९३ लक्ष्मणाब्द में विद्यापति को दिया गया था। उस समय उनकी अवस्था लगभग ५२ वर्ष की होगी। अतः उनका जन्म २४१

लक्ष्मणाब्द में, या संवत् १४०७ विक्रमीय (=सन् १३५० ई०) में, होना सम्भव है।

इस कथन की पुष्टि पूर्वोक्त राजा गणेश्वर सिंह के दरबार में विद्यापति के आने-जानेवाली बात से भी होती है। 'कीर्त्तिलता' के अनुसार राजा गणेश्वर २५२ लक्ष्मणाब्द में परलोकवासी हुए थे। उस समय विद्यापति १०-११ वर्ष के रहे होंगे। तभी तो इनके पिता इन्हें राज-दरबार में ले जाते थे।

वंश-विवरण

विद्यापति मैथिल ब्राह्मण थे। इनका मूल 'विसइबार' और आस्पद 'ठाकुर' था।

मैथिलों में पंजी-प्रथा का प्रचलन है। जितने मैथिल ब्राह्मण और कर्ण कायस्थ हैं, सभी के नाम, पुश्त-दर-पुश्त, एक पोथी मे लिखे हुए हैं। इस पोथी को पंजी कहते हैं।

पंजी से पता चलता है कि 'गढ़बिसपी' में कर्मादित्य त्रिपाठी नामक ब्राह्मण रहते थे। ये राजमंत्री थे। ये विद्यापति के वंश के आदिपुरुष 'विष्णुशर्मा ठाकुर' के पोते थे।

कर्मादित्य के बाद इनके वंश में जितने महापुरुषों ने जन्म लिया, सभी तत्कालीन मिथिला के राजदरबार में उच्चपदों पर काम करते रहे—कोई राजमंत्री थे, कोई राजपंडित—किसी को 'महामहत्तक' की उपाधि प्राप्त हुई थी, तो किसी को 'सन्धि-विग्राहिक' की।

इनका वंश अपनी विद्वत्ता और बुद्धिमत्ता के कारण उस समय मिथिला में बेजोड़ था। इनके वंश में कितने ही लेखक और कवि भी हो गये हैं।

कर्मादित्य के पोते वीरेश्वर ठाकुर ने, जो नान्य-वंशी राजा शक्रसिंह एवं उनके पुत्र 'हरिसिंहदेव'[२] के राजमंत्री भी थे, 'छान्दोग्य-दशकर्मपद्धति' की

२. हरिसिंहदेव शिवसिंह से बहुत पहले प्रसिद्ध 'सिमराँव गढ़' के अधिपति थे। उन्होंने नेपाल को जीता था। —लेखक

रचना की थी। अभी तक इसी पुस्तक के अनुसार बिहार में दशकर्म किये जाते हैं।

वीरेश्वर के सोदर भाई धीरेश्वर, जो विद्यापति के निज प्रपितामह थे, 'महावार्त्तिकनैबन्धिक' नाम से प्रख्यात थे। वीरेश्वर के पुत्र चण्डेश्वर ने 'कृत्य-चिन्तामणि', 'विवादरत्नाकर', 'राजनीति-रत्नाकर' आदि सप्तरत्नाकरों की रचना की थी। 'राजनीति-रत्नाकर' एक अत्यन्त बहुमूल्य ग्रन्थ है। प्राचीन भारतीय राजनीति पर इससे बहुत-कुछ प्रकाश पड़ता है। ये उपर्युक्त हरिसिंहदेव के मंत्री एवं महामहत्तक सन्धि-विग्राहिक थे।

विद्यापति के पिता पण्डित गणपति ठाकुर भी राजमंत्री थे। वे एक अच्छे कवि थे। उन्होंने 'गंगाभक्ति-तरंगिणी' नाम की एक पुस्तक की रचना की थी।

यों देखा जाता है कि विद्यापति का वंश सरस्वती का अपूर्व कृपापात्र रहा है। जिस प्रकार इनके पूर्वजों ने राज्यकर्म में अपनी अपूर्व चातुरी दिखलाई थी, उसी प्रकार सरस्वती-सेवा में भी वे लोग पीछे नहीं रहे हैं। ऐसे प्रतिभावान् कुल में उत्पन्न होकर विद्यापति ने जो कुछ काव्यकुशलता दिखलाई है, वह स्वाभाविक ही है।

प्रारम्भिक जीवन

विद्यापति के पिता गणपति ठाकुर राजा गणेश्वर के सभापण्डित थे। इनकी माता का नाम था 'हाँसिनी देवी'।

वह पिता धन्य है, जिसे ऐसा पुत्ररत्न प्राप्त हुआ था। वह माता भी धन्या है, जिसने ऐसे पुत्ररत्न को अपने गर्भ में धारण किया था। बिसपी गाँव का प्रत्येक कण पुण्यमय और धन्य है, जहाँ ऐसे कविकोकिल ने अपना जीवन व्यतीत किया था।

कहा जाता है, गणपति ठाकुर ने कपिलेश्वर महादेव की आराधना करके विद्यापति-सा पुत्ररत्न प्राप्त किया था।

विद्यापति ने सुप्रसिद्ध विद्वान् हरिमिश्र से विद्याध्ययन किया था और उनके भतीजे सुविख्यात पक्षधर मिश्र इनके सहपाठी थे। विद्यापति अपने पिता के साथ राजा गणेश्वर के दरबार में बचपन से ही आया-जाया करते थे।

गणेश्वर के बाद कीर्त्तिसिंह राजा हुए। विद्यापति उनके दरबार में आने-जाने लगे। प्रारम्भ से ही इनमें प्रतिभा की झलक दीख पड़ती थी। कीर्त्तिसिंह के दरबार में मालूम होता है, ये कुछ अधिक काल तक रहे होंगे। क्योंकि कीर्त्तिसिंह के नाम पर ही इन्होंने अपना पहला ग्रन्थ 'कीर्त्तिलता' रचा था। यह पूरा ग्रन्थ नेपाल के राज-पुस्तकालय में है। मिथिला में इस ग्रन्थ का केवल फुटकर अंश मिलता है।

'कीर्त्तिलता' कवि की तरुण वयस की रचना है। इसकी भाषा संस्कृत-प्राकृत-मिश्रित मैथिली है। कवि ने इस भाषा का नामकरण 'अवहट्ठ' भाषा किया है। 'कीर्त्तिलता' के प्रथम पल्लव में कवि ने स्वयं कहा है—

देसिल बअना सब जन मिट्ठा।
ते तैसन जम्पओ अवहट्ठा॥

'देशी भाषा सबको मीठी लगती है, यही जानकर मैंने अवहट्ठ-भाषा में इसकी रचना की है।'

किन्तु इस पुस्तक की रचना के समय, मालूम होता है, कवि अपनी काव्य-कुशलता के लिए बहुत प्रसिद्ध हो गये थे। इनकी भाषा पर सभी मुग्ध थे। इनका प्रतिद्वन्द्वी उस अवस्था में कोई नही था। वे अभिमान के साथ इस पुस्तक के प्रथम पल्लव में लिखते हैं—

बालचन्द बिज्जावई भाषा। दुहु नहि लग्गइ दुज्जन हासा॥
ओ परमेसर हर-सिर सोहइ। इ निच्चय नाअर मन मोहइ॥

"बाल-चन्द्रमा और विद्यापति की भाषा—इन दोनों पर दुष्टों की हँसी लग नहीं सकती। वह (बालचन्द्रमा) देवता के रूप में शिव के सिर पर सोहता है

और यह (विद्यापति की भाषा) निश्चय-पूर्वक नागरों का—सुचतुर भाषा-पंडितों का—मनमोहती है।"

इस पद के एक-एक शब्द से कवि का अभिमान टपकता है। 'जयदेव' के समान इन्हें भी अपनी भाषा पर नाज था। बात भी ठीक है। हम दावे के साथ कह सकते हैं कि भाषा की मिठास और कोमलता की दृष्टि से तो इनका कोई भी प्रतिद्वन्द्वी हिन्दी-साहित्य में नहीं है।

कीर्त्तिसिंह के बाद शिवसिंह के पिता देवसिंह राजा हुए। देवसिंह के समय में राज्यशासन का भार शिवसिंह के ही कंधों पर था। उसी अवसर पर विद्यापति और शिवसिंह में घनिष्ठता हुई। तब से विद्यापति शिवसिंह के अन्तिम समय तक उन्हीं के पास रहे।

संस्कृत-रचनाएँ

इसमें सन्देह नहीं कि संस्कृत-साहित्य का विद्यापति ने पूरी तरह से अनुशीलन किया था। इसका प्रमाण इनकी लिखी हुई संस्कृत की अनेकानेक पोथियाँ हैं।

प्रथम रचना उपर्युक्त 'कीर्त्तिलता' है।

दूसरी पोथी 'भू-परिक्रमा' है। यह राजा देवसिंह की आज्ञा से लिखी गई थी। इसमें नैतिक शिक्षा से भरी कहानियाँ हैं। इसी का बृहद् रूप 'पुरुष-परीक्षा' है।

तीसरी पोथी है—'पुरुष-परीक्षा'।[1] मालूम होता है, यह उस समय की रचना है जब इनके मस्तिष्क का पूरा विकास हो चुका था। यह राजा शिवसिंह की आज्ञा से, उन्हीं के राजत्वकाल में लिखी गई थी। इसमें ललित कथाओं के रूप में

---

१. 'पुरुष परीक्षा' का शुद्ध हिन्दी-अनुवाद 'पुस्तक-भंडार' द्वारा प्रकशित हुआ था।—प्रकाशक

धार्मिक एवं राजनीतिक विषयों का वर्णन है। इसमें भी कवि ने शृंगार रस के परदे में राजनीति और धर्म की शिक्षा दी है। इस पुस्तक का बहुत मान है। १८३० ईसवी में इसका अँगरेजी में अनुवाद हुआ था। यह अनुवाद, 'लार्ड विशप टर्नर' के परामर्श से, राजा कालीकृष्ण बहादुर ने किया था। 'फोर्ट विलियम कॉलेज' में पहले यह पाठ्यपुस्तक की तरह पढ़ाई जाती थी। उक्त कॉलेज के बङ्गभाषा के अध्यापक हरप्रसाद राय ने १८१५ ई० में इसका भावानुवाद किया था।

चौथी पुस्तक 'कीर्त्तिपताका' है। इसमें मैथिली भाषा में लिखी गई प्रेम-सम्बन्धी कविताएँ हैं।

पाँचवीं 'लिखनावली' है जिसमें संस्कृत में पत्रव्यवहार करने की रीति वर्णित है। यह रजाबनौली के अधिपति 'पुरादित्य' के लिए, २९९ लक्ष्मणाब्द में लिखी गई थी। इसी रजाबनौली में विद्यापति ने ३०९ लक्ष्मणाब्द में अपने हाथ से 'भागवत' लिखकर समाप्त की थी।

छठी पुस्तक 'शैव सर्वस्व-सार' है। यह शिवसिंह की मृत्यु के बहुत दिनों के बाद, रानी विश्वासदेवी के समय में लिखी गई थी। इसमें भवसिंह से लेकर विश्वासदेवी तक के समय के राजाओं की कीर्त्ति-कथा है एवं शिवपूजा की विधि लिखी हुई है।

सातवीं पुस्तक 'गंगा वाक्यावली' है, जो विश्वासदेवी के ही लिए लिखी गई थी।

आठवीं पुस्तक है—'दान-वाक्यावली'। यह राजा नरसिंहदेव की स्त्री 'धीरमती' को समर्पित की गई है।

नवीं पुस्तक 'दुर्गाभक्ति-तरंगिणी' दुर्गापूजा के प्रमाण और प्रयोग पर लिखी गई है। इसका निर्माण नरसिंहदेव के कहने से हुआ था। धीरसिंह के समय में यह पूरी हुई थी। इसमें धीरसिंह के भाई भैरवसिंह और चन्द्रसिंह के भी नाम आये हैं।

इनके अतिरिक्त विभाग-सार (स्मृतिग्रंथ), वर्षकृत्य और गया-पत्तलक नामक संस्कृत-पुस्तकें भी इन्हीं की हैं।

अबतक मिथिला में खोज का काम कुछ नहीं हुआ है। सम्भव है, इनकी लिखी और भी संस्कृत-पुस्तकें हों, जो अभी तक छिपी पड़ी होंगी : क्योंकि ये दीर्घजीवी पुरुष थे। किन्तु, केवल उपर्युक्त पुस्तकों को देखने मात्र से ही इनके प्रगाढ़ पाण्डित्य का परिचय मिल जाता है।

हिन्दी के लिए यह नितान्त गौरव की बात है कि उसका एक प्रथम श्रेणी का कवि संस्कृत-साहित्य में भी अपना खास स्थान रखता है।

उपाधियाँ

हिन्दी में आजकल प्रत्येक कवि अपना एक-एक उपनाम रखता है। किन्तु, प्राचीन हिन्दी-कवियों में भी उपनाम देखे जाते हैं। हाँ, आजकल के उपनाम और प्राचीन समय के उपनाम में एक गहरा भेद है। कोई राजा या प्रसिद्ध व्यक्ति, कवि की काव्य-कुशलता देखकर उसीके अनुसार उपाधि प्रदान करता था। वही उपाधि कवि का उपनाम होता था। प्राचीन हिन्दी-कवियों में 'बिहारी', 'भूषण' आदि जो उपनाम देखे जाते हैं, वे सब राज-प्रदत्त उपाधियाँ हैं।

विद्यापति को भी कई उपाधियाँ प्राप्त थी। 'अभिनव जयदेव' की उपाधि तो सर्वप्रसिद्ध है। 'बिसपी' गाँव का जो ताम्रपत्र है, उसमें भी विद्यापति 'अभिनव जयदेव' कहे गये हैं। मालूम होता है, यह उपाधि स्वयं शिवसिंह ने दी थी। विद्यापति इस उपाधि के सर्वथा योग्य भी थे।

जिस प्रकार संस्कृत-साहित्य में, मधुर शृंगार वर्णन में जयदेव का जोड़ नहीं है, उसी प्रकार इस विषय में विद्यापति भी भाषा-साहित्य में अपना जोड़ नहीं रखते। उक्त उपनाम से इन्होंने कुछ कविताएँ भी की हैं।

एक पद यों है—

सुकवि नवजयदेव भनिम्र रे।
देवसिंह नरेन्द्रनन्दन।
सेतु नरवइ कुलनिकन्दन।
सिंह सम सिवसिंह राया।
सकल गुनक निधान गनिम्र रे।

इनकी दूसरी उपाधि 'कविशेखर' है। इस नाम से भी इनकी बहुत-सी रचनाएँ हैं। न मालूम, यह उपाधि किसने दी थी। 'बिसपी' ग्राम के दानपत्र में यह उपाधि नहीं है।

कविकंठहार और कविरंजन—इन दो नामों से भी इनकी अधिक कविताएँ हैं।

दशावधान और पंचानन की उपाधियाँ भी इनकी कही जाती हैं।

कुछ कविताएँ चम्पति या विद्यापति चम्पई नाम से भी हैं।

'दशावधान' नाम से कुछ कविताएँ भी हैं। यह उपाधि, कहा जाता है, दिल्लीश्वर ने दी थी।

धर्म-सम्प्रदाय

इनकी कविताएँ विशेषतः राधाकृष्ण-विषयक हैं। अतः लोगों की धारणा है कि ये वैष्णव रहे होंगे। बंगाल में भी पहले यही धारणा थी। बाबू व्रजनन्दन सहाय ने अपने समर्पणपत्र में इन्हें 'वैष्णव कवि-चूड़ामणि' लिखा है। किन्तु जनश्रुति और प्रमाण इसके विरुद्ध हैं।

बात यों है कि ये शृंगारिक कवि थे। शृंगार के आराध्यदेव श्रीकृष्णजी ठहरे। अतः शृंगारिक वर्णन में राधाकृष्ण के रास-विलास का ही सहारा लिया जाता है। सभी भारतीय शृंगारिक कवियों ने इसी युगलमूर्त्ति को लक्ष्य कर शृंगारिक रचनाएँ की हैं।

किन्तु, इसीसे किसी कवि को वैष्णव मान लेना ठीक नहीं। इनके पिता शैव थे। शिव की उपासना के बाद ही उन्होंने यह पुत्ररत्न प्राप्त किया था।

ऐसी अवस्था में इनका शैव होना बहुत सम्भव है। जनश्रुति भी ऐसी ही है। यही नहीं, इनका एक पद यों है—

आन चान गन हरि कमलासन
सब परिहरि हम देवा।
भक्त-बछल प्रभु बान महेसर
जानि कएलि तुअ सेवा।।

"कोई चन्द्र की पूजा करते हैं, कोई विष्णु की पूजा करते हैं, किन्तु मैंने सबको छोड़ दिया। हे बाण-महेश्वर, भक्तवत्सल जानकर मैंने तुम्हारी ही सेवा की।"

ये बाण-महेश्वर कौन हैं? 'बिसपी' से उत्तर 'भेड़वा' नामक एक गाँव में आज भी बाणेश्वर-महादेव है। कहते हैं कि ये इसी महादेव की उपासना करते थे।

यही नहीं, इनके बनाये हुए अनेकानेक शिवगीत या नचारियाँ हैं, जो मिथिला में इनकी पदावली से भी अधिक प्रसिद्ध हैं। मिथिला में इनकी पदावली तो विशेषतः स्त्रियों में प्रचलित है। अधिकतर स्त्रियाँ ही इनके पद गाती हैं। पुरुषों में तो नचारियाँ ही प्रसिद्ध हैं। तीर्थस्थानों को जाती हुई झुंड-की-झुंड कोकिलकंठी रमणियाँ जिस प्रकार इनके मधुर पद गाती झूमती जाती हैं, उसी प्रकार तीर्थयात्री पुरुष के झुंड बड़े प्रेम से नचारियाँ गाते हैं।

कहते हैं, स्वयं महादेव इनकी भक्ति पर मुग्ध थे।

एक दिन एक अपरिचित आदमी इनके निकट आया, और इनकी नौकरी करने की अनुमति माँगी। इन्होंने उसे रख लिया। उसका नाम 'उगना' था—कोई-कोई 'उदना' भी कहते हैं। 'उगना' के रूप में स्वयं महादेवजी थे।

'उगना' इनके यहाँ रहने लगा। वह सदा इनकी सेवा में लीन रहता। एक दिन उसके साथ ये कहीं जा रहे थे। रास्ते में इन्हें प्यास लगी।

उससे कहा । वह चल पड़ा । थोड़ी ही देर में वह एक लोटा पानी लेकर लौटा । ये उसे पीने लगे ।

किन्तु, पीने पर इन्हें मालूम हुआ कि यह पानी गंगा का है । पूछा—"उगना, यह पानी कहाँ से लाया ?"

उगना ने कहा—"निकट के ही कुएँ से !"

इन्होंने कहा—"यह जल कुएँ का हो नही सकता, यह तो गंगाजल है ।"

बहुत कहने-सुनने पर भी जब इनको सन्तोष न हुआ, तब 'उगना' ने अपना यथार्थ रूप प्रकट किया । स्वय महादेव 'उगना' के रूप में थे । यह पानी उन्हीं की जटा का था ।

उस जगह, निकट मे कोई कुआँ या तालाब न पाकर महादेव ने अपनी जटा से पानी लेकर इन्हें दिया था । महादेव ने कहा—"देखो, तुम मेरे पूर्ण भक्त हो । मै तुमसे अलग नही रहना चाहता । किन्तु, प्रतिज्ञा करो कि तुम कभी यह बात किसीसे न कहोगे । खबरदार, जिस दिन यह बात प्रकट करोगे, उसी दिन मै अन्तर्धान हो जाऊंगा ।"

'उगना' इनके पास रहने लगा । किन्तु, ये अब उसे कभी कोई नीच काम करने को न कहते । एक दिन इनकी स्त्री ने उससे कुछ लाने के लिए कहा । उसके लाने मे देर हुई । ब्राह्मणी बिगड़ पड़ीं । ज्योंही वह निकट आया, एक चैला लेकर टूट पड़ी । यह देखकर वे चिल्ला उठे—"हा-हा ! यह क्या कर रही हो ? साक्षात् शिव पर प्रहार ! !"

उसी क्षण 'उगना' अन्तर्धान हो गया । विद्यापति पागल होकर गाने लगे—

उगना रे मोर कतए गेलाह ।
कतए गेला सिव कीदहु भेलाह ।।
भाँग नहिं बटुआ रुसि बैसलाह ।
जोहि हेरि आनि देल हँसि उठलाह ।।

जे मोर कहता उगना उदेस।
ताहि देवओं कर कँगना बेस ।।

नन्दन-बन में भेटल महेस।
गौरि मन हरखित मेटल कलेस ।।

विद्यापति भन उगना सों काज।
नहि हितकर मोर त्रिभुवन राज ।।

इस तरह के कई पद हैं।

यद्यपि इस नास्तिकवाद के वैज्ञानिक युग में इस कथा पर लोगों का विश्वास न जमेगा। किन्तु, ऐसी घटनाओं से प्राचीन भारतीय इतिहास भरा पड़ा है। इन सब बातों से यही सिद्ध होता है कि ये वैष्णव नहीं, शैव थे। हाँ, यह बात निस्सन्देह सत्य है कि ये आज-कल के शैवों की तरह विष्णुद्रोही नहीं थे। ये शिव और विष्णु को एक ही रूप की दो कलाएँ मानते थे। इनका यह पद्य है---

भल हरि भल हर भल तुअ कला।
खन पितबसन खनहि बघछला ।।---इत्यादि।

साथ-ही-साथ, देवियों---खासकर 'दुर्गा'---की स्तुति जो इन्होंने की है, उससे इनके शाक्त होने के विषय में जरा भी सन्देह नहीं हो सकता। इनकी आलोचना करने पर ऐसा ही विश्वास दृढ़ होता है कि आधुनिक मैथिलों की तरह ये शिव, विष्णु तथा चण्डी---तीनो को मानते थे; पर किसी एक विशष सम्प्रदाय के अनुयायी नहीं थे।

यदि आप आज मैथिलों के सिर का चन्दन देखेंगे तो बात स्पष्ट हो जायगी। वे एक ही साथ भस्मत्रिपुण्ड्र भी धारण करते हैं, श्रीखण्ड-चन्दन भी और सिंदूर-विन्दु भी। उपर्युक्त तीनो देवताओं की ये तीनो निशानियाँ हैं। वे तीनो को समान आदर की दृष्टि से देखते हैं, पर किसी एक सम्प्रदाय के नहीं हैं।

आश्रयदाता शिवसिंह

इनके प्रधान आश्रयदाता राजा शिवसिंह थे। उन्हीं की छत्रच्छाया में रहकर इन्होंने अपने अधिकांश पदों की रचना की थी। जिस प्रकार शिवसिंह ने प्रचुर सम्पत्ति देकर इन्हें सांसारिक झंझटों से मुक्त कर दिया था, उसी प्रकार बदले में इन्होंने उनका और धर्मपत्नी 'लखिमा देवी' का नाम अपने पदों में देकर उन्हें अजर-अमर बना दिया है। शिवसिंह का भौतिक दान तो थोड़े ही दिनों में बिलीन हो गया, किन्तु, इन्होंने जो उन्हें यश का दान दिया वह अनन्त काल तक संसार में विद्यमान रहेगा।

ये शिवसिंह कौन थे ?

मिथिला के नवीन युग के शासकों में 'सिमराँव' और 'सुगाँव' के राजघराने अधिक प्रसिद्ध हैं। राजा शिवसिंह 'सुगाँव'—राजघराने में हुए थे। 'सुगाँव'—राजघराने के पहले 'सिमराँव'–राजघराने के लोग शासन करते थे। उनकी 'राजधानी' 'सिमराँव गढ़' में थी–जो वर्त्तमान चम्पारण जिले में है।

सिमराँव के राजा क्षत्रिय थे। इस राज्य के संस्थापक नान्यदेव थे। इसी राजकुल में सुप्रसिद्ध हरिसिंहदेव हुए थे; जिन्होंने नेपाल-विजय की थी। हरिसिंहदेव के मंत्री विद्यापति के पूर्वज चंडेश्वर थे और उनके राजपंडित कालेश्वर ठाकुर।

कहा जाता है कि एक समय हरिसिंहदेव ने एक वृहद्-यज्ञानुष्ठान किया था। किन्तु, अन्य राजाओं द्वारा यज्ञ भ्रष्ट कर दिया गया, जिससे विरक्त होकर वे जंगल चले गये।

इसी समय सुअवसर पाकर दिल्ली के बादशाह ने मिथिला पर चढ़ाई की। मिथिला में उस समय अराजकता फैल रही थी। दिल्लीश्वर का चिर मनोरथ पूरा हुआ—मिथिला का शासन-सूत्र मुसलमानों के हाथ आया।

इस अवसर पर राजपंडित कामेश्वर ठाकुर ने बादशाह से[१] भेंट की। बादशाह उनके गुण से अत्यन्त संतुष्ट हुए—उनके अस्वीकार करने पर भी उन्हीं को मिथिला-प्रदेश का शासक नियुक्त किया। तभी से मिथिला का शासन ब्राह्मणों के हाथ आया।

कामेश्वर ठाकुर 'ओयनवार' ब्राह्मण थे। उनके पूर्वपुरुष पं० ओयन ठाकुर ने किसी राजा से—सम्भवत: नान्यदेव से—'ओयनी' नामक गाँव उपहार में पाया था! 'ओयनी' (वैनी) गाँव दरभंगा जिले में पूसा-रोड-स्टेशन के निकट है। 'ओयनी' गाँव में बसने के कारण इस वंश को 'ओयनवार वंश' कहते हैं।

ओयनवार-वंश के सबसे प्रथम राजा यही कामेश्वर ठाकुर हुए। उनके बाद उनके पुत्र भोगेश्वर, और भोगेश्वर के बाद उनके पुत्र गणेश्वर राजा हुए। गणेश्वर के दो बेटे थे—वीरसिंहदेव और कीर्त्तिसिंह। इन्हीं कीर्त्तिसिंह के दरबार में विद्यापति ने कीर्त्तिलता का निर्माण किया था। कीर्त्तिसिंह और उनके भाई वीरसिंह निःसन्तान मरे, तब भोगेश्वर के भाई भवसिंह के बेटे देवसिंह राजा हुए।

राजा शिवसिंह महाराज देवसिंह के पुत्र थे। उनकी राजधानी 'गजरथपुर' नामक नगर में बागमती नदी के किनारे थी।

यह गजरथपुर कहाँ है? दरभंगे से ४–५ मील पूर्व-दक्षिण कोने पर 'सिवईसिंह' नामक एक गाँव है। लोगों का कहना है, उसका दूसरा नाम गजरथपुर था। वहाँ जाकर पता लगाने पर एक वृद्ध ब्राह्मण से मालूम हुआ कि यहीं शिवसिंह की राजधानी थी—इधर भी उस गढ़ को खोदने से कभी-कभी सोना-चाँदी द्रव्य मिलते थे। किन्तु, अब गढ़ का कहीं पता नहीं है। जहाँ पहले गढ़ था, वहाँ अब खेत लहरा रहे हैं।

---

१. उस समय तुगलक-वंशी पठान-सम्राट् गयासुद्दीन का राज्यकाल था।
—लेखक

शिवसिंह के प्रति विद्यापति की इतनी अनुरक्ति देखकर, मालूम होता है, वे बड़े ही रसिक और काव्यमर्मज्ञ पुरुष[१] थे। विद्यापति के पदों में उनके नाम के साथ-साथ उनकी प्राणप्रिया महारानी लखिमा देवी का भी नाम है। इस प्रकार रानी का नाम पदों में देने से लोगों ने उल्टा-सीधा बहुत कुछ अनुमान किया है। किन्तु यथार्थ बात तो यों है कि विद्यापति ने जहाँ-कहीं किसी राजा का नाम दिया है, वहाँ साथ-ही-साथ साधारणतया उसकी रानी का भी नाम दिया है।

शिवसिंह और लखिमा देवी का नाम पदों में होने के विषय में मिथिला में यह प्रवाद है कि विद्यापति जिन पदों की रचना करते थे, वे सब राजा के अन्त:पुर में गाये जाते थे। राजा-रानी दोनो अन्त:पुर में एकत्र बैठते, उनके चारों ओर स्त्रियाँ आ बैठती। उस समय 'केटी' (चेरी) नाम की गायिकाओं की श्रेणी राजा और रानी की भणिता से युक्त विद्यापति के पद गाने लगतीं।

'केटी' स्त्रियाँ गान-विद्या में निपुणा होती थीं। वे महल में इसी काम के लिए नियुक्त की जाती थीं।

इनके पदों में लखिमा के अतिरिक्त शिवसिंह की अन्य रानियों के भी नाम आये हैं। सम्भवत: लखिमा देवी पटरानी रही हों, या उन्हीं पर राजा की सबसे अधिक आसक्ति रही हो।

शिवसिंह जिस प्रकार कलाविद् थे, उसी प्रकार वीर योद्धा भी थे। उनको यह बात बहुत अखरती रही कि यवनों के वे अधीन हैं। पिता के जीवन में ही एक बार उन्होंने दिल्ली 'कर' भेजना बन्द कर दिया, जिसपर मुसलमानी

१. विद्यापति के ही समान अन्य कितने कवि भी शिवसिंह के दरबार में थे। कहते हैं कि उन्ही में से एक उमापति थे, जो 'पारिजात हरण' और 'रुक्मिणी—परिणय' नामक भाषा नाटकों के रचयिता कहे जाते हैं। लोग पहले इन दोनों नाटकों के रचयिता विद्यापति को ही मानते थे। —लेखक

फौज मिथिला आई। दैव-दुर्विपाक से शिवसिंह कैद करके दिल्ली ले आये गये। देवसिंह ने अधीनता स्वीकार कर अपना राज्य तो प्राप्त कर लिया; किन्तु पुत्र-शोक से पीड़ित रहने लगे।

इधर विद्यापति को भी शिवसिंह के बिना चैन कहाँ? लखिमा की दशा का क्या पूछना? तब ये अपनी जान पर खेलकर शिवसिंह का उद्धार करने पर तुल गये। दिल्ली पहुँचे। वहाँ जाकर अपना परिचय दिया। सुलतान ने हुक्म दिया—अगर शायर हो, तो कुछ करामात दिखाओ। इन्होंने कहा कि मैं अदृश्य का दृश्यवत् वर्णन कर सकता हूँ। सुलतान ने एक सद्यःस्नाता सुन्दरी का वर्णन करने को कहा। ये गाने लगे—

कामिनि करए सनाने।
हेरितहि हृदय हनए पँचबाने।।—आदि

सुलतान को इससे भी सन्तुष्टि न हुई। विद्यापति एक काठ के सन्दूक में बन्द किये गये और वह सन्दूक कुएँ में लटका दिया गया। ऊपर एक सुन्दरी स्त्री आग फूंकती हुई खड़ी की गई। तब इनसे कहा गया कि ऊपर जो कुछ है उसका वर्णन करो। ये सन्दूक के अन्दर से गाने लगे—

सजनि निहुरि फुकु आगि।
तोहर कमल भमर मोर देखल
मदन ऊठल जागि।।
जो तोंहे भामिनि भवन जएबह
एबह कोनह बेला।
जौं एहि संकट सौं जिव बाँचत
होयत लोचन मेला।।

इसपर सुलतान अत्यन्त प्रसन्न हुआ। राजा शिवसिंह छोड़ दिये गये। तब इन्होंने निम्नलिखित पद कहा—

भन विद्यापति चाहथि जे विधि
करथि से से लीला ।
राजा सिवसिंह बंधन मोचन
तखन सुकवि जीला ।।

राजा शिवसिंह की दानशीलता की कहानियाँ अभी तक मिथिला में प्रचलित हैं। उन्होंने अपने पिता का तुलादान कराया था। कितने ही तालाब खुदवाये थे। प्राचीन कमला नदी के किनारे 'नेहरा' नामक गाँव में 'घोड़दौर' नामक एक तालाब खुदवाया था। कहते हैं, उन्होंने वहाँ अपना निवास-स्थान भी बनवाया था। उसका भग्नावशेष अभी तक पाया जाता है। मधुबनी (दरभंगा) से दक्षिण 'पतौल' नामक गाँव में उनका खुदवाया हुआ एक तालाब है, जिसके विषय में यह कहावत प्रसिद्ध है—

पोखरि रजोखरि और सब पोखरा ।
राजा सिवसिंह और सब छोकरा ।।

वे बहुत दिनों तक युवराज के रूप में कार्य करते रहे, किन्तु प्रजा उन्हें ही अपना राजा समझती थी। देवसिंह तो नाम-मात्र के राजा थे। युवराजावस्था में ही शिवसिंह 'महाराज' कहे जाते थे।

ल० सं० २९३ में देवसिंह की मृत्यु हुई। ठीक उसी समय दिल्लीश्वर ने भी मिथिला पर चढ़ाई कर दी। दिल्लीश्वर के साथ बंगाल के नवाब भी थे। शिवसिंह के लिए बड़े संकट का समय था! एक ओर पिता का श्राद्धादि-कर्म, दूसरी ओर युद्ध का आयोजन।

विद्यापति ने प्राकृत मिश्रित एक पद में शिवसिंह की इस विजय की चर्चा यों की है—

अनल रंध्र कर लक्खन नरवइ, सक समुद्द कर अगिन ससी ।
चैत कारि छठि जेठा मिलिओ, बार बेहप्पय जाहु लसी ।।

देवसिंह जू पुहुमि छड्डिअ्रा अद्धासन सुरराअ सरू ।
दुहु सुरतान नीदे अब सोअओो तपन हीन जग तिमिर भरू ।।
देखहु ओ पृथ्वी के राजा, पौरुस माझ पुन्न बलिओ ।
सत बले गंगा मिलिअ कलेवर, देवसिंह सुरपुर चलिओ ।।
एकदिस सकल जवन बल चलिओ, ओकादिस से जमराएचरू ।
दूओओ दलटि मनोरथ पुरओ, गरुअ दाप सिवसिंह करू ।।
सुरतरु कुसुम घालि दिसि पूरिओ, दुन्दुभिसुन्दर साद धरू ।
वीर छन देखन को कारन, सुरगन सते गगन भरू ।।
आरम्भिए अन्तेट्टि महामख, राजसूअ असमेघ जहाँ ।
पंडित घर अचार बर बानिज, जाचक काँ घर दान कहाँ ।।
बिज्जाबई कविबर यह गावय, मानव मन आनन्द भओ ।
सिंहासन सिवसिंह बइट्टो, उच्छवै बैरस बिसरि गओ ।।

शिवसिंह ने गद्दी पर बैठने ही उनको बिसपी गाँव उपहार में दे दिया। राज्यारोहण के तीन ही वर्ष बाद पुनः यवन सेना मिथिला पर आ चढ़ी। पहली बार पराजित होने के कारण स्वभावतः बादशाह ने बड़ी तैयारी की थी। शिवसिंह दूरदर्शी थे, भविष्य समझ गये। किन्तु तो भी अधीनता स्वीकार करना उन्हें नापसन्द हुआ। उन्होंने अपनी स्त्रियों को, विद्यापति के साथ अपने मित्र राजा पुरादित्य के पास 'रजाबनौली' (नेपाल-तराई) भेज दिया।

राजा पुरादित्य द्रोणवार-कुल के ब्राह्मण थे। बड़े ही प्रतापशाली थे। अपने बाहुबल से सप्तरी—परगना जीतकर उन्होंने अपना राज्य स्थापित किया था। विद्यापति अपनी 'लिखनावली' में लिखते हैं—

जित्वा शत्रुकुलं तदीयवसुभिर्येनार्थिनस्तर्पिता ।
दोर्दर्पार्जित सप्तरीजनपदे राज्यस्थितिः कारिता ।।
संग्रामेऽर्जुनभूपतिर्विनिहतो बन्धो नृशंसायितः ।
तेनेयं लिखनावली नृपपुरादित्येन निर्मापिता ।।

शिवसिंह सेना के साथ बादशाह से जा भिड़े। वे शाही सेना का व्यूह भेदकर बादशाह के निकट पहुंच गये और अपनी तलवार से उसका शिरस्त्राण उड़ाते हुए फिर बाहर निकल आये। उनकी वीरता पर बादशाह मुग्ध हो गया। यवन-सेना उनके पीछे दौड़ी, तो बादशाह ने मना कर दिया।

शिवसिंह वहाँ से नेपाल की ओर जंगल में चले गये और पुनः अपने राज्य में न लौटे। कोई-कोई कहते हैं, वे मारे गये।

उनकी मृत्यु—अथवा पलायन—के बाद, मालूम होता है, विद्यापति बहुत दिनों तक लखिमा देवी[1] के साथ रजाबनौली में ही रहे, क्योंकि वहीं पर २९९ लक्ष्मणाब्द में यहाँ के राजा पुरादित्य के लिए इन्होंने 'लिखनावली' लिखी। यही नहीं, ३०९ लक्ष्मणाब्द नें इन्होंने स्वलिखित भागवत की पोथी यहीं समाप्त की।

'लिखनावली' के बाद इन्होंने शिवसिंह के भाई पद्मसिंह की स्त्री विश्वासदेवी के लिए दो ग्रन्थ लिखे। इन दोनों ग्रन्थों में समय नहीं दिये गये हैं।

पद्मसिंह के उत्तराधिकारी हरिसिंह के लिए इन्होंने 'विभागसार' की रचना की थी। उनकी स्त्री धीरमती के लिए 'दानवाक्यावली' लिखी थी।

इनकी अन्तिम रचना 'दुर्गा-भक्ति-तरंगिणी' है। यह नरसिंहदेव के समय में प्रारम्भ की गई थी और धीरसिंह के राजत्वकाल में समाप्त हुई थी।

धीरसिंह का समय, 'सेतुदर्पिणी' के अनुसार, ३२१ लक्ष्मणाब्द है। अतएव, इस समय तक, अर्थात् संवत् १४८७ वि० या १४३०[2] ई० तक इनका जीवित रहना सब प्रकार से सिद्ध है।

---

१. लखिमा देवी की विद्वत्ता, चतुरता और प्रत्युत्पन्नमतित्व की अनेक जनश्रुतियाँ मिथिला में प्रचलित हैं। किसी-किसी ऐतिहासिक के मत से उन्होंने शिवसिंह के बाद ९ वर्ष तक राज्य भी किया था। किन्तु स्वयं विद्यापति ने कहीं भी इसकी ओर इशारा तक नहीं किया है। अतः यह बात अप्रामाणिक मालूम होती है। —लेखक

२. 'हिस्ट्री आफ तिरहुत' के ३२१ लक्ष्मणाब्द को १४३९ ई० लिखा है। —लेखक

मृत्यु-काल

३२१ लक्ष्मणाब्द तक इनका जीवित रहना सिद्ध होता है। धीरसिंह के बाद किसी राजा के नाम से लिखी गई इनकी कोई पुस्तक नहीं मिलती है। इससे अनुमान होता है कि धीरसिंह के राजत्वकाल में ही या उसके थोड़े ही दिनों के बाद इनकी मृत्यु हो गई। इनका एक पद यों है—

सपन देखल हम सिवसिंघ भूप।
बतिस बरस पर सामर रूप॥
बहुत देखल गुरुजन प्राचीन।
आब भेलहुँ हम आयुबिहीन॥
समटु समटु निअ लोचन नीर।
ककरहु काल न राखथि थीर॥
विद्यापति सुगतिक प्रस्ताव।
त्याग के करता रसक सुभाव॥

इससे पता चलता है कि शिवसिंह की मृत्यु के बत्तीस वर्ष बाद विद्यापति ने उन्हें स्वप्न में देखा था। ऐसी प्राचीन धारणा है कि बहुत दिनों पर यदि अपना कोई मृत प्रेम-पात्र मलिन वेश में दीख पड़े, तो मृत्यु निकट समझनी चाहिए[1]। यही भाव बड़े ही कारुणिक शब्दों में उपर्युक्त पद में वर्णित है।

शिवसिंह २९६ लक्ष्मणाब्द में मरे थे। अतः ३२८ लक्ष्मणाब्द में विद्यापति ने उक्त स्वप्न देखा होगा, जो विक्रमीय संवत् १४९४ होता है। यदि हम इस

---

१. विद्यापति के पद में 'कंसदलन नारायन सुन्दर तसु रंगिनि पए होई' ऐसी भणिता है। मैंने भ्रमवश पहले इस 'कंसदलननारायन' को 'कंस-नारायण' नामक मिथिला का राजा समझा था। एक तो नाम में ही भेद है, दूसरे राजा का वर्णन है, अतः वहाँ कृष्ण अर्थ है। 'कंस-नारायण' विद्यापति की मृत्यु के बहुत पश्चात् राजा हुए थे। —लेखक

स्वप्न के तीन वर्ष बाद इनकी मृत्यु मान लें, तो नब्बे वर्ष की अवस्था में, संवत् १४९७ वि० में (या १४४० ई० में) मरे थे। श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त ने इसी समय को प्रामाणिक माना है।

उस समय ये बूढ़े हो चले थे। जन्म-भर शृंगार-रचना से व्यस्त रहने के कारण अन्तिम समय में संसार से इन्हें विरक्ति हो गई थी। इन्हें अपना भविष्य अन्धकारमय प्रतीत होता था—निराशा की काली घटा ने इनके हृदय व्योम को आच्छादित कर लिया था। ये अत्यन्त करुण-स्वर में गाते हैं—

तातल सैकत बारि-बिंदु-सम, सुत-मित-रमनि समाज ।
तोहि बिसारि मन ताहि समरपल आब होएब कोन काज ।।
माधव, हम परिनाम निरासा ।
तोहें जगतारन दीन दयामय अतए तोहर बिसबासा ।।
आध जनम हम नींद गमाओल जरा सिसु कत दिन गेला ।
निधुबन रमनि-रभस रँग मातल तोहि भजब कोन बेला ।।

इन्होंने अपनी कविता-रचना द्वारा प्रचुर सम्पत्ति प्राप्त की थी। वृद्धावस्था में इस धन को देखकर कहते हैं—

जतने जतेक धन पापें बटोरल मिलि-मिलि परिजन खाए ।
मरनक बेरि हरि केओ नहि पूछए करम संग चलि जाए ।।
ए हरि, बन्दओं तुअ पद नाए ।
तुअ पद परिहरि पाप-पयोनिधि पारक कओन उपाय ।।
जनम अबधि नहि तुअ पद सेबिल जुबती रति-रंग मेलि ।
अमिअ तेजि किए हलाहल पीउल सम्पद अपदहि भेलि ।।

ये अपनी उमर की ओर लक्ष्य कर कहते हैं—

बयस, कतह चल गेला ।
तोहे सेवइत जनम बहल, तइओ न आपन भेला ।।

वयस, तुम कहाँ चले गये ? तुम्हें सेवते हुए अपना जन्म बिता दिया, किन्तु अपने न हुए ।

कहा जाता है, अपना मृत्यु-समय निकट आया जान ये अपने घर के लोगों से विदा लेकर गंगा-सेवन को चले । गंगा-सेवन की प्रथा मिथिला में अद्यावधि प्रचुरता से प्रचलित है । गंगा-यात्रा के अवसर पर इन्होंने अपने पुत्र को बहुत-कुछ उपदेश दिया । कहा—"बेटा, प्रजारंजन करना, अतिथि-सत्कार में कभी न चूकना, दूसरे की स्त्री को माता के तुल्य जानना ।"

पश्चात् ये अपनी कुल-देवी विश्वेश्वरी के निकट गये । देवी से जाने की अनुमति माँगी । कहा—"माँ, अब गंगा जा रहा हूँ । जन्म-भर शिव की आराधना की । अब विदा दो ।"

घर पर सभी को सन्तोष दे, पालकी पर चढ़कर गंगा की ओर चले । राह में जब गंगा से कुछ दूर पर ही थे, तब अपनी पालकी रखवा दी । एक अभिमानी भक्त की तरह कहा—"मैं इतनी दूर से मैया के निकट आया, क्या मैया मेरे लिए दो कोस आगे नहीं बढ़ आवेगी ।"

रात बीती । दूसरे ही दिन लोग दृश्य देखकर अवाक् रह गये ! गंगा अपनी धारा छोड़, दो कोस की दूरी पर पहुँच गई थी ! !

आज तक उस स्थान पर गंगा की धारा टेढ़ी नजर आती है । उस स्थान का नाम 'मऊ बाजितपुर है । यह दरभंगा जिले में (अब समस्तीपुर जिले में) है । यहीं इनकी मृत्यु हुई ।

इनकी चिता पर एक शिव-मन्दिर की स्थापना की गई । यह शिव-मन्दिर आजतक विद्यमान है । इनकी मृत्यु-तिथि के विषय में एक पद प्रचलित है ।—

विद्यापतिक आयु अवसान ।
कातिक धवल त्रयोदसि जान ।।

इसके अनुसार इनकी मृत्यु कार्त्तिक शुक्ल त्रयोदशी को हुई । यह तिथि प्रामाणिक समझ पड़ती है । कार्त्तिक महीने में गंगा-सेवन करने का हिन्दू-शास्त्र

के अनुसार, बड़ा महत्त्व है। इनकी मृत्यु गंगा-तट पर हुई थी—जब कि ये गंगा-सेवन करने गये थे। अतः इस तिथि को अप्रामाणिक मानने का कोई कारण नहीं।

हस्ताक्षर

विद्यापति, प्राचीन हिन्दी-कवि चन्दबरदाई को छोड़कर, सभी प्रसिद्ध हिन्दी-कवियों से पहले हुए थे। इनके हाथ की लिखी हुई इनकी निजी रचना—पदावली या संस्कृत-पोथियाँ—नहीं पाई जातीं। हाँ, एक 'सटीक भागवत' की पोथी इनके हाथ की लिखी अवश्य पायी जाती है। यह पुस्तक दरभंगे से बारह कोस दूर 'तरौनी' नामक गाँव में जयनारायण झा की विधवा पत्नी के पास सुरक्षित है। दरभंगा जिले की पंडितमंडली का पूरा विश्वास है, और जनश्रुति से भी यह सिद्ध है कि यह विद्यापति के हाथ से लिखी गई थी। यह तालपत्र पर लिखी हुई है। प्रत्येक पत्र की लम्बाई दो फुट और डेढ़ इंच तक, चौड़ाई सवा दो इंच के लगभग में। पत्र की संख्या ५७६ है। पत्र के दोनो ओर लिखावट है। प्रत्येक पृष्ठ में छह पंक्तियाँ हैं। लिपि स्पष्ट, अक्षर की आकृति बड़ी, प्रत्येक अक्षर अलग-अलग, विराम और विभाग का चिह्न सर्वत्र विद्यमान है। लिखावट सुन्दर, कहीं भी एक अशुद्धि अथवा लिपिदोष नहीं। रोशनाई प्रायः सर्वत्र स्वच्छ। अन्तिम पत्र काष्ठ के वेष्टन-घर्षण और बन्धन के कारण जीर्ण हो गया है और लिखावट भी अस्पष्ट हो गई है। ग्रन्थ के शेष में लिखा है—

"शुभमस्तु सर्व्वार्थगता संख्या ल० स० ३०९ श्रावणशुक्ल १५ कुजे रजाबनौलीग्रामे श्रीविद्यापतिर्लिपिरियमिति।

अन्तिम दो अक्षर 'मिति' पत्रांश से छिन्न हो गया है। 'रजाबनौली' गाँव दरभंगे से प्रायः १५ कोस उत्तर है। शिवसिंह २९३ लक्ष्मणाब्द में राज्यासन पर बैठे थे। उनकी मृत्यु उसके तीसरे साल हुई थी। इस तरह उनकी मृत्यु के तेरह साल बाद की यह पोथी है।

मालूम होता है, शिवसिंह की मृत्यु के बाद इनका जी सांसारिक कार्यों से उचट गया था——कम-से-कम शृंगारिक रचनाओं की ओर से मित्र-वियोग होने पर ऐसा होना सम्भव भी है। उसी शोकावस्था में अपने चित्त की शान्ति के लिए, इन्होंने यह कष्टकर कार्य प्रारम्भ किया हो तो कोई आश्चर्य नहीं।

परिवार

इनके बेटे का नाम 'हरपति' था। इनके एक पद में उनका नाम आया है। इनके एक कन्या भी थी। मिथिला में यह प्रवाद है कि इनकी लड़की का नाम 'दुलही' था। इन्होंने कितने पद ऐसे बनाये हैं, जिनमें 'दुलही' शब्द आया है। कहते हैं, ये पद इन्होंने अपनी पुत्री को ही सम्बोधित कर लिखे थे।

दुलही का अर्थ नववधू भी होता है। न मालूम, क्या रहस्य है? मिथिला के एक वृद्ध ब्राह्मण के घर में एक पद प्राप्त हुआ है, जिससे सिद्ध होता है कि इनकी लड़की का नाम 'दुलही' था। अन्तिम काल में ये कहते हैं---

दुल्लहि, तोहर कतय छथि माए।
कहुन ओ आबथु एखन नहाए॥

'दुलही' तुम्हारी माँ कहाँ हैं? कहो न, वे इस समय स्नान कर आवें।

दरभंगे के वर्त्तमान राजघराने में 'नरपति ठाकुर' नामक राजा हो गये हैं। उनके दरबार में 'लोचन' नामक एक कवि थे। लोचन ने 'रागतरंगिणी' नामक एक पुस्तक का संकलन किया था। उसमें उन्होंने विद्यापति के बहुत-से पद रक्खे हैं।

'रागतरंगिणी' में एक कविता 'चन्द्रकला' नामक एक रमणी की बनाई हुई पाई जाती है। लोचन ने इस कविता पर टिप्पणी की है——"इतिश्रीविद्यापति-पुत्रवध्वाः"। इससे मालूम होता है 'चन्द्रकला' विद्यापति की पतोहू थी। यहाँ पर चन्द्रकला की उस कविता को उद्धृत करने का लोभ हम संवरण नहीं कर सकते—

स्निग्ध कुञ्चित कोमलं कच गंडमंडित कोमलम् ।
अधर विम्ब समान सुन्दर शरदचंद्रमिवाननम् ।।
जय कम्बु कंठ विशाल लोचन सारमुज्ज्वलसौरभम् ।
बाहुबल्लि मृणाल पंकज हार शोभित ते शुभम् ।।

शोभय सुन्दरि मम हृदयम् ।
गद्गद हास सुदति निपुणम् ।।

उर पीन कठिन विशाल कोमल याति युग्म निरन्तरम् ।
श्रीफला कमला विचित्र विधातु निर्मल कुच वरम् ।।
श्यामा सुवेषा त्रिवलि रेखा जघनभार विलम्बिते ।
मत्तगज-कर जघन युगवर गमन गति वरटा-जिते ।।

सुललित मंद गमन करई ।
जनि पति संग वरटा भमई ।।

अतिरूप यौवन प्रथम सम्भव कि वृथः कथया प्रिये ।
तेजह रूप विमोह परिहरि शोक चिन्तित चिन्तये ।।
उपयात मदन व्याधि दुःसह दहय पावक सेवनम् ।
पवन दिसे दिसे दहय पावक युग्मदारज सम्बरम् ।।

श्यामा सवन्दिते ।
अति समय गीत सुशोभिते ।।

आतमदान समान सुन्दरि धार वर्षति सिञ्चये ।

सिञ्चह सुन्दरि मम हृदयम् ।
अधर-सुधा मधुपानमियम् ।।

चन्द्र कवि जयदेव मुद्रित मान तेज तोहें राधिके ।
वचन मम धर कृष्ण मनुसर किन्तु कामकला शुभे ।।

चन्द्रकला हे वचन करसी ।
मानिनि माधवमनुसरसी ।।

सहपाठी पक्षधर मिश्र

पक्षधर मिश्र मिथिला के प्रकाण्ड विद्वान् हो गये हैं। वे विद्यापति के सहपाठी थे। इन्होंने 'बिसपी' गाँव में एक अतिथिशाला बनवा रखी थी। प्रतिदिन भोजन के पश्चात् ये स्वयं अतिथिशाला में जाते और अतिथियों से वार्तालाप करते।

प्रवाद है कि एक दिन जब ये अतिथिशाला में गये तब सभी अतिथि इनकी अभ्यर्थना में खड़े हो गये। केवल कोने में एक अत्यन्त कृश पुरुष बैठा ही रहा। इनके पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि उसने भोजन नहीं किया है। उस पुरुष की दुर्बलता पर इनके मुँह से सहसा निकल गया।

"प्राघुणो घुणवत् कोणे सूक्ष्मत्वान्नोपलक्षितः।"

'घर के कोने में सूक्ष्म-कीट (घुन)-वत् अतिथि सूक्ष्मतावशतः नहीं दीख पड़े।'

बैठे हुए पुरुष ने तुरत उस श्लोक की पूर्ति करते हुए उत्तर दिया—

"नहि स्थूलधियः पुंसः सूक्ष्मे दृष्टिः प्रजायते ॥"

'स्थूलबुद्धि पुरुष को सूक्ष्म पदार्थ नहीं दीख पड़ता।'

बोली सुनते ही ये अपने सहपाठी को पहचान गये। उन्हें आदर-पूर्वक अपने घर ले आये। पक्षधर मिश्र सम्भवतः इनसे कुछ छोटे थे। उनके स्वहस्तलिखित एक 'विष्णुपुराण' में ३४५ लक्ष्मणाब्द लिखा हुआ है।

विद्वेषी केशव मिश्र

बड़े लोगों के प्रति उनके अड़ोस-पड़ोसवाले सदा द्वेष-भाव रखते हैं, यह बात स्वयंसिद्ध है। इनके भी कुछ लोग विद्वेषी थे। ये शिवभक्त थे। शिव की पूजा करते समय, भावावेश में निज प्रणीत नचारी गाते-गाते ये नाचने तक लगते थे। इसी कारण कुछ लोग इन्हें 'नर्तक' नाम से चिढ़ाते थे।

ऐसा प्रवाद है, इनके एक और प्रसिद्ध विद्वेषी हो गये जिनका नाम था 'केशव मिश्र'। उनका समय ४७३ लक्ष्मणाब्द है अर्थात् इनके लगभग सौ वर्ष पश्चात्।

मिश्रजी प्रसिद्ध शाक्त थे। 'द्वैत-परिशिष्ट' नामक स्वरचित ग्रंथ में उन्होंने 'देवीभागवत' को प्रामाणिक ग्रंथ प्रतिपादित किया है।

विद्यापति ने अपने हाथ से श्रीमद्भागवत लिखा था, इसलिए मिश्रजी इनसे चिढ़-से गये थे। वे इनका 'अतिलुब्ध नगरयाचक' नाम से उपहास करते थे। इन्होंने 'बिसपी' गाँव उपहार-रूप में ग्रहण किया था—इसलिए ये 'नागरयाचक' थे! द्वेष का कोई ठिकाना है!

मिश्रजी शिवसिंह के कुल की दौहित्र-सन्तान थे—राजकुटुम्ब के पुरुष थे। अतएव ऐसी उद्दण्डता—ऐसी विद्वेष बुद्धि—स्वाभाविक भी है!

* * *

पदावली

यद्यपि इन्होंने लगभग एक दर्जन संस्कृत-ग्रन्थों का निर्माण किया था, तथापि इनकी प्रसिद्धि का खास कारण है इनकी 'पदावली'।

गाने योग्य छन्द 'पद' कहे जाते हैं। इन्होंने जितने छन्द बनाये, सभी संगीत के सुर-लय से बँधे हुए हैं। इन्होंने कविता में जयदेव को आदर्श माना है——लोग इन्हें 'अभिनव जयदेव' कहते भी थे। अतः जयदेव के ही समान, ये संगीत-पूर्ण कोमलकान्तपदावली में श्रृंगारिक रचना करते थे।

राजा-नरपति ठाकुर के दरबारी कवि 'लोचन' ने अपनी 'रागतरंगिणी' में लिखा है कि 'सुमति' नामक एक कलाविद् कायस्थ कत्थक के लड़के 'जयत' को राजा शिवसिंह ने विद्यापति के निकट रख दिया था; विद्यापति पद तैयार करते थे, जयत उसका 'सुर' ठीक करता था—

> सुमतिसुतोदयजन्मा जयतः शिवसिंहदेवेन।
> पण्डितवर-कविशेखर-विद्यापतये तु सन्न्यस्तः॥

बिना संगीत का मर्म जाने संगीतमय पदों की रचना नहीं की जा सकती। मालूम होता है, स्वयं भी गान-विद्या में पारंगत थे।

इनके पदों में कहीं-कहीं छन्दोभंग-सा दीख पड़ता है। किन्तु, सूरदास के पदों में भी यही बात पाई जाती है। पर संगीत के सुर-लय के अनुसार जो पद बनाये जाते हैं, उनमें 'ध्वनि' का ही विचार किया जाता है——अक्षर और मात्रा का नहीं। इसीलिए संगीत से अपरिचित व्यक्तियों को इनके पदों में छन्दोभंग का आभास मिल जाता है।

पदावली का रूप

इन्होंने कितने पद बनाये थे, इसका भी अभी तक पूरा पता नहीं चलता है। श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त ने ९४५ पदों का संग्रह प्रकाशित किया था। बाबू व्रजनन्दनसहायजी का संग्रह इससे बहुत छोटा है, तथापि उसमें कुछ ऐसे

पद हैं, जो नगेन्द्रनाथगुप्तवाले संस्करण में नहीं है। सहायजी के नये पदों में नचारियों की ही प्रधानता है।

किन्तु, अभी तक इनके बहुत से अनूठे पद अप्रकाशित ही है। मिथिला की स्त्रियां जिन पदों को विवाह के अवसर पर गाती हैं उनका, तथा बहुत-सी नचारियों का, अभी संकलन नहीं हुआ है।

पदावली के प्राचीन संस्करणों को देखने से पता चलता है कि इन्होंने पदों की रचना विषय-विभाग के अनुसार नहीं की थी। 'बिहारी' के ही समान ये भी, जब उमंग में आते थे, रचना कर डालते थे। पीछे लोगों ने उनका अलग-अलग विभाग कर सजा लिया।

पदावली की हस्तलिखित पोथियाँ

यों तो इनके अधिकांश पद लोगों को कंठस्थ ही हैं और उन्हीं का संग्रह 'पदकल्पतरु' आदि बंगला के प्राचीन संग्रह-ग्रन्थों में है। किन्तु, हाल में तीन प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ मिले हैं, जिनसे इनके कितने नवीन पद प्राप्त हुए हैं एवं पदावली की प्रामाणिकता का पूरा पता चला है।

उन ग्रन्थों में सबसे प्राचीन और प्रामाणिक तालपत्र पर लिखी हुई एक पोथी है। यह पोथी भी विद्यापति लिखित 'भागवत' के साथ 'तरौनी' ग्राम के उन्हीं स्वर्गीय पण्डित के घर में सुरक्षित पाई गई है। कहा जाता है कि विद्यापति के प्रपौत्र ने इसे लिखा था। इस पोथी की लिखावट और इसके तालपत्र को देखने से मालूम होता है कि यह कम-से-कम तीन सौ वर्ष का प्राचीन है। लापरवाही से रखने के कारण यह पोथी जीर्ण-शीर्ण हो गई है। पहला और दूसरा पत्र गायब है। फिर नवाँ नहीं है। इसके बाद ८१ से लेकर ९९ पत्र तक एकदम नहीं है। १०३ नम्बर का पत्र भी गायब है। १३२ पत्र के बाद का कुछ भी अंश नहीं मिलता! सम्पूर्ण पोथी न होने के कारण यह पता नहीं चलता कि यह कब लिखी गई, किसने इसे लिखा और कुल कितने पद इसमें थे। इस पोथी में लगभग ३५० पद बचे हुए हैं।

दूसरी पोथी नेपाली में पाई गई है। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने प्रथम-प्रथम इसे नेपाली दरबार के पुस्तकालय में देखा था। यह पोथी बहुत सुरक्षित है; किन्तु इस पोथी की भाषा में नैपाल-तराई (मोरंग) की बोली की छाप स्पष्ट दीख पड़ती है। मालूम होता है, इसे किसी मोरंग-निवासी ने लोगों से सुनकर लिखा था, जिससे ऐसी गलती हुई है। इस पोथी में लगभग ६०० पद हैं।

तीसरी पोथी है पूर्वोक्त रागतरंगिणी। इसमें लोचन ने विद्यापति के बहुत से पद रक्खे हैं। प्रत्येक पद के राग का निर्णय भी किया है। छन्द के नियम और मात्राओं की संख्या भी दी है। यह ढाई सौ वर्ष की प्राचीन पोथी है। लोचन ने लिखा है—"अपभ्रंश भाषा की रचना प्रथम-प्रथम विद्यापति ने ही की।"

पदावली की भाषा

पदावली की भाषा भी अबतक विवादग्रस्त रही है। बंगाली लोग इनको बंगला का प्रथम कवि या बंगभाषा का प्रवर्त्तक मानते हैं। इसीलिए उनलोगों ने इनको बंगाली सिद्ध करने की भी चेष्टा की थी। किन्तु, अब तो यह सब प्रकार से सिद्ध हो गया है कि ये मैथिल थे।

मैथिलों की एक खास बोली है 'मैथिली'। विद्यापति भी मैथिल थे, अतः मैथिल लोग इन्हें अपनी बोली मैथिली का प्रथम कवि मानते हैं। सचमुच यही ठीक है।

किन्तु, यह मैथिली बोली किस भाषा की शाखा है—बंगला भाषा की या हिन्दी भाषा की? बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त ने मैथिली को ब्रज बोली (या हिन्दी) की एक शाखा माना है।

गुप्तजी 'प्राच्य विद्या महार्णव' कहे जाते हैं। उनका निर्णय अधिक मूल्य रखता है। हमारी राय भी उनसे मिलती है।

मिथिला बंग देश से सटी हुई है। विद्यापति का जन्म दरभंगे में हुआ था; जो द्वारबंग या 'बंगाल का द्वार' है। इसलिए मैथिली पर

वंगभाषा का प्रवाह जरूर पड़ा है। यदि हम कह सकें, तो कह सकते हैं कि मैथिली का शरीर हिन्दी का है, और उसकी पोशाक बंगला की। जिस प्रकार कोई हिन्दुस्तानी, अँगरेजी पोशाक पहनकर, अँगरेज नहीं बन जा सकता, उसी प्रकार मैथिली भी हिन्दी को छोड़कर वंगभाषा की नहीं हो सकती। हाँ, वंगभाषा के संसर्ग से इसमें मिठास अवश्य आ गई है।

पदावली की भाषा आज-कल की मैथिली से कुछ भिन्न है। यह स्वाभाविक भी है। विद्यापति को हुए पाँच-सौ वर्ष बीते। इन पाँच सौ वर्षों में भाषा में कुछ-न-कुछ परिवर्त्तन होना बहुत सम्भव है।

कुछ मैथिली भाषी महाशय इन पदों की भाषा को तोड़-फोड़कर आज-कल की मैथिली बोली से मिलाने का अनुचित प्रयत्न करते हैं। किन्तु, क्या वे समझने की चेष्टा करेंगे कि ऐसा करके वे इनकी स्वर्गीय आत्मा को कितना कष्ट पहुँचा रहे हैं?

इनकी भाषा की दुर्दशा भी खूब हुई है। बंगालियों ने उसे ठेठ बंगला का रूप दे दिया है, मोरंगवालों ने मोरंग का रंग चढाया है। बाबू ब्रजनन्दनसहायजी उसपर आधुनिक मैथिली का रोगन चढ़ा रहे हैं। भगवान् इनकी कोमलकान्त-पदावली की रक्षा करे।

पदावली की विशेषता

इनकी पदावली अपना खास स्वरूप, अपना खास रंग-ढंग रखती है। वह कहीं भी रहे, आप उसे कितनों की कविताओं में छिपाकर रखिये, वह स्वयं चिल्ला उठेगी—मैं हिन्दी कोकिल की काकली हूँ। जिस प्रकार हजारों पक्षियों के कलरव को चीरती हुई कोकिल की काकली आकाश-पाताल को रसप्लावित करती और अपना स्वतंत्र अस्तित्व प्रकट करती है, उसी प्रकार इनकी कविता भी अपना परिचय आप देती है।

बंगाल के 'यशोहर' (Jessore) जिले में वसंतराय नामक एक कवि हो गये हैं। विद्यापति के पदों का प्रचार देखकर उन्होंने भी विद्यापति के नाम से कविता

करना प्रारम्भ कर दिया था। किन्तु, वे अपनी कविताएँ इनकी कविता में न खपा सके।

इनकी भाषा इनकी खास अपनी भाषा है, इनकी वर्णनप्रणाली इनकी खास वर्णनप्रणाली है, इनके भाव स्वयं इनके ही हैं। इनकी पदावली पर 'खास' की मुहर लगी हुई है। बंगला के सैकड़ों कवियों ने इनके अनुकरण पर कविताएँ की। किन्तु, कोई भी इनकी छाया न छू सके।

वे एक अजीब कवि हो गये हैं। राजाओं की गगनचुम्बी अट्टालिकाओं से लेकर गरीबों की टूटी-फूटी फूस की झोपड़ियों तक में इनके पदों का आदर है। भूतनाथ के मन्दिर और 'कोहबर-घर' में इनके पदों का समान रूप से सम्मान है।

कोई मिथिला जाकर तमाशा देखे। एक शिवपुजारी, डमरू हाथ में लिये, त्रिपुंड्र रमाये, जिस प्रकार '**कखन हरब दुख मोर हे भोलानाथ**' गाते-गाते तन्मय होकर अपने-आपको भूल जाता है, उसी प्रकार नववधू को कोहबर में ले जाती हुई कलकंठी कामिनियाँ '**सुन्दरि चललि पहु घर ना, जाइतहि लागु परम डर ना**' गाकर नव वर-वधू के हृदयों को एक अव्यक्त आनन्द-स्रोत में डुबा देती हैं। जिस प्रकार नवयुवक '**ससन परस खसु अम्बर रे, देखल धनि देह**' पढ़ता हुआ एक मधुर कल्पना से रोमाञ्चित हो जाता है उसी प्रकार एक वृद्ध '**तातल सैकत वारिबिन्दु सम सुत मित रमनि समाज, तोहे बिसरि मन ताहि समरपिल अब मझु होब कोन काज। माधव, हम परिनाम निरासा।**' गाता हुआ अपने नयनों से शत-शत अश्रु-विन्दु गिराने लगता है।

'विद्वद्वर **ग्रियर्सन** का यह कहना कितना सत्य है—

Even when the Sun of Hindu-religion is set when belief and faith in Krishna and in that medicine of 'disease of existence' the hymns of Krishna's love, is extinct, still the love borne for songs of Vidyapati in which he tells of Krishna & Radha will never be diminished."

"हिन्दूधर्म के सूर्य का अस्त भले हो जाय —वह समय भी आ जाय जब राधा और कृष्ण में मनुष्यों का विश्वास और श्रद्धा न रहे; और, कृष्ण के प्रेम की स्तुतियों के लिये, इहलोक में हमारे अस्तित्व के रोग की दवा है, अनुराग आता रहे, तो भी विद्यापति के गान के लिये जिसमें राधा और कृष्ण का उल्लेख है—लोगों का प्रेम कभी कम न होगा।"

डॉक्टर **ग्रियर्सन** के कथन का प्रमाण बंगाल में जाकर देखिये। सहस्र-सहस्र हिन्दू आज तक विद्यापति के राधाकृष्ण-विषयक पदों का कीर्त्तन करते हुए अपने-आपको भूल जाते हैं।

एक जगह पुनः आप लिखते हैं—"The glowing stanzas of Vidyapati are read by the devout Hindu with a little of the baser of the human sensuousness as the songs of the Solmon by the Christian priests."

"जिस प्रकार ख्रीष्ट पादरी सोलमन के गान गाते है, उसी प्रकार भक्त हिन्दू विद्यापति के अनूठे पदों को पढ़ते है।"

इनकी उपमाएँ अनूठी और अछूती हैं। इनकी उत्प्रेक्षाएँ कल्पना के उत्कृष्ट विकास के उदाहरण हैं। रूपक का इन्होंने रूप खड़ा कर दिया है। स्वभावोक्ति से इनकी सारी रचनाएँ ओत-प्रोत हैं। श्रुत्यनुप्रास इनके पदों का स्वाभाविक आभूषण है। प्रधान काव्यगुण—प्रसाद और माधुर्य—इनके पद-पद से टपकते हैं।

प्रकृति-वर्णन में तो इन्होंने कमाल किया है—इनका वसंत और पावस का वर्णन पढ़कर, मंत्र-मुग्ध हो जाना पड़ता है। इनके वसंत और पावस में मिथिला की खास छाप है। वसंत में मिथिला की शस्य-श्यामला भूमि अलंकृत और दर्शनीय हो जाती है। पावस में, हिमालय निकट होने के कारण, यहाँ बिजलियाँ जोर से कड़कती है—प्रायः कुलिशपात होता है। इन्होंने इसका बड़ा ही अपूर्व वर्णन किया है।

इनका मिलन और विरह का वर्णन भी देखने योग्य है। हिन्दी कवियों के विरह-वर्णन में, 'घनानन्द' आदि दो-चार को छोड़कर, हृदयवेदना का सूक्ष्म विश्लेषण प्रायः नहीं देखा जाता। विद्यापति का विरह-वर्णन प्रेमिका के हृदय की तस्वीर है--उसमें वेदना है, व्याकुलता है, प्रियतम की प्रियतमा के प्रति तल्लीनता है, कोरी हाय-हाय वहाँ नहीं है!

....

विद्यापति की पदावली

[टिप्पणी-सहित]

वन्दना

[१]

नन्दक नन्दन कदम्बक तरु-तर
धिरे-धिरे मुरलि बजाव ।
समय सँकेत-निकेतन बइसल
बेरि-बेरि बोलि पठाव ॥२॥
सामरि, तोहरा लागि
अनुखन विकल मुरारि ॥३॥
जमुनाक तिर उपवन उद्वेगल
फिर-फिर ततहि निहारि ।
गोरस बेचए अबइत जाइत
जनि-जनि पुछ बनमारि ॥५॥

१—नन्दक नन्दन=नन्द के बेटे, श्रीकृष्ण । तर=तले, नीचे । २—सँकेत-निकेतन=मिलने का सांकेतिक स्थान । बइसल=बैठे हुए बेरि-बेरि=बार-बार । संकेत-स्थान में बैठे (मिलन का समय आया जान) बार-बार बुला रहे हैं (वंशी में पुकार रहे हैं)—"नामसमेतं कृत-संकेतं वादयते मृदु वेणुम्"—गीतगोविन्द । ३—सामरि=श्यामा, सुन्दरी—"शीते सुखोष्णसर्वाङ्गी ग्रीष्मे च सुखशीतला । तप्तकाञ्चनवर्णाभा सा स्त्री श्यामेति कथ्यते।" तोहरा लागि=तुम्हारे लिये । अनुखन =प्रतिक्षण । ४, ५—तिर=तट । उद्वेगल=उद्विग्न हुए । ततहि=उसी ओर । जनि जनि=प्रत्येक स्त्री से (पुंल्लिग—जन स्त्री०—जनि) । यमुना के किनारे उपवन में (भ्रमण करते हुए) व्याकुल (होकर) पुनः पुनः उसी ओर (तुम्हारे आगमन पथ की ओर) देखते हैं, और दूध-दही

तोंहे मतिमान, सुमति मधुसूदन
वचन सुनह किछु मोरा।
भनइ विद्यापति सुन बरजौवति
वन्दह नन्द-किसोरा ।।७।।

[२]

राधा की वन्दना

देख देख राधा रूप अपार।
अपरुब के बिहि आनि मेराओल
खिति-तल लावनि सार ।।२।।
अंगहि अंग अनँग मुरछाएत
हेरए पड़ए अथीर।
मनमथ कोटि-मथन करु जे जन
से हेरि महि-मधि गीर ।।४।।

बेचने को आने-जानेवाली प्रत्येक जनी से वनमाली (श्रीकृष्ण तुम्हारे विषय में) पूछते है। ६—मतिमान=समझदार। ७—भनइ=कहते है। जौवति=युवती। बन्दह=बंदना करो।

२—अपरुब=अपूर्व। बिहि=विधि, ब्रह्मा। आनि मेराओल=ला मिलाया, रच दिखाया। खितितल=क्षिति—पृथ्वी पर। लावनि=लावण्य। ३—अनँग=कामदेव। अथीर=अस्थिर, चंचल। ४—मनमथ=कामदेव। मधि=में। जो करोड़ों कामदेवों का (अपने सौंदर्य से)

कत-कत लखिमि चरन-तल नेओछए
रंगिनि हेरि विभोरि।
करु अभिलाख मनहि पदपंकज
अहनिसि कोर अगोरि ॥६॥

[३]

देवी-वन्दना

जय जय भैरवि असुर-भयाउनि
पसुपति-भामिनि माया
सहज सुमति वर दिअ हे गोसाउनि
अनुगति गति तुअ पाया ॥२॥
बासर-रैनि सबासन सोभित
चरन, चन्द्रमनि चूड़ा।
कतओक दैत्य मारि मुँह मेलल,
कतेक उगिलि करु कूड़ा ॥४॥

मथन करते हैं। (वह श्रीकृष्ण भी) जिसे देखकर (मूर्च्छित हो) पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं । ५—लखिमि=लक्ष्मी । नेओछए=न्योछावर होती है। रगिनि=सुन्दरी। बिभोरि=बेसुध होकर। ६—अहनिसि=अहर्निश, दिन-रात। कोर=गोद। अगोरि (मैथिली)=पहरा देकर रखना। मन में अभिलाषा होती है कि इस पद-कमल को रात-दिन गोदी में 'अगोरकर' रखे।

२—दिअ=दो। गोसाउनि=गोस्वामिनी, भगवती। पाया=पैर। ३—बासर=दिन। रैनि=रात। सबासन=शवासन=मुर्दे पर आसन। चन्द्रमनि=चन्द्रकान्तमणि। चूड़ा=शिखर। ४—कतओक=कितना ही।

सामर बरन, नयन अनुरंजित,
जलद-जोग फुल कोका।
कट कट विकट ओठ-पुट पाँड़रि
लिधुर-फेन उठ फोका ॥६॥
घन घन घनन घुघुर कत बाजए,
हन हन कर तुअ काता।
विद्यापति कवि तुअ पद सेवक,
पुत्र बिसरु जनि माता ॥८॥

—:०:—

"ते सुकृती रस-सिद्ध कबि, बंदनीय जग माहि!
जिनके सुजस-सरीर कह, जरा मरन-भय नाहिं ॥"

मेलल=रखा। कूड़ा=कुल्ला। ६—अनुरंजित=रंगा हुआ, लाल। जलद-जोग फुल कोका=बादल में लाल कमल फूले हों। पाँड़रि=एक लाल फूल।

वयः-सन्धि

[४]

सैसव जौवन दुहु मिलि गेल ।
स्रवनक पथ दुहु लोचन लेल ।।२।।

वचनक चातुरि लहु-लहु हास ।
धरनिये चाँद कएल परगास ।।४।।

मुकुर हाथ लए करए सिंगार ।
सखि पूछए कइसे सुरत-बिहार ।।६।।

निरजन उरज हेरए कत बेरि ।
बिहुँसए अपन पयोधर हेरि ।।८।।

पहिलें बदरि-सम पुन नवरंग ।
दिन-दिन अनँग अगोरल अंग ।।१०।।

माधव पेखल अपरुब बाला ।
सैसव जौवन दुहु एक भेला ।।१२।।

विद्यापति कह तोहें अगेआनि ।
दुहु एक जोग एह के कह सयानि ।।१४।।

२—सैसव=शिशुता, बचपन । जौवन=जवानी । दोनो आँखों ने कानों की राह पकड़ी=कटाक्ष करना प्रारम्भ किया । ३—लहु-लहु=मंद-मंद । हास=हँसी । ४—परगास=प्रकाश । ५—मुकुर=आईना । ६—सुरत-बिहार=काम-क्रीड़ा । ७—निरजन=एकान्त में । उरज=पयोधर=स्तन । हेरए=देखती है । "स्मितं किञ्चिद्वक्त्रं सरलतरलो दृष्टिविभवः, परिस्पन्दो वाचामपि नवविलासोक्तिसरसः । गतीनामारम्भः किसलयितलीलापरिकरः, स्पृशन्त्यास्तारुण्यं किमिहनहि रम्यं मृगदृशः ।।" ६—बदरि=बैर का फल ।

[५]

सैसव जौवन दरसन भेल ।
दुहु दल-वलहि दन्द परि गेल ।।२।।
कबहुँ बाँधए कच कबहुँ बिथार ।
कबहुँ झाँपए अंग कबहुँ उघार ।।४।।
थीर नयान अथिर किछु भेल ।
उरज उदय-थल लालिम देल ।।६।।
चपल चरन, चित चंचल भान ।
जागल मनसिज मुदित नयान ।।८।।
विद्यापति कह करु अवधान ।
बाला अंग लागल पंचबान ।।१०।।

नवरंग=नारंगी, नींबू । कुच पहले बैर के समान छोटे थे, पुनः नारंगी-से हुए । १०—अनंग=कामदेव । अगोरल=पहरा देने लगा, डेरा डाल दिया । ११—पेखल=देखा । अपरुब=अपूर्व । १२—भेला=भया, हुआ । १४—के कह=कौन कहता है ?

२—दन्द=द्वन्द्व=युद्ध । परि गेल=पड़ गया, शुरू हो गया, ठन गया । दोनों (शैशव और यौवन) के सैन्यबल में द्वन्द्व-युद्ध छिड़ गया । ३—कच=केश । बिथार=खोल देना । ४—अंग=देह (यहाँ छाती) । ६—अथिर=चंचल । उरज=कुच । उदयथल=उगने का स्थान । देल=दिया । कुचों के उत्पन्न होने के स्थान में लालिमा छा गई । ७—भान=मालूम होता है । पैर चंचल थे ही, अब चित्त भी चंचल मालूम होता है । ८—मुदित=बंद । नयान=आँखें । कामदेव जग तो गया पर उसकी आँखें बन्द ही है, अभी पूरी नही खुलीं ।

[६]

सैसव जौवन दरसन भेल ।
दुहु पथ हेरइत मनसिज गेल ।।२।।

मदनक भाव पहिल परचार ।
भिन जन देल भीन अधिकार ।।४।।

कटिकेर गौरब पाओल नितम्ब ।
एकक खीन अओक अवलम्ब ।।६।।

प्रगट हास अब गोपित भेल ।
उरज प्रगट अब तन्हिकर लेल ।।८।।

चरन चपल गति लोचन पाव ।
लोचन धैरज पदतल जाव ।।१०।।

नव कविसेखर कि कहए पार ।
भिन भिन राज भीन बेवहार ।।१२।।

२—मनसिज=काम। शैशव और यौवन दोनो राहों को देखते हुए कामदेव ने (बाला के शरीर में) गमन किया। ३—पहिल परचार=पहले प्रचारित हुआ। ६—कटिकेर=कमर का। गौरब=गुरुता। नितम्ब=चूतड। खीन=क्षीण, पतला। अओक=अन्य का, दूसरे का। ७, ८—गोपित=गुप्त। तन्हिकर=उसका। प्रकट हँसी अब गुप्त हुई और उसकी प्रकटता अब कुचों ने ले ली। १०—धैरज=धीरता। 'काव्यप्रकाश' में कहा है—श्रोणीबन्धस्त्यजति तनुतां सेवते मध्यभागः। पद्भ्यां मुक्तास्तरलगतयः संश्रिता लोचनाभ्याम्। वक्षःप्राप्तं कुचसचिवतामद्वितीयन्तु वक्त्रम्। तद्गात्राणां गुणविनिमयः कल्पितो यौवनेन। १२—नव कविसेखर=विद्यापति का उपनाम।

[७]

कुच-जुग अंकुर उतपति भेल ।
चरन-चपल-गति लोचन लेल ।।२।।

अब सब खन रह आँचर हाथ ।
लाजे सखीजन न पुछए बात ।।४।।

कि कहब माधव वयसक संधि ।
हेरइत मनसिज मन रहु बंधि ।।६।।

तइअओ काम हृदय अनुपाम ।
रोपल कलस ऊँच कए ठाम ।।८।।

सुनइत रस-कथा थापए चीत ।
जइसे कुरंगिनि सुनए सँगीत ।।१०।।

सैसब जौवन उपजल बाद ।
केओ नहि मानए जय-अवसाद ।।१२।।

विद्यापति कौतुक बलिहारि ।
सैसब से तनु छोड़नहि पारि ।।१४।।

३—खन=क्षण । ५–६ माधव ! वय:-सन्धि (की बातें) क्या कहूँ—देखते ही कामदेव का मन भी बँध गया तथापि (बन्दी होने पर भी) काम ने उसके अनुपम हृदय पर ऊँचा स्थान बनाकर कलस स्थापित कर दिया । ९—थापए =स्थापित करती है । कुरंगिनि=हरिणी । ११—उपजल बाद=होड़ मची, झगड़ा आरम्भ हुआ । १२—केओ–कोई । अवसाद=पराजय । १४—शैशव को उसका शरीर छोड़ना ही पड़ेगा ।

[८]

पहिलें बदरि कुच पुन नवरंग।
दिन-दिन बाढ़ए पिड़ए अनंग ।।२।।

से पुन भए गेल बीजकपोर।
अब कुच बाढ़ल सिरिफल जोर ।।४।।

माधव पेखल रमनि संधान।
घाटहि भेटलि करइत असनान ।।६।।

तनसुक सुबसन हिरदय लाग।
जे पए देखब तन्हिकर भाग ।।८।।

उर हिल्लोलित चाँचर केस।
चामर झाँपल कनक महेस ।।१०।।

भनइ विद्यापति सुनह मुरारि।
सुपुरुख विलसए से बर नारि ।।१२।।

१—बदरि = बैर (फल)। नवरंग = नारंगी। पिड़ए = पीड़ा देता है। ३—बीजकपोर = बीजपुर, बड़ा (टाभ) नीबू। ४—सिरिफल = श्रीफल, बेल। जोर = जोड़ा। एक संस्कृत श्लोक है—उद्भेदं प्रतिपद्यपक्ववदरीभावं समेता क्रमात्। पुन्नागाकृतिमाप्य पूगपदवीमारुह्य बिल्वश्रियम् ।। लब्ध्वा तालफलोपमा च ललितामासाद्य भूयोधुना। चञ्चत्काञ्चनकुम्भजम्भनमिमावस्याः स्तनौ बिभ्रतः ।। ५—पेखल = देखा। ६—असनान = स्नान। ७—तनसुक = एक प्रकार का महीन कपड़ा। ९–१०—हिल्लोलित = झूलता हुआ। चाँचर = छितराया हुआ, झाँझर। हृदय पर झाँझरी-से बने हुए बाल डोल रहे हैं, मानो सोने के महादेव को चँवर से ढँक दिया हो। १३—बिलसए = विलास करे।

[६]

खने-खने नयन कोन अनुसरई ।
खने-खने बसन-धूलि तनु भरई ।।२।।

खने-खने दसन-छटा छुट हास ।
खने-खने अधर आगे गहु बास ।।४।।

चउँकि चलए खने-खने चलु मन्द ।
मनमथ-पाठ पहिल अनुबन्ध ।।६।।

हिरदय-मुकुल हेरि हेरि थोर ।
खने आँचर देअ खने होए भोर ।।८।।

बाला सैसव तारुन भेट ।
लखए न पारिअ जेठ कनेठ ।।१०।।

विद्यापति कह सुन बर कान ।
तरुनिम सैसव चिन्हए न जान ।।१२।।

१—खने-खने = क्षण-क्षण । क्षण-क्षण में आँखें कोण का अनुसरण करती है—कटाक्ष करती है। २—क्षण-क्षण में अस्तव्यस्त वस्त्र (अंचल धूलि में गिरकर) शरीर को धूलि से भरते हैं। ३—दसन = दाँत । हास = हँसी। ४—अधर = होठ। बास = आश्रय । ६—अनुबन्ध = भूमिका । ७—हिरदय-मुकुल = हृदय की कली, कुच । ८—भोर = भूल जाना । ९-१०—तारुन = तरुणाई, जवानी । कनेठ = कनिष्ठ, छोटा । (बाला के शरीर में बचपन और जवानी की भेंट हुई है—मुकाबला हुआ है । इन दोनो में कौन बड़ा और कौन छोटा (कौन निबल और कौन सबल) है, यह जान नहीं पड़ता) १२—कान = कान्ह, कृष्ण । तरुनिम = जवानी ।

नखशिख

[१०]

पीन पयोधर दूबरि गता ।
मेरु उपजल कनक लता ॥२॥

ए कान्ह ए कान्ह तोरि दोहाई ।
अति अपरुब देखलि राई ॥४॥

मुख मनोहर अधर रंगे ।
फुललि मधुरी कमलक संगे ॥६॥

लोचन जुगल भृङ्ग अकारे ।
मधुक मातल उड़ए न पारे ॥८॥

भउँहक कथा पूछह जनु ।
मदन जोड़ल काजर-धनु ॥१०॥

भन विद्यापति दूतिबचने ।
एत सुनि कान्ह करु गमने ॥१२॥

२—पीन=पुष्ट । पयोधर=कुच । गता=गात, शरीर । मेरु=सुमेरु पर्वत । दुबली (तन्वी) के शरीर में पुष्ट कुच है, मानो सोने की लता (देह) में सुमेरु पर्वत (कुच) उत्पन्न हुआ हो । ४—अपरुब=अपूर्व । राई=राधा । ५-६—अधर=ओष्ठ । रँगे=रंगे हुए, लाल । मधुरी=एक तरह का सुन्दर लाल फूल जो मिथिला में विशेष होता है । सुन्दर मुख पर रंगीन (लाल) अधर है, मानो कमल के फूल के साथ मधुरी फूली हो । ७-८—भृंग=भौंरा । मधुक मातल=मधु पीकर मस्त बना हुआ । (उस मुख-कमल में) दोनो लोचन भौंरे के समान हैं (जो मुख-कमल का) मधु पीकर मस्त होने से उड़ नहीं सकते ।

[११]

कि आरे ! नव जौवन अभिरामा ।
जत देखल तत कहए न पारिअ
छओो अनुपम एक ठामा ।।२।।

हरिन इन्दु अरबिन्द करिनि हेम
पिक बूझल अनुमानी ।
नयन बदन परिमल गति तन रुचि
अओ अति सुललित बानी ।।४।।

कुच जुग उपर चिकुर फुजि पसरल
ता अरुझाएल हारा ।
जनि सुमेरु ऊपर मिलि ऊगल
चाँद बिहिन सब तारा ।।६।।

१–२—अहा, कैसी सुन्दर नई जवानी है ! जितना देखा, उतना कह नहीं सकता, छह अनुपम (पदार्थ) एक ही स्थान पर हैं। ४—इन्दु=चन्द्र। अरविन्द=कमल। करिनि=हथिनी। हेम=सोना। पिक=कोयल। ४—परिमल=सुगन्ध। तन रुचि=शरीर की कान्त। हरिन, चन्द्र, कमल, हथिनी, सोना, कोयल—ये छहो क्रमशः आँख, मुख, शरीर की सुगन्ध, मस्तानी चाल, शरीर की कान्ति और मीठी बोली के उपमान हैं। ५–६—चिकुर=केश। फुजि=खुलकर। बिहिन=विहीन। दोनो कुचों से ऊपर केश खुलकर छिटके हुए हैं, जिनसे (मुक्ता की) माला उलझी हुई है, मानो सुमेरु पर्वत पर चन्द्रमा को छोड़कर (क्योंकि केश रूपी अन्धकार भी है) सब तारे मिलकर उगे हों।

लोल कपोल ललित मनि-कुंडल
अधर बिम्ब अध जाई।
भौंह भमर, नासापुट सुन्दर
से देखि कीर लजाई ।।८।।

भनइ विद्यापति से वर नागरि
आन न पावए कोई।
कंसदलन नाराएन सुन्दर
तसु रंगिनि पए होई ।।१०।।

७—लोल=चंचल। कपोल=गाल। अधर=ओष्ठ। बिम्ब=बिम्बफल (लाल होता है)। अध=अधः, नीचे। अधर बिम्ब अध जाई=ओष्ठ की लालिमा देख बिम्बफल नीचे जाता है, हीन मालूम होता है। ८—भमर=भौंरा। भौंह भमर=भौंहे भ्रमर के समान, काली है। नासापुट=नाक। कीर=सुग्गा। १०—कंसदलन नाराएन=(१) मिथिला के राजा, (२) श्रीकृष्ण। तसु=उसकी। रंगिनि=स्त्री।

"इश्क को दिल में दे जगह 'अकबर'
इल्म से शायरी नहीं आती।"

[१२]

माधव कि कहब सुन्दरि रूपे ।*
कतन जतने बिहि आनि समारल
देखल नयन सरूप ।।२।।

पल्लव-राज चरन-युग सोभित
गति गजराजक भाने ।
कनक-कदलि पर सिंह समारल
तापर मेरु समाने ।।४।।

मेरु उपर दुइ कमल फुलाएल
नाल बिना रुचि पाई ।
मनि-मय हार धार बहु सुरसरि
तें नहि कमल सुखाई ।।६।।

***नोट**—"अद्भुत एक अनुपम बाग" शीर्षक सूरदास का एक प्रसिद्ध पद्य है। साहित्य-संसार में उसकी बड़ी प्रशंसा होती है। सूरदास से डेढ़ सौ वर्ष पहले रची गई यह कविता पढ़कर पाठक विद्यापति की प्रतिभा का अन्दाजा लगावें!

१—कि=क्या। २—बिहि=बिधि, ब्रह्मा। सरूपे=सत्य, प्रत्यक्ष। ४—पल्लव-राज=कमल। ४—कनक-कदलि=सोने के केले का थम्भ (जाँघ की उपमा)। सिंह—(कटि की उपमा)। मेरु=पहाड़ (उभरी हुई छाती)। ५—दुइ कमल=दो कमल (दोनो कुच)। नाल=डंटी। रुचि=शोभा। ६—(कुचों पर) मणि-माला रूपी गंगा की धारा बह रही है। इसीसे—उनके स्रोत में—(बिना नाल के भी दोनो कुच रूपी) कमल नहीं मुरझाते।

अधर बिम्ब सन, दसन दाड़िम-बिजु
रवि ससि ऊगथि पास ।
राहु दूर बसु निग्रर न ग्रावथि
तें नहि करथि गरासे ॥८॥

सारँग नयन बयन पुनि सारँग
सारँग तसु समधाने ।
सारँग उपर उगल दस सारँग
केलि करथि मधु पाने ॥१०॥

भनइ विद्यापति सुन बर जौबति
एहन जगत नहि ग्राने ।
राजा सिवसिंह रूपनराएन
लखिमा देइ रमाने ॥१२॥

७—अधर=ओष्ठ । सन=ऐसा । दसन=दाँत । दाड़िम=अनार । बिजु=बीज, दाना । रवि ससि ऊगथि पासे=सूर्य-चन्द्र एक जगह उगे हैं (चन्द्रमा-से मुख में बाल सूर्य-सा लाल सिंदूर है) । ८—राहु (केश की उपमा) । निग्रर=निकट । ९—सारँग=(१) हरिण । सारँग=(२) कोयल । सारँग=(३) कामदेव । सारँग तसु समधाने=उसके संधान में, कटाक्ष में—काम बसता है । १०—सारँग=(४) कमल (ललाट) । दस (यहाँ बहुवाची) । सारँग=(५) भौंरा (केशों के लटके हुए गुच्छे) । (मुखरूपी) कमल पर भौंरे (रूपी लटें लटकी) है, जो मधुपान की केलि कर रहे है । एहन=ऐसा । आने=दूसरा ।

[१३]

जुगल सैल-सिम हिमकर देखल
एक कमल दुइ जोति रे ॥१॥

फुललि मधुरि फुल सिंदुर लोटाइलि
पाँति बइसलि गज-मोति रे ॥२॥

आज देखल जत के पतिआएत
अपुरुब विहि निरमान रे ॥३॥

बिपरित कनक-कदलि-तर सोभित
थल-पंकज अपरूप रे ॥४॥

तथहु मनोहर बाजन बाजए
जागए मनमिज भूप रे ॥५॥

भनइ विद्यापति पुरुबक पुन तह
ऐसनि भजए रसमन्त रे ॥६॥

बुझए सकल रस राजा सिवसिंह
लखिमा देइ केर कन्त रे ॥७॥

१—जुगल सैल=दो पहाड़ (कुचों की उपमा)। सिम=शिखर पर। हिमकर=चन्द्रमा (मुख की उपमा)। कमल (मुख की उपमा)। दुइ जोति =दो ज्योतियाँ (दो आँखें)। २—मधुरि फुल=एक तरह का लाल फूल। फूली हुई मधुरी (अधर) सिंदुर पर लोटती है, और दाँत क्या है, गजमुक्ताओं की पंक्ति बैठी है। ४—विपरित=उलटा। कनक-कदलि (जाँघ की उपमा)। थल-पंकज=स्थल-कमल (पैरों की उपमा); ५—तथहु=वहाँ भी। मनसिज= कामदेव। ६—पुन=पुण्य। ऐसनि=ऐसा। रसमंत=रसज्ञ, सुरसिक।

[१४]

चाँद-सार लय मुख घटना करु
लोचन चकित चकोरे।
अमिअ धोए आँचर धनि पोछल
दह दिसि भेल उँजोरे ॥२॥

कामिनि कओने गढ़ली।
रूप सरूप हमे कहए न पारिअ
लोचन लागि रहली ॥४॥

गुरु नितम्ब भरे चलए न पारए
माझहि खीनि निमाई।
भाँगि जाएत मनसिज धरि राखलि
त्रिवलि लता अरुझाई ॥६॥

भनइ विद्यापति अदभुत कौतुक
ई सब वचन सरूपे।
रूपनराएन ई रस जानथि
सिवसिंह मिथिला भूपे ॥८॥

१-२—चन्द्रमा का सार भाग लेकर (विधाता ने राधा के) मुख की रचना की, (जिसे देखते ही) चकोर की आँखें चकित हुईं। बाला ने (अपने मुख-चन्द्र को) अंचल से पोंछकर जो अमृत को वहाया, वही (चाँदनी के रूप मे) दशो दिशाओं में प्रकाशित हुआ। ३—कओने=किसने। गढ़ली=गढ़ा, रचना की। ४—भरे=भार से। माझहि=मध्य भाग में (कटि)। खींनि=क्षीण, पतली। निमाई=निर्माण की। ६—त्रिबलिलता=त्रिबली=पेट में पड़ी तीन रेखाएँ।

[१५]

सुधामुखि के बिहि निरमलि बाला ।
अपरुब रूप मनोभवमंगल
त्रिभुवन विजयी माला ।।२।।

सुन्दर बदन चारु लोचन-युग
काजर-रंजित भेला ।
कनक-कमल पर काल-भुजंगिनि
सँग दुइ खंजन खेला ।।४।।

नाभि-विवर सएँ निकसि रोमावलि
भुजगि निसास-पिआसा ।
नासा खगपति-चंचु भरमें करु
कुच-गिरि-संधि निवासा ।।६।।

१—के बिहि=किस विधाता ने । निरमलि=निर्माण किया । मनोभव-मंगल=कामदेव का शुभ स्वरूप—"मनोभवमंगलकलशसहोदरे"—गीतगोविन्द । त्रिभुवन विजयी माला=तीनो भुवनों को पराजित करनेवाली माला के समान । ३-४—बदन=मुखड़ा । भेला=हुआ । सुन्दर मुख में सुन्दर काजल लगी आँखें है, मानो सोने के कमल (मुख) में काल-सर्पिणी (अंजन) खजन के साथ क्रीड़ा कर रही हो । ५-६—विवर=बिल, छेद । सएँ=से । रोमावलि=पंक्तिबद्ध बाल । भुजगि=सर्पिणी । निसास=साँस । खगपति=गरुड़ । चंचु=चोंच । नाभि रूपी बिल से पंक्तिबद्ध बालरूपी सर्पिणी (नायिका की सुगंधित)

तिन बान मदन तेजल तिन भुवने
अबधि रहल दुइ बाने ।
बिधि बड़ दारुन बधए रसिकजन
सोंपल तोहर नयने ।।८।।

भनइ विद्यापति सुन बर जौबति
ई रस केओ पए जाने ।
राजा सिवसिंह रूपनराएन
लखिमा देइ रमाने ।।१०।।

साँसों की प्यास में आगे बढ़ी, किन्तु नुकीली नाक को गरुड़ की चोंच समझ कर डर से कुच रूपी दो पर्वतों के बीच के (संकीर्ण) मिलन-स्थान में आ बसी। ७-८—तिन=तीन। तेजल=छोड़ा। अबधि=अवशिष्ट, बाकी। रहल=रहा। बधए=बधने को, हत्या करने को। तोहर=तुम्हारे। नयाने=आँखें। कामदेव को पंचबाण कहते हैं, सो मदन ने अपने (पाँच बाणों में से) तीन वाण तो तीनो लोकों में छोड़े, शेष उसके दो वाण रह गये। ब्रह्मा वड़ा ही निष्ठुर है, (उन बचे हुए दो वाणों को) रसिको की हत्या करने के लिए तुम्हारे नयनों को सौंप दिया। ९—ई रस केओ पए जाने=यह रस कोई-कोई ही जानता है। १०—देइ=देवी। रमाने=रमण, पति।

"हृदय-सिन्धु मति सीप समाना। स्वाती सारद कहहि सुजाना।।
जो बरसै बर बारि-बिचारू। होहिं 'कवित' चिन्तामनि चारू।।"

[१६]

जाइत देखलि पथ नागरि सजनि गे
आगरि सुबुधि सेयानि ।
कनक-लता सनि सुन्दरि सजनि गे
बिहि निरमाओलि आनि ।।२।।

हस्ति-गमन जकाँ चलइत सजनि गे
देखइत राज-कुमारि ।
जनिकर एहनि सोहागिनि सजनि गे
पाओल पदारथ चारि ।।४।।

नील वसन तन घेरल सजनि गे
सिर लेल चिकुर सँभारि ।
तापर भमरा पिबय रस सजनि गे
बइसल पाँखि पसारि ।।६।।

केहरि सम कटि-गुन अछि सजनि गे
लोचन अम्बुज धारि ।
विद्यापति कवि गाओल सजनि गे
गुन पाओल अवधारि ।।८।।

१—नागरि=नगर-निवासिनी; सुचतुरा। आगरि=अग्रगण्या। २—सनि=समान। निरमाओलि आनि=लाकर बनाया। ३—जकाँ=ऐसा। ४—जनिकर=जिसकी। एहनि=ऐसी। ५—चिकुर=केश। ६—तापर=उसपर। भमरा=भौंरा। ७—केहरि=सिंह। अछि=(अस्ति) है। अम्बुज=कमल। धारि=धारण करो, समझो (?)। अवधारि=निश्चय करके।

[१७]

चिकुर-निकर तम-सम, पुनु
आनन पुनिम ससी ।
नयन-पंकज के पतिआओब
एक ठाम रहु बसी ॥२॥

आज मएँ देखलि बारा ।
लुबुध मानस, चालक मयन
कर की परकारा ॥४॥

सहज सुन्दर गोर कलेबर
पीन पयोधर सिरी ।
कनक-लता अति बिपरित
फरल जुगल गिरी ॥६॥

भन विद्यापति विहिक घटन
के न अद्‌भुत जान ।
राए सिवसिंह रूपनराएन
लखिमा देइ रमान ॥८॥

१–२—चिकुर-निकर=केश-समूह। पूनिम=पूर्णिमा। ठाम=स्थान। केश-समूह अन्धकार के समान हैं, फिर, मुख पूर्णिमा के चन्द्र के समान और नयन कमल के (समान)—कौन विश्वास करेगा (कि ये सब परस्पर-विरोधी पदार्थ) एक स्थान पर बसते हैं। मएँ=मैंने। बारा=बाला। ४—लुबुध=लुब्ध, अनुरक्त। चालक=प्रेरित करनेवाला। मयन=काम। की परकारा=क्या उपाय। ५—सिरी=श्री, शोभायुक्त। ६—फरल=फला। ७—घटन=सृष्टि।

[१८]

सजनी, अपरुब पेखलि रामा ।
कनक-लता अवलम्बन ऊअल
हरिन-हीन हिमधामा ॥२॥

नयन-नलिन दुइ अंजन रंजित
भौंह बिभंग-बिलासा ।
चकित चकोर-जोर विहि बाँधल
केवल काजर पासा ॥४॥

गिरिबर गरुअ पयोधर-परसित
गिम गज-मोतिम हारा ।
काम कम्बु भरि कनक-सम्भु परि
ढारय सुरसरि-धारा ॥६॥

पैसि पयाग जाग सत जागए
सोइ पावए वहुभागी ।
विद्यापति कह गोकुल-नायक
गोपी जन अनुरागी ॥८॥

१—अपरुब=अपूर्व । पेखलि=देखा । रामा=सुन्दरी । २—कनकलता =सोने की लता (देह) । ऊअल=उदित हुआ । हरिन-हीन हिम-धामा= निष्कलंक चन्द्र (मुख) । ३—नलिन=कमल । भौह बिभंग-बिलासा=कुटिल कटीली भौंहों—भवों में भाव-भंगी । ४—जोर=जोड़ा । बाँधल=बाँधा है । पासा=पाश में, रस्सी में । ५-६—गिरिबर-गरुअ=पहाड़ के ऐसे भारी । पयोधर=कुच । गिम=ग्रीवा, कण्ठ । गजमोतिम=गजमुक्ता की । कम्बु=

[१६]

कनक-लता अरबिन्दा ।
दमना माझ उगल जनि चन्दा ।।२।।

केओ कह सैबल छपला ।
केओ बोल नहि नहि मेघ झपला ।।४।।

केओ कह भमए भमरा ।
केओ बोल नहि नहि चरए चकोरा ।।६।।

संसय परु सब देखी ।
केओ बोलए ताहि जुगुति बिसेखी ।।८।।

भनइ विद्यापति गावे ।
बड़ पुने गुनमति पुनमत पावे ।।१०।।

शंख। कनक=सोना। पहाड़ ऐसे उत्तुंग कुचों को स्पर्श करती हुई गले में गजमुक्ताओं की माला है, मानों, कामदेव शंख (कण्ठ) मे भरकर, सोने के महादेव (कुचों) पर गंगा की धारा (माला) ढार रहा हो। ७—पैसि=पैठकर, जाकर। पयाग=प्रयाग में। जाग=यज्ञ। सत=शत, सौ। (जो) प्रयाग में जाकर सैकड़ो यज्ञ करे, वही बहुभाग्यशाली (इस रमणी को) प्राप्त करे।

१, २—दमना=द्रोणलता। माझ=में। उगल=उदित हुआ। जनि=मानों। सोने की लता पर कमल खिला है या द्रोणलता पर चन्द्रमा उगा हुआ है। ३—केओ कह=कोई कहता है। सैबल=सेंवार। छपला=छिपा हुआ। ४—झपला=ढँका हुआ। ५—भमए भमरा=भौंरा भ्रमण कर रहा है। ६—चरए=चर रहा है, दाना चुग रहा है। ७—परु=पड़ गया। १०—पुने=पुण्य से। पुनमत=पुण्यवंत।

[२०]

कबरी-भय चामरि गिरि-कन्दर
मुख-भय चाँद अकासे ।
हरिनि नयन-भय, सर-भय कोकिल
गति-भय गज बनवासे ।।२।।

सुन्दरि, किए मोहि सँभासि न जासि ।
तुअ डर इह सब दूरहि पड़ाएल
तोहें पुन काहि डरासि ।।४।।

कुच-भय कमल-कोरक जल मुदि रहु
घट परबेस हुतासे ।
दाड़िम सिरिफल गगन बास करु
सम्भु गरल करु ग्रासे ।।६।।

भुज-भय पंक मृनाल नुकाएल
कर-भय किसलय काँपे ।
कवि-सेखर भन कत कत ऐसन
कहब मदन परतापे ।।८।।

१--कबरी=केश। चामरि=चँवरवाली गौ। २--सर=स्वर, बोली। ३--किए=क्यों। सँभासि=बातचीत करके। जासि=जाती हो। सुन्दरी, क्यों मुझसे बातें नहीं कर जाती? ४--पड़ाएल=भाग गया। ५--कमल-कोरक=कमल की कली। घट परबेस हुतासे=घड़ा अग्नि में प्रवेश करता है। ६--दाड़िम=अनार। सिरिफल=बेल। गगन=आकाश। सम्भु=शिव। गरल=विष। मृनाल=कमल-नाल। नुकाएल=छिप गया। कर=हाथ। किसलय=नवीन पत्ता।

[२१]

रामा, अधिक चंगिम भेलि ।
कतन जतन कत अदभुत, बिहि निधि तोहि देलि ॥२॥

सुन्दर बदन सिंदुर-बिन्दु सामर चिकुर भार ।
जनि रवि-ससि संगहि ऊगल पाछु कए अंधकार ॥४॥

चंचल लोचन बाँक निहारए अंजन शोभा पाए ।
जनि इन्दीबर पवन-पेलल अलि भरें उलटाए ॥६॥

उनत उरोज चीरें झपाबए पुनु पुनु दरसाए ।
जइओ जतने गोअए चाहए हिमगिरि न नुकाए ॥८॥

एहनि सुन्दरि गुनक आगरि पुनें पुनमत पाव ।
ई रस बिन्दक रूपनराएन कवि विद्यापति गाव ॥१०॥

१—रामा=सुन्दरी । चंगिम=**शोभामयी** । भेलि=हुई । २—**कतन**= कितना । कत=कितना । बिहि=विधि, ब्रह्मा । निधि=**खजाना** । देलि=दिया । ३—बदन=मुख । सामर=काला । चिकुर=केश । ४— ऊगल=उदित हुआ । पाछु=पीछे । कए=करके । ५—बाँक=तिरछा । निहारए=देखती है । ६—इन्दीबर=कमल । पवन-पेलल=पवन द्वारा प्रेरित । अलि भरें=भौरे के भार से । उलटाए=उलट रहा हो । ७—उनत= उन्नत, उभड़े हुए । उरोज=कुच । चीरें=चीर से, साड़ी से । ८— जइओ=यद्यपि । जतने=यत्न से । गोअए=गोपन करना, छिपाना । हिम= बर्फ, साड़ी । गिरि=पहाड़ (कुच) । अथवा हिमगिरि=हिमालय पहाड़ (कुच) । नुकाए=छिपता । ९—एहनि=ऐसी । पुनें=पुण्य से ही । पुनमत=पुण्यवन्त । १०—बिन्दक=ज्ञाता ।

[२२]

सहज प्रसन मुख दरस हृदय सुख
लोचन तरल तरङ्ग ।
अकास पताल बस सेहो कइसे भेल अस
चाँद सरोरुह संग ।।
बिहि निरमलि रामा दोसरिल छमि समा
भल तुलाएल निरमान ।।३।।

कुच-मंडल सिरि हेरि कनक-गिरि
लाजे दिगन्तर गेल ।
केओ अइसन कह सेहो न जुगुति सह
अचल सचल कइसे भेल ।।५।।

माझ-खीनि तनु भरे भाँगि जाए जनु
बिहि अनुसए भेल साजि ।
नील पटोर आनि अतिसे सुदृढ़ जानि
जतने सिरिजु रोमराजि ।।७।।

भन कवि विद्यापति काम-रमनि रति
कौतुक बुझ रसमन्त ।
सिरि सिवसिंह राउ पुरुब सुकृतें पाउ
लखिमा देइ रानि कन्त ।।९।।

३—लछमि=लक्ष्मी । तुलाएल=तुल्य हुआ, समान हुआ । ४—सिरि=श्री, शोभा । ६—माझ-खीनि=बीच में पतली (कटि) । भरे=बोझ से । भाँगि जाए=टूट जाय । अनुसए=चिन्ता । ६—पटोर=रेशम । अतिसे=अतिशय, परम । सिरिजु=बनाया । रोमराजि=केश-समूह ।

सद्यःस्नाता

[२३]

कामिनि करए सनाने ।
हेरितहि हृदय हनए पँचबाने ॥२॥

चिकुर गरए जलधारा ।
जनि मुख-ससि डरें रोअए अँधारा ॥४॥

कुच-जुग चारु चकेवा ।
निअ कुल मिलत आनि कोने देवा ॥६॥

ते संकाएँ भुज पासे
बाँधि धएल उड़ि जाएत अकासे ॥८॥

तितल बसन तनु लागू ।
मुनिहुक मानस मनमथ जागू ॥१०॥

सुकवि विद्यापति गावे ।
गुनमति धनि पुनमत जन पावे ॥१२॥

२—हेरितहि=देखते ही । हनए=मारता है । पँचबाने=कामदेव । ३, ४—चिकुर=केश । गरए=गिरती है । जनि=मानों । रोअए=रोता है । अँधारा=अंधकार । केशों से जल की धारा गिर रही है, मानों (मुखरूपी) चन्द्रमा के डर से (केश रूपी) अंधकार रो रहा हो । ६—निअ=निज । मिलत=मिलेगा । आनि कोने देवा=कौन ला देगा । ७, ८—कहीं ये कुच रूपी चकेवा आकाश में न उड जायँ, इसी शंका से अपनी भुजाओं से उन्हें बाँध रक्खा है । ९—तितल=भीगा हुआ । १०—मानस=मन । मनमथ=कामदेव । धनि=रमणी । १२—जन=पुरुष ।

[२४]

आजु मोर सुभ दिन भेला ।
कामिनि पेखलि सनानक बेला ॥२॥

चिकुर गरए जलधारा ।
मेह बरिस जनु मोतिम हारा ॥४॥

बदन पोंछल परचूरे ।
माजि धएल जनि कनक-मुकूरे ॥६॥

तें उधसल कुच-जोरा ।
पलटि बैसाम्रोल कनक-कटोरा ॥८॥

निबि-बंध कएल उदेस ।
विद्यापति कह मनोरथ सेस ॥१०॥

१—मोर=मेरा। भेला=हुम्रा । पेखलि=देखा । बेला=समय । ३, ४—चिकुर=केश। गरए=गिरती है।—(काले) केशों से (उज्ज्वल) जल की धारा गिर रही है, मानों बादल (केश) मोती की माला (जलधारा) की वर्षा कर रहे हों। ५—बदन=मुख। पोंछल=पोंछा, परिमार्जित किया। परचूरे=प्रचुर रूप से, अच्छी तरह। ६—माजि धएल=माँज कर रख दिया, साफ कर रख दिया। कनक मुकूरे=सोने का दर्पण। ७—तें=उससे—(मुख धोते समय)। उधसल=उकस गया, प्रकट हुआ। जोरा=जोड़ा, युगल। ८—पलटि=उलटकर। बैसाम्रोल=बिठला दिया, रख दिया। ९—निबि=कोंचा, फुफनी। कएल=किया। उदेश=इंगित। १०—सेस=चरम सीमा पर पहुँचा।

[२५

जाइत पेखलि नहाएलि गोरी ।
कत सएँ रूप धनि आनल चोरी ॥२॥

केस निगारइत बह जल-धारा ।
चमर गरए जनि मोतिम-हारा ॥४॥

तीतल अलक बदन अति सोभा ।
अलिकुल कमल बेढ़ल मधुलोभा ॥६॥

नीर निरंजन लोचन राता ।
सिंदुर मंडित जनि पंकज-पाता ॥८॥

सजल चीर रह पयोधर-सीमा ।
कनक-बेल जनि पड़ि गेल हीमा ॥१०॥

ओ नुकि करतहिं चाहिं किए देहा (?) ।
अबहिं छोड़ब मोहिं तेजब नेहा ॥१२॥

ऐसन रस नहिं पाओब आरा ।
इथे लागि रोइ गरए जल धारा ॥१४॥

विद्यापति कह सुनह मुरारि ।
बसन लागल भाव रूप निहारि ॥१६॥

२—कतसएँ=कहाँ से। आनल चोरी=चुरा लाई। ३—निगारइत=गारते समय; पानी निचोड़ते समय। ४—चमर=चँवर से। ५—अलक=केश। तीतल=भींगा हुआ। ६—अलिकुल=भ्रमरगण। बेढ़ल=घेर लिया। ७—पानी में स्नान करने के कारण आँखें अंजन-हीन और लाल हो गई हैं। ८—पंकज-पाता=कमल का पत्ता। ९—पयोधर-सीमा=कुचों पर। १०—

[२६]

नहाए उठलि तीरे राइ कमलमुखि
समुख हेरल वर कान ।
गुरुजन संग लाज धनि नत-मुखि
कइसन हेरब बयान ॥२॥

सखि हे, अपरुब चातुरि गोरि ।
सब जन तेजि कए अगुसरि संचरु
आड़ बदन तँह मोड़ि ॥४॥

तहाँ पुन मोति-हार तोरि फेंकल
कहइत हार टुटि गेल ।
सब जन एक-एक चुनि संचरु
स्याम-दरस धनि लेल ॥६॥

नयन-चकोर कान्ह मुख ससि-वर
कएल अमिय-रस-पान ।
दुहु दुहु दरसन रसहु पसारब
कवि विद्यापति भान ॥८॥

कनक-बेल=सोने का बिल्व फल। पड़ि गेल=पड़ गया। हीमा=बर्फ। ११—किए=क्यों। १३–ऐसन=ऐसा। आरा=अन्यत्र। १४–इथे लागि=इसलिए।

१—राइ=राधा। हेरल=देखा। कान=कृष्ण। २—नत=नीचे। बयान=बदन, मुख। ४—अगुसरि संचरु=अग्रसर हो चलने लगी। आड़=ओट। ५—तोरि फेंकल=तोड़कर फेंक दिया। टुटि गेल=टूट गया। ६—लेल=लिया। ७—कएल=किया। अमिय=अमृत।

प्रेम-प्रसंग

श्रीकृष्ण का प्रेम

[२७]

पथ-गति नयन मिलल राधा कान ।
दुहु मन मनसिज पुरल संधान ॥२॥

दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर ।
समय न बूझए अचतुर चोर ॥४॥

बिदगधि संगिनी सब रस जान ।
कुटिल नयान कएल समधान ॥६॥

चलल राज-पथ दुहु उरझाई ।
कह कवि-सेखर दुहु चतुराई ॥८॥

१, २—पथगति=राह में जाते हुए। कान=कृष्ण। मनसिज=कामदेव। पुरल=पूरा किया। संधान=बाण का संचालन। पथ में जाते हुए राधाकृष्ण दोनो आँखों से मिले—एक दूसरे को देखा। दोनों के मन में कामदेव ने अपने बाण का संचालन किया—दोनों के हृदय में काम का संचार हुआ। ३—हेरइत =देखते ही। भेल भोर=बेसुध हुए। ४—समय न बूझए=अवसर नहीं समझता। ५—विदगधि=विदग्ध, सुरसिका। ६—कुटिल नयान=टेढ़ी चितवन से—इशारे से। कएल=कर दिया। समधान=सावधान। ७—उरझाई=उलझकर।

—०—

"चरन धरत चिंता करत, चहत न नेकहु सोर।
ढूंढ़त हैं सुबरन सदा, कवि व्यभिचारी चोर॥"

[२८]

सजनी, भल कए पेखल न भेल ।
मेघ-माल सँग तड़ित-लता जनि
हिरदय सेल दए गेल ॥२॥
आध आँचर खस आध वदन हँस
आधिहि नयन तरङ्ग ।
आध उरज हेरि आध आँचर तरे
तवधरि दगधे अनङ्ग ॥४॥
एके तनु गोरा कनक कटोरा
अतनु कोंचला उपाम (?) ।
हार हारल मन जनि बूझि ऐसन
फाँस पसारल काम ॥६॥
दसन मुकुता पाँति अधर मिलाएल
मृदु मृदु कहितहि भासा ।
विद्यापति ! कह अतए से दुख रह
हेरि हेरि न पूरल आसा ॥८॥

१—भल कए=अच्छी तरह । पेखल न भेल=देख न सका । २—संग=संग में, साथ में । तड़ित लता=बिजली । जनि=मानो । ३—नयन तरङ्ग=कटाक्ष । ४—उरज=कुच । तवधरि—तब से । दगधे=जलता है । अनंग=काम । ५—कनक कटोरा=सोने का कटोरा (कुच) । अतनु=कामदेव । एक तो शरीर गौरवर्ण है और उसपर से (कुच) मानों मदन (अतनु) सोने के कटोरे में कोंच (वलपूर्वक भर) दिया गया है, ऐसा प्रतीत होता है । ६—जनि बूझि ऐसन=ऐसा समझ पड़ता है मानों । ७—दसन=दाँत । अधर=ओठ । भासा=भाषा, वचन । ८—अतए=इसीलिए ।

[२९]

ससन-परस खसु अम्बर रे
देखल धनि देह।
नव जलधर-तर चमकए रे
जनि बिजुरी-रेह ॥२॥

आज देखलि धनि जाइत रे
मोहि उपजल रंग।
कनक-लता जनि संचर रे
महि निर अवलम्ब ॥४॥

ता पुन अपरुब देखल रे
कुच-जुग अरबिन्द।
बिगसित नहि किछु कारन रे
सोझाँ मुख-चन्द ॥६॥

विद्यापति कवि गाओल रे
रस बुझ रसमन्त।
देवसिंह नृप नागर रे
हासिनि देइ कन्त ॥८॥

१—ससन=श्वसन, पवन। परस=स्पर्श से। खसु=गिर पड़ा। अम्बर=कपड़ा, अंचल। देखल=देखा। धनि=बाला। २—जलधर=बादल। तर=तले, नीचे। जनि=मानों। रेह=रेखा। ३—जाइते=जाती हुई। उपजल रंग=प्रतीत हुआ। ४—संचर=चल रही है। निर अवलम्ब=बिना अवलम्ब का। ५—ता=उसपर भी। पुन=पुनः। जुग=दो। अरबिन्द=कमल। ६—बिगसित=खिला हुआ। सोझाँ=सम्मुख।

[३०]

अलखित मोहि हेरि बिहुँसलि थोर।
जनि रयनी भेल चाँद इँजोर ॥२॥

कुटिल कटाख लाट पड़ि गेल।
मधुकर - डम्बर अम्बर भेल ॥४॥

काहिक सुन्दरि के ताहि जान।
आकुल कए गेल हमर परान ॥६॥

लीला कमल भमर धरु बारि।
चमकि चललि गोरि चकित निहारि ॥८॥

तें भेल बेकत पयोधर सोभ।
कनक कमल हेरि काहि न लोभ ॥१०॥

आध नुकाएल आध उगास।
कुच कुम्भे कहि गेलि अप्पन आस ॥१२॥

से अब अमिल निधि दए गेल संदेस।
किछु नहि रखलन्हि रस परिसेस ॥१४॥

भनइ विद्यापति दुहु मन जागु।
बिसम कुसुम-सर काहु जनु लागु ॥१६॥

१—अलखित=अलक्ष्य रूप से=बिना दूसरे के देखे। हेरि=देखकर। बिहुँसलि=मुस्कुराई। २—रयनी=रजनी, रात। इँजोर=उजाला। ५—काहिक=किसकी। के=कौन। ७—धरु बारि=निवारण कर—कौतुक से भ्रमर को कमल से निवारण कर। ९—तें=इससे। बेकत=व्यक्त, प्रकट। ११, १२—नुकाएल=छिपा हुआ। उगास=प्रकट। कुम्भ=घड़ा। आधा छिपा और आधा प्रगट कुच-कुम्भ (दिखाकर) वह अपनी आशा कह गई (कि मिलूंगी)। १३—अमिल=अप्राप्य। निधि=खजाना।

[३१]

अम्बर विघटु अकामिक कामिनि
कर कुच झाँपु सुछन्दा।
कनक-सम्भु जनि अनुपम सुन्दर
दुइ पंकज दस-चन्दा ॥२॥

कत रूप कहब बुझाई।
मन मोर चंचल लोचन विकल भेल
ओतहि अनाइत आई ॥४॥

आड़ वदन कए मधुर हास दए
सुन्दरि रहु सिर नाई।
अओंधा कमल कान्ति नहि पूरए
हेरइत जुग बहि जाई ॥६॥

भनइ विद्यापति सुनु बर जौवति
पुहबी नव पँचबाने।
राजा सिवसिंह रूपनराएन
लखिमा देइ रमाने ॥८॥

१४—परिसेस=परिशेष, बाकी। १६—बिसम=विषम, कठोर। कुसुमसर=कामदेव का शर।

१—अम्बर=वस्त्र, अंचल। बिघटु=हट गया। अकामिक=अकस्मात्। कर=हाथ। झाँपु=ढँक लिया। सुछन्दा=सुन्दर। अकस्मात् अंचल हट गया, (तब) कामिनी ने अपने दोनों हाथों से सुन्दर कुचों को ढक लिया। २—कनक-सम्भु=सोने के महादेव (कुच)। दुइ पंकज=दो कमल (दोनों

[३२]

गेलि कामिनि गजहु गामिनि
बिहसि पलटि निहारि ।
इन्द्रजालक कुसुम-सायक
कुहकि भेलि वर नारि ।।२।।

जोरि भुज जुग मोरि बेढ़ल
ततहि बदन सुछंद ।
दाम-चम्पक काम पूजल
जइसे सारद चंद ।।४।।

हाथ)। दस चंदा=चद्रमा (दस नख)। ३—कत=कितना। ४—अनाइत=अनायत्त, विवश। विवश हो वही दौडता है। ५—आड़=ओट। ६—अओंधा=उलटकर रक्खा हुआ। जुग बहि जाई=युग बीत जाते हैं। ७—पुहवी=पृथ्वी। नब=नवीन। पँचबाने=कामदेव। ८—रमाने=रमण, पति।

१—गेलि=गई। गजहु गामिनि=हाथी के समान मस्तानी चालवाली। बिहसि=मुस्कुराकर। निहारि=देखकर। २—इन्द्रजालक=ऐन्द्रजालिक, जादूगर। कुसुम-सायक=कामदेव। कुहकि=मायाविनी नटी। भेलि=हुई। मानों वह श्रेष्ठ नारी काम ऐन्द्रजालिक की मायाविनी नटी हो। अर्थात् उसकी हँसी ने अद्भुत चमत्कार का अनुभव कराया। ३, ४—मोरि=मोड़कर। बेढ़ल=घेरा। ततहि=वहीं। बदन=मुख। दाम=रस्सी (माला)। चम्पक=चम्पे की। जइसे=जैसे। सुछन्द=सुन्दर। दोनों हाथों को जोड़कर उनसे अपना सुन्दर मुख लपेट लिया, मानों कामदेव ने चम्पे की माला

उरहि अंचल झाँपि चंचल
आध पयोधर हेरु।
पवन पेलल सरद-घन जनि
बेकत कएल सुमेरु ॥६॥

पुनहि दरसन जिब जुड़ाएब
टुटब बिरहक ओर ।
चरन जाबक हृदय पाबक
दहए सब अँग मोर ॥८॥

भन विद्यापति सुनह जदुपति
चित्त थिर नहि होए।
से जे रमनी परम गुनमनि
पुनहि मीलब तोए ॥१०॥

(हाथ) से (शरद-चन्द्र मुख) की पूजा की हो। ५, ६—उरहि=वक्षःस्थल को। झाँपि=ढँककर। पयोधर=स्तन, कुच। हेरु=देखती है। पवन पेलल=हवा से प्रेरित हुए। जनि=मानों। बेकत=व्यक्त, प्रकट। कएल=किया। सुमेरु=पर्वत। वक्षःस्थल को चंचल अंचल से ढाँककर आधे कुच को देखती हैं, मानों पवन द्वारा हटाए शरद के मेघ (अंचल) ने सुमेरु (कुच) को प्रकट किया हो—जिस प्रकार पवन के झोंके से मेघ हट जाने पर सुमेरु देख पड़ता है उसी प्रकार···। ७—जिब=प्राण। जुड़ाएब=शीतल होंगे। ओर=सीमा। ८—जाबक=महावर। पावक=आग। दहए=जलाती है। उसके पैर का महावर (मेरे) हृदय में आग (लगा रहा) जिससे है मेरे सब अंग जल रहे हैं। १०—से=वह। पुनहि=पुण्य, से ही। मीलब=मिलेगी। तोए=तुम्हें।

[३३]

महजहि आनन सुन्दर रे
भौंह सुरेखलि आँखि।
पंकज मधु पिवि मधुकर रे
उड़ए पसारल पाँखि ।।२।।

ततहि धाओल दुहु लोचन रे
जतहि गेलि बर नारि ।
आसा लुबुधल न तेजए रे
कृपनक पाछ भिखारि ।।४।।

इंगित नयन तरंगित रे
वाम भौंह भेल भंग ।
तखन न जानल तेसर रे
गुपुत मनोभव रंग ।।६।।

१—आनन=मुख । भौह सुरेखलि=भौंहों द्वारा अच्छी तरह चित्रित की गई, सुन्दर बनाई गई । २—पंकज=कमल (मुख)। मधु=पुष्परस । पिवि =पीकर । मधुकर=भौरा (नयन) । उड़ए=उड़ने को । पसारल=पसार दिया, फैला दिया। पाँखि=पंख पर (भौंह) । ३—ततहि=वहीं ।धाओल= दौड़ गया । जतहि=जहाँ । गेलि=गई । ४—आसा लुबुधल=आशा में लुब्ध हुआ, चूर हुआ । आशा में चूर भिखारी जिस प्रकार कृपण (सूम) का पीछा भी नहीं छोड़ता । ५—इंगित=इशारे से । तरंगित=चंचल । बाम=बाईं । भौह भेल भंग= भौंह भंग हुई-भवें टेढ़ी कीं। ६—तखन=उस समय । तेसर=तीसरा

चन्दन चरचु पयोधर रे
ग्रिम गज मुकुताहार ।
भसम भरल जनि संकर रे
सिर सुरसरि जलधार ।।८।।

वाम चरन अगुसारल रे
दाहिन तेजइत लाज ।
तखन मदन सर पूरल रे
गति गंजए गजराज ।।१०।।

आज जाइत पथ देखलि रे
रूप रहल मन लागि ।
तेहिं खन सब गुन गौरब रे
सब धैरज गेल भागि ।।१२।।

व्यक्ति । मनोभव=कामदेव । ७—चरचु=चर्चित किया । पयोधर=कुच, स्तन । ग्रिम=गले में । भरल=भरा हुआ । सुरसरि=गंगा । कुच चन्दन से चर्चित हैं, जिनपर गजमुक्ताओं की माला (झूल रही) है, मानों भस्म का लेप किये हुए महादेव के सिर पर गंगा की धारा (बह रही) हो । ९—अगुसारल=अग्रसर किया, आगे किया । दाहिन तेजइत लाज=दाहिने पैर को आगे रखते लज्जा होती है । १०—तखन=उस समय । मदन=कामदेव । गति=चाल । गंजए=पराजित करती है । गजराज=हाथी । ११—रूप रहल मन लागि=रूप मन से लग रहा है—सौंदर्य हृदय में बैठ गया । १२—खन=क्षण । गेल=गये ।

रूप लागि मन धाग्रोल रे
कुच-कंचन-गिरि साँधि।
तें अपराधें मनोभव रे
ततहि धएल जनि बाँधि ॥१४॥

विद्यापति कवि गाग्रोल रे
रस बूझए रसमंत।
रूपनराएन नागर रे
लखिमा देइ सुकंत ॥१६॥

१३, १४—लागि=लिए। कुच-कंचन-गिरि साँधि=स्तन रूपी दो सोने के पहाड़ों के सन्धि-स्थान में—बीच में। तें=उस। बाँधि धएल=बाँध रक्खा। रूप के लिए—सौन्दर्य के लोभ में मेरा मन उसके कुच-रूपी दो पहाड़ों के बीच में जा दौड़ा, मानों इसी अपराध से कामदेव ने उसे वहीं बाँध रक्खा। १५—बूझए=जानते हैं। रसमन्त=रसिक।

"हे सज्जनाः शृणुत मद्वचनं समस्ता,
स्वर्गे सुधाऽस्ति सुलभा न तु सा भवद्भिः।
कुर्मस्तदत्र भवतामुपकारकारी
काव्यामृतं पिबत तत् परमादरेण॥"

[३४]

पथ-गति पेखलि मएँ राधा ।
तखनुक भाव परान पए पीड़ए
रहल कुमुद-निधि साधा ।।२।।

ननुआ नयन नलिन जनि अनुपम
बंक निहारए थोरा ।
जनि सृंखल में खगवर बाँधल
दीठि नुकाएल मोरा ।।४।।

आध बदन ससि विहसि देखाओल
आध पिहल निअ बाहू ।
किछु एक भाग बलाहक झाँपल
किछुक गरासल राहू ।।६।।

१, २—पथ-गति=पथ में जाती हुई। पेखलि=देखा। मएँ=मैं। तखनुक=उस समय का। परान पए=प्राण भी। पीड़ए=पीड़ित कर रहा है। रहल=रह गया। कुमुद-निधि=कुमुद का सर्वस्व (चन्द्र)। साधा=साध, इच्छा। मैंने राह में जाती हुई राधा को देखा। उस समय की उसकी भावभंगी ने प्राणों तक को पीड़ित किया, उस चन्द्र (मुख) को देखने की साध बनी ही रह गई। ३—ननुआ=सुन्दर। नलिन=कमल। जनि=जैसे। बंक=टेढ़ा। निहारए=देखती है। ४—सृंखल=शृंखला, जंजीर। खगवर=पक्षिश्रेष्ठ, खंजन। बाँधल=बाँधा। नुकाएल=छिप गया। ५-बदन-ससि=मुखरूपी चन्द्रमा। देखाओल=दिखलाई। पिहल=ढाँप दिया। निअ=निज। बाहू=बाँह से, भुजा से। ६—झाँपल=ढाँप दिया। बलाहक=मेघ।

कर जुग पिहित पयोधर-अंचल ।
चंचल देखि चित भेला ।
हेम कमल जनि अरुनित चंचल
मिहिर-तरे निन्द गेला ।।८।।

भनइ विद्यापति सुनह मधुरपति
इह रस की पए बाधा ।
हास दरस रस सबहु बुझाएल
नाल कमल दुइ आधा ।।१०।।

गरासल=ग्रस लिया । ७, ८—पिहित=आवृत, ढँका । पयोधर=स्तन । अंचल=विभाग, तट । हेम=सोना । जनि=मानों । अरुनित=लालिमा-युक्त । तरे=नीचे । मिहिर=सूर्य । निन्द गेला=सो रहा । दोनो हाथों से ढँके हुए स्तनों के तट-भाग देखकर चित्त चंचल हो गया, मानों सोने के कमल (दोनो कुच) लालिमा-युक्त चंचल सूर्य (लाल हथेली) के नीचे सो रहे हों । ९, १०—सुनह=सुनो । मधुर-पति=मथुरापति । इह=यह । की=कौन । हास=हँसी । दरस=दर्शन । बुझाएल=बूझ पड़ा, मालूम हुआ । नाल=(कमल की) डंटी । हे मथुरापति श्रीकृष्ण, (तुम्हारे) इस रस में कौन बाधा होगी ? तुम्हारी पारस्परिक हँसी और दर्शन के रस से ही सबको मालूम हो गया कि मृणाल और कमल (तुम्हारे हाथ रूपी मृणाल और उसके कुच रूपी कमल) ये दोनो (एक ही पदार्थ) के दो भाग हैं—अर्थात् उसके कुच के लिए तुम्हारे हाथ ही उपयुक्त है ।

[३५

जहाँ-जहाँ पद-जुग धरई । तहिं-तहिं सरोरुह झरई ॥२॥
जहाँ-जहाँ झलकए अंग । तहि-तहिं बिजुरि-तरंग ॥४॥
कि हेरलि अपरुब गोरि । पइठलि हिअ मधि मोरि ॥६॥
जहाँ-जहाँ नयन बिकास । ततहिं कमल परकास ॥८॥
जहाँ लहु हास संचार । तहिं-तहिं अमिअ-बिथार ॥१०॥
जहाँ-जहाँ कुटिल कटाख । ततहिं मदन-सर लाख ॥१२॥
हेरइत से धनि थोर । अब तिन भुवन अगोर ॥१४॥
पुनु किए दरसन पाब । अब मोर ई दुख जाब ॥१६॥
विद्यापति कह जानि । तुअ गुन देहब आनि ॥१८॥

१, २—पद जुग=दोनों पैर। धरई=धरती है, रखती है। तहिं=वहीं। सरोरुह=कमल। झरई=झड़ते हैं। ३, ४—झलकए=झलकते हैं, चमकते हैं। अंग=शरीर। बिजुरि-तरंग=बिजली का चंचल प्रकाश। ५, ६—कि=क्या। हेरलि=देखा। गोरि=गौर-वदना, सुन्दरी। पइठलि=पैठ गई, घुस गई। हिअ-मधि=हृदय में। मोरि=मेरे। ९, १०—लघु=मंद। हास=हँसी। अमिअ=अमृत। ११, १२—कुटिल=टेढ़े। कटाख=कटाक्ष। ततहिं=वहाँ ही। मदन=कामदेव। सर=बाण। १३, १४—हेरइत=देखते ही। से=वह। धनि=बाला, सुन्दरी। अगोर=प्रतीक्षा करना। १५, १६—पुनु=पुनः। किए=क्या। १६—क्या अब मेरा यह दुख जायगा? १८—तुअ=तुम्हारे। देहब आनि=ला दूँगा।

राधा का प्रेम

[३६]

ए सखि पेखल एक अपरूप ।
सुनइत मानब सपन-सरूप ।।२।।

कमल जुगल पर चाँदक माला ।
तापर उपजल तरुन तमाला ।।४।।

तापर बेढ़लि बीजुरि-लता ।
कालिन्दी तट धिरें-धिरें जाता ।।६।।

साखा-सिखर सुधाकर पाँति ।
ताहि नव पल्लव अरुनिम काँति ।।८।।

बिमल विम्बफल जुगल बिकास ।
तापर कीर थीर करु वास ।।१०।।

तापर चंचल खंजन-जोर ।
तापर साँपिनि झाँपल मोर ।।१२।।

ए सखि रंगिनि कहल निसान ।
हेरइत पुनि मोर हरल गेआन ।।१४।।

कवि विद्यापति एह रस भान ।
सुपुरुख मरम तोहें भल जान ।।१६।।

३—कमल जुगल=दो पैर। चाँदक माला=नखों की पंक्ति। ४—तरुन तमाला=काला शरीर। ५—बेढ़लि=लिपटी हुई। बीजुरिलता=पीताम्बर। ७—साखा-सिखर=तमालरूपी शरीर की शाखा रूपी बाहुओं के अग्र भाग में। सुधाकर-पाँति=नखों की पंक्ति। ८—नव पल्लब=हथेली।

[३७]

की लागि कौतुक देखलहुँ सखि
निमिष लोचन आध।
मोर मन-मृग मरम बेधल
बिषम-बान बेआध ।।२।।

गोरस बिरस बामी बिसेखल
छिकहि छाड़ल गेह।
मुरलि निसान मो मन मोहल
बिकहु भेल सन्देह ।।४।।

तीर तरंगिनि कदम्ब-कानन
निकट जमुना घाट।
उलटि हेरइत विपथ जाइत
चरन चीरग काँट ।।६।।

सुकृत सुफल सुनह सुन्दरि
विद्यापति भन सार।
कंसदलन गोपाल सुन्दर
मिलल नन्द कुमार ।।८।।

अरुनिम काँति=लाल। ९—बिम्बफल=ओष्ठ। १०—कीर=नाक। ११—खंजन जोर=आँखों का जोड़ा। साँपिनि=केश। मोर—मयूर=मुकुट।

१—की लागि=किसलिए। निमिष=एक क्षण। लोचन आध=आधी आँखों से, कनखियों से। २—मरम=हृदय का भीतरी भाग। ३—बिरस=रसहीन। बिषम बान बेआध=कामदेव रूपी व्याध। छिकहि=छीकने पर। ५—तरंगिनि=नदी।

[३८]

अवनत मुख कए रहलिहुँ
बारल लोचन-चोर।
पिआ मुख-रुचि पिबए धाओल
जइसे चाँद चकोर ॥२॥

ततहु सयँ हठे हटि मो आनल
धएल चरन राखि।
मधुप मातल उड़ए न पार
तैओ पसारए पाँखि ॥४॥

१, २—अवनत=नीचे। बारल=निवारण किया, रोक रक्खा। मुख-रुचि=मुख की शोभा। पिबए=पीने के लिए। धाओल=दौड़ पड़ा। मैंने अपने मुख को नीचे कर लिया और नयन रूपी चोरों को (उनकी ओर जाने से) रोक दिया; किन्तु प्रीतम के मुख की शोभा का पान करने के लिए वे दौड़ पड़े, जिस प्रकार चाँद की ओर चकोर दौड़ते हैं। ३, ४—ततहु=वहाँ। सयँ=से। हटि=हटाकर। मो=मैं। आनल=लाया। धएल राखि=धर रक्खा। मधुप=भौंरा। मातल=मत्त बना, पागल। उड़ए न पार=नहीं उड़ सकता। तैओ=तो भी। पसारए=पसारता है। वहाँ से=मुख की ओर से—मैं (आँखों को) हठपूर्वक रोककर हटा लाई और अपने चरणों पर धर रक्खा—नीचे की ओर देखने लगी। (किन्तु जिस प्रकार) मधु पीकर मस्त बना भौंरा नहीं उड़ सकता तो भी पंख पसारता है उसी तरह मेरी आँखें बराबर उसी ओर जाने लगीं। ५—मुँदु=मूँद लिया। बिहि=

माधव बोलल मधुर वानी
से सुनि मुँदु मएँ कान।
ताहि अवसर विहि वाम भेल
धरु धनु पँचबान ।।६।।

तनु पसेव पसाहनि भासलि
पुलक तइसन जागु।
चूनि चूनि भए काँचुअ फाटलि
बाहु वलआ भाँगु ।।८।।

भन विद्यापति कम्पित अन्तर
बोल न बोलल जाए।
राजा सिवसिंघ रूपनराएन
साम सुन्दर काए ।।१०।।

ब्रह्मा। बाम भेल=विरुद्ध हुआ, वैरी हुआ। पँचबान=कामदेव। ६—उसी समय विधाता बाम हो गये और कामदेव ने धनुष धारण किया—मुझपर बाणों की बौछार करने लगा। ७—पसेब=पसीना। पसाहनि=प्रासाधनी, ललाट पर की सजावट, अंगराग। भासलि=बह गया, धो गया। पुलक=रोमांच। तइसन=उसी प्रकार। ८—चूनि चूनि भए=खंड-खंड होकर, चिथड़े-चिथड़े होकर। काँचुअ=कंचुकी, चोली। बलआ=चूड़ी। भाँगु=फूट गई। [प्रेमातिरेक से शरीर फूल उठा, जिस कारण चोली फट गई और चूड़ियाँ फूट गई] ९—कम्पित अन्तर=हृदय काँप रहा है। बोल न बोलल जाय=बात कही नहीं जाती।

[३६]

सामर सुन्दर ए बाटें आएल
तें मोरि लागलि आँखि ।
आरति आँचर साजि न भेल
सब सखीजन साखि ।।२।।

आध पयोधर तें मोर देखल
नगर-जन समाजे ।
कठिन हिरदय भेदि न भेले
जाओ रसातल लाजे ।।४।।

कि मोरा जीवन कि मोरा जौवन
कि मोरा चतुरपने ।
मदन-बान मुरुछलि अछओं
सहओं जीब अपने ।।६।।

१—ए बाटें=इस रास्ते। तें=इसी कारण। २—आरति=आर्त्तावस्था से व्याकुलता से। साखी=साक्षी, गवाह। व्याकुलता से—प्रेमावेश से—मैं आँचल को सँभाल भी न सकी—अपने कुचों को भली-भाँति ढक भी न सकी, इस बात की गवाह सभी सखियाँ हैं। ३, ४—नागर-जन=चतुर लोग। भेदि=विदीर्ण होना। पर मेरा कठिन हृदय फट नहीं गया, इच्छा हुई कि मैं लज्जावश पाताल में धँस जाऊँ। ५, ६—मुरुछलि=मूर्च्छित। अछओं=हूँ। मेरी जिन्दगी क्या, जवानी क्या और चतुराई क्या—ये सब मिथ्या है, काम के बाणों से मैं मूर्च्छित

कहहि मो सखि कहहि मो सखि
कथाँ ताहेरि बासा।
दूरहु दुगुन एड़ि मएँ धावओं
पुनु दरसन आसा ॥८॥

सुरपति-पाए लोचन माँगओं
गरुड़ माँगओं पाँखि।
नन्दक नन्दन मएँ देखि आवओं
मन मनोरथ राखि ॥१०॥

हूँ और (उसकी मार्मिक पीड़ा) अपने प्राणों में सह रही हूँ। ७, ८—मो=मुझसे। कथाँ=कहाँ। ताहेरि=उसका। बासा=निवास-स्थान। दूरहु दुगुन=दुगुनी दूरी। एड़ि=अतिक्रमण कर। धावओं=दौड़ चलूँ। पुनु=पुनः। कहो, ऐ मेरी सखी, कहो, उसका निवास-स्थान कहाँ है? दुगुनी दूरी (होने पर भी उसे) अतिक्रम कर मैं पुनः दर्शन पाने की आशा में दौड़ चलूँ। ९—सुरपति=इन्द्र। पाए=चरण में। पाँखि=पंख। इन्द्र के चरणों में मै उनसे सहस लोचन माँगती हूँ, गरुड़ से पंख माँगती हूँ। १०—देखि आवओं=देख आऊँ।

—o—

Poetry is that which lifts the veil from the hidden beauty of the world.

—*Shelly*

[४०]

कान्ह हेरब छल मन बड़ साध
कान्ह हेरइत भेल एत परमाद ।।२।
तबधरि अवधि मुगुधि हमे नारि ।
कि कहि कि सुनि किछु बुझए न पारि ।।४।।
साओन घन सम झर दु नयान ।
अविरत धक धक करए परान ।।६।।
की लागि सजनी दरसन भेल ।
रभसें अपन जिव परहाथ देल ।।८।।
न जानिअ किए करु मोहन चोर ।
हेरइत जिव हरि लए गेल मोर ।।१०।।
एत सब आदर गेल दरसाए ।
जत बिसरिअ तत बिसरि न जाए ।।१२।।
विद्यापति कह सुन वर नारि।
धैरज धरु चित मिलब मुरारि।।१४।।

१—कान्ह=कृष्ण । हेरब=देखूँगी । छल=था । साध=इच्छा । २—एत=इतना । परमाद=प्रमाद, आपत्ति । ३—तबधरि=तबसे । मुगुधि=मुग्धा । ४—कि=क्या । बुझए न पारि=नहीं समझ सकती । ५—साओन-घन=श्रावण का मेघ । नयान=नयन, आँख । ६—अविरत=हरदम । ८—रभसें=कौतुक में ही । परहाथ=दूसरे के हाथ में । ९—किए=क्या । १०—गेल दरसाए=दिखला गया, बतला गया । ११—जत=जितना । बिसरिअ=भुलाती हूँ । बिसरि न जाए=भूला नहीं जाता ।

[४१]

कि कहव हे सखि एह दुख ओर ।
बाँसि-निसास-गरल तनु भोर ।।२।।

हठ सएँ पइसए स्रवनक माझ ।
तहि खन बिगलित तनमन लाज ।।४।।

बिपुल पुलक परिपूरए देह ।
नयन न हेरि हेरए जनु केह ।।६।।

गुरु-जन समुखहि भाव-तरंग ।
जतनहि बसन झाँपिअ सब अंग ।।८।।

लहु-लहु चरण चलिअ गृह माझ ।
आजु दइवें मोहि राखल लाज ।।१०।।

तन मन बिवस खसए निवि बंध ।
कि कहब विद्यापति रहु धन्द ।।१२।।

१—कि=क्या। १—बाँसि-निसास-गरल=वंशी के निःश्वास के बिष से—वंशी की आवाज की मादकता से। तनु भोर=शरीर बेसुध है। ३—हठ सयँ-हठपूर्वक। पइसए=पैठता है। स्रवनक=कानों के। माझ=मध्य में। ४—तहि खन=उसी समय। बिगलित=दूर हुई, जाती रही। ५—विपुल=अधिक, असंख्य। पुलक=रोमांच। ६—आँखों से (कृष्ण की ओर) नहीं देखती हूँ कि कहीं कोई ऐसा करते देख न ले। ७—गुरुजन=अपने से श्रेष्ठ व्यक्ति। भाव-तरंग=भावना की लहर। ९—लहु-लहु=धीरे-धीरे। दइब=दैव, ब्रह्मा। ११—खसए=गिर पड़ता है। १२—धन्द=फिक्र।

[४२]

कतन बेदन मोहि देसि मदना ।
हर नहि बाला मएँ जुबति जना ।।२।।

बिभूति-भूषन नहि चाननक रेनू ।
बघछाल नहि सिर नेतक बसनू ।।४।।

नहि मोरा जटाभार चिकुरक बेनी ।
सुरसरि नहि सिर कुसुमक स्रेनी ।।६।।

चाननक बिन्दु मोरा नहि इन्दु छोटा ।
ललाट पावक नहि सिन्दुरक फोटा ।।८।।

नहि मोरा कालकूट मृगमद चारु ।
फनिपति नहि मोरा मुकुता-हारु ।।१०।।

भनइ विद्यापति सुन देव कामा ।
एक पए दूखन नाम मोर बामा ।।१२।।

अरे कामदेव ! मुझे कितनी वेदना देते हो, मैं महादेव नहीं वरन् नवयुवती हूँ। (शरीर में लगे) ये विभूति के भूषण (लेप) नहीं, वरन् चन्दन के रेणु हैं, यह बाघछाला नहीं, वरन् नेतक (एक उत्तम कोटि के वस्त्र-विशेष का नाम) है। (सिर पर) यह जटा का भार नहीं, वरन् केशों की गुँथी हुई वेणी है। गंगा नहीं, वरन् वेणी में गूँथे गये (उजले) फूलों की कतार है। (कपाल पर) चन्दन की बेंदी अथवा माँगटीका है, द्वितीया का छोटा चन्द्रमा नहीं। ललाट में (तृतीय नेत्र की) अग्नि नहीं, सिंदूर का टीका है। यह विष नहीं, चिबुक पर सुन्दर (काला) मृगमद है। (गले में) अजगर नहीं, किन्तु मेरी मुक्ताओं की माला है। विद्यापति कहते हैं, हे कामदेव, सुनो मुझमें दोष है तो केवल

[४३]

मनमथ तोहि की कहब अनेक ।
दिठि अपराध परान पए पीड़सि
ते तुअ कओन बिबेक ।।२।।

दाहिन नयन पिसुन गन बारल
परिजन बामहि आध ।
आध नयन-कोने जें हरि पेखल
तें भेल एत परमाद ।।४।।

पुर-बाहर पथ करैत गतागत
के नहि हेरए कान ।
तोहर कुसुम-सर कतहु न संचर
हमरे हृदय पाँचो बान ।।

एक यही कि मेरा नाम 'वामा' (रमणी) है (जो महादेव के 'वामदेव' नाम से मिलता है) ।

१, २—मनमथ=कामदेव । दिठि=दृष्टि, नजर । पीड़सि=पीड़ा देते हो । ३, ४—पिसुन=दुष्ट । बारल=मना किया । परिजन=घर के लोग । परमाद=प्रमाद, झंझट । दाहिने नेत्र को दुष्टों के कारण मना करना पड़ा—दाहिने नेत्र से दुष्टों के डर से नहीं देखती—परिवारवालों के कारण बायें नेत्र के आधे को निवारण किया । रह गया बायें नेत्र का आधा भाग—सो आधे नेत्र से ही—बायें नेत्र के कटाक्ष से ही—जब कृष्ण को देखा तो इतना पागलपन मुझमें आ गया । ५—पथ=राह । करैत गतागत=आते-जाते । कान=कृष्ण । ६—कुसुम-सर=फूलों के वाण ।

[४४]

एक दिन हरि हेरि हँसि हँसि जाए ।
अओ दिन नाम धए मुरलि बजाए ॥२॥

आजु अति नियर कएल परिहास ।
न जानिअ गोकुल ककर बलास ॥४॥

साजनि ओ नागर-समराज ।
मूल बिनु परधन माँग बेआज ॥६॥

परिचय नहि देखि आनक काज (?)
न करए संभ्रम न करए लाज ॥८॥

अपन निहारि निहार तनु मोर ।
देअ आलिंगन भाव बिभोर ॥१०॥

खन-खन बेदगधि कला अनुपाम ।
अधिक उदार देखिअ परिनाम ॥१२॥

विद्यापति कह आरति ओर ।
बुझिओ न बूझए एह रस भोर ॥१४॥

२—**अओ=और, अन्य।** ३—नियर=निकट। परिहास=हँसी, मजाक। ककर=किसका। ५, ६-नागर-समराज=चतुरों का सम्राट्। मूल=मूलधन। सखि, वह चतुरों का बादशाह है, देखो तो, दूसरे की सम्पत्ति पर बिना मूल-धन के सूद माँगता है (एक तो धन दूसरे का; उसमें भी मूलधन गायब, फिर सूद कैसा!) ७—दूसरे का काम देखकर भी नहीं परिचय करता—नहीं समझता। ८—**संभ्रम=डर।** ११—प्रति क्षण अनुपम विदग्धतापूर्ण कला (दिखाता है)। १४—यह रस में बेसुध (कृष्ण) समझकर भी नहीं समझता।

दूती

कृष्ण की दूती

[४५]

धनि-धनि रमनि जनम धनि तोर ।
सब जन कान्ह-कान्ह करि झूरए
से तुअ भाव बिभोर ।।२।।

चातक चाह पिआसल अम्बुद
चकोर चाहि रहु चन्दा ।
तरु लतिका अवलम्बन कारी
मोर मन लागल धन्दा ।।४।।
केस पसारि जखन तोहें राखल
उर पर अम्बर आधा ।

२—धनि=धन्य । रमनि=रमणी, स्त्री । तोर=तुम्हारा । २–जन=आदमी । कान्हु=कृष्ण । झूरए=जलते, व्याकुल होते । से=वह । तुअ=तुम्हारे । बिभोर=बेसुध । ३, ४—चातक=पपीहा । चाह = देखना । पिआसल=तृषित, प्यासा । अम्बुद=बादल । तरु=वृक्ष । लतिका=लता । लागल=लगा । धन्दा=सन्देह । (कैसी विचित्रता है !) तृषित मेघ आज पपीहे की ओर देख रहा है, चन्द्रमा चकोर को देखता है और वृक्ष लतिका का अवलम्बन कर रहा है; इन विरोधी बातों को देख मेरे मन में संशय हो रहा है । (कवि का तात्पर्य यह है कि जैसी व्याकुलता आज तुममें होनी चाहिए थी, वह श्रीकृष्ण में है।) ५–पसारि=पसार कर, खोलकर। राखल=रक्खा। उर=छाती, वक्षःस्थल। अम्बर=वस्त्र, अंचल । ६—से=वह।

से सब सुमिरि कान्ह भेल आकुल
कह धनि इथे कि समाधा ।।६।।

हँसइत कब तोहें दसन देखाओल
करे कर जोरहि मोर ।
अलखित दिठि कब हृदय पसारलि
पुनु हेरि सखि करु कोर ।।८।।

एतहु निदेस कहल तोहि सुन्दरि
जानि तोहें करह बिधान ।
हृदय-पुतलि तुहु से सून कलेबर
कबि विद्यापति भान ।।१०।।

भेल=हुआ। इथे=यहाँ। धनि=बाले। समाधा=उपाय। ७, ८—दसन=दाँत। करे कर जोरहि=हाथ से हाथ जोड़ लिये। अलखिते=अलक्ष्य रूप से, बिना देखे। पुन=पुनः। हेरि=देखकर। करु कोर=कोड़ में करना-रखना, आलिंगन करना। (हाथ से हाथ जोड़कर अँगड़ाइयाँ लेती हुई) कब तुमने हँसती हुई, अपने दाँतों की छटा दिखाई, मेरे हाथ से हाथ जोड़ने लगी एवम् अलक्ष्य दृष्टि कब उनके हृदय में प्रसारित की, पुनः उनकी ओर देखकर, सखी का आलिंगन किया। ९—एतहु=इतना। निदेश=इशारा। कहल=(मैंने) कहा। तोहि=तुम्हें। जानि=जानकर। करह=करो। बिधान=निर्णय। १०—हृदय-पुतलि=हृदय की पुतली, प्राण। से=वह (कृष्ण)। सून=शून्य। कलेबर=शरीर। भान=कहता है।

[४६]

सुन सुन ए सखि कहए न होए ।
राहि राहि कए तन मन खोए ।।२।।

कहइत नाम पेम होग्र भोर ।
पुलक कम्प तनु ढारहि नोर ।।४।।

गद-गद भाखि कहए वर-कान ।
राहि दरस बिनु निकस परान ।।६।।

जब नाहि हेरब तकर से मुख ।
तब जिउ-भार धरब कोन सुख ।।८।।

तुहु बिनु ग्रान इथे नहि कोइ ।
बिसरए चाह बिसरि नहि होइ ।।१०।।

भनइ विद्यापति नाहि विखाद ।
पूरब तोहर सबहि मन साध ।।१२।।

१—कहए न होए=कहा नहीं जाता। २—राहि=राधा। कए=करके, कहकर। खोए=खोना, भुला देना। ३—पेम=प्रेम। भोर=बेसुध। ४—पुलक=रोमांच। ढारहि=बहाता है। नोर=ग्राँसू। शरीर रोमांच होकर काँपने लगता है, ग्रौर ग्राँसू प्रवाहित होने लगते हैं। ५—गदगद=रुँधे हुए कंठ में। भाखि=कहना। कान=कृष्ण। ६—निकस=निकलता है। ७—तकर=उसका। से=वह। ८—धरब=धरूँगा। ९—ग्रान=दूसरा। इथे=यहाँ, तुम्हारे सिवा यहाँ दूसरा कोई नहीं—तुम्हें छोड़कर कृष्ण ग्रन्य किसी को प्यार नहीं करते। १०—बिसरए=विस्मरण होना, भूल जाना। १२—पूरब=पूरी होगी। मन साध=मनकामना।

[४७]

कंटक माझ कुसुम परगास ।
भमर बिकल नहि पाबए पास ॥२॥

भमरा भेल घुरए सबे ठाम ।
तोहि बिनु मालति नहि बिसराम ॥४॥

रसमति मालति पुनु पुनु देखि ।
पिबए चाह मधु जीब उपेखि ॥६॥

ओ मधुजीवी तोहें मधुरासि ।
साँचि धरसि मधु मने न लजासि ॥८॥

अपनेहु मने धनि बुझ अबगाहि ।
तोहर दुषन वध लागत काहि ॥१०॥

भनहि विद्यापति तओं पए जीब ।
अधर सुधारस जओं पए पीब ॥१२॥

१—परगास=प्रकाश। २—पाबए=पाता है, जा सकता है। ३—भमरा (माधव)। ४—मालति (राधा)। ६—जीव उपेखि=जीवन की उपेक्षा करके अर्थात् मरेंगे या जीयेंगे इसका कुछ भी ख्याल न करके। ८—साँचि धरसि=संचित करके रक्खा है। ९—अबगाहि=डूबकर अर्थात् इस बात को अपने मन में भी भली-भाँति सोचो, समझो। ११—तओं पए जीब=तबही जी सकता है। १२—जओं पए पीब=जभी वह पी सकेगा।

[४८]

आजु हमे पेखल कालिन्दी कूले ।
तुअ बिनु माधब बिलुठए धूले ॥२॥

कत सत रमनि मनहि नहि आने ।
किए विष दाह समय जल-दाने ॥४॥

मदन-भुजंगम दंसल कान ।
बिनहि अमिअ-रस कि करब आन ॥६॥

कुलबति धरम काँच समतूल ।
मदन दलाल भेल अनुकूल ॥८॥

आनल बेचि नीलमनि हार ।
से तोहें पहिरब करि अभिसार ॥१०॥

नील निचोल झाँपबि निज देह ।
जनि घन भीतर दामिनि-रेह ॥१२॥

चौदिसि चतुर सखी चलु संग ।
आज निकुंज करह रस-रंग ॥१४॥

१—पेखल=देखा। कालिन्दी=यमुना। कूले=किनारे में। २-बिलुठए=लोट रहे हैं। ३—कत=कितने। सत=सौ। आने=लाता है। ४—विष की ज्वाला के समय जल देने से क्या—विष की ज्वाला कहीं पानी से शान्त होती है? ५—भुजंगम=सर्प। दंसल=काटा। कान=कृष्ण। ६—अमिअ=अमृत। कि करब=क्या करेगा। आन=अन्य। ८—समतूल=समान। १०—से=वह। अभिसार=प्रियतम के पास गमन। ११—निचोल=चोली। १२-घन=मेघ। दामिनि=बिजली। रेह=रेखा। चौदिसि=चारों ओर।

[४६]

आज पेखल नन्द-किशोर।
केलि-बिलास सबहु अब तेजल
अह निसि रहए बिभोर ॥२॥
जब धरि चकित बिलोकि बिपिन-तट
पलटि आओल मुख मोरि।
तबधरि मदनमोहन तरु कानन
लोटल धैरज छोरि ॥४॥
पुनु फिरि सोइ नयन जदि हेरब
पाओब चेतन नाह।
भुजंगिनि दसि पुनहि जदि दंसए
तबहि समए बिष-धाह ॥६॥
अब सुभ खन धनि मनिमय भूषण
भूषित तनु अनुपाम।
अभिसरु बल्लभ हृदय बिराजह
जनि मनि कांचन-दाम ॥८॥

२—अहनिसि=दिन-रात। बिभोर=बेसुध। ३—जब धरि=जबसे। ४—तब धरि=तबसे। लोटए=लोटते हैं। ५—पाओब चेतन=चेतना पायँगे, सुध में आयँगे। नाह=नाथ (कृष्ण)। ६—भुजंगिनि=साँपिनि। दंसि=काटकर। तबहि=उसी समय—उसी हालत में। समए=शान्त होता है। धाह=ज्वाला। ८—अभिसरु=अभिसार करो—गुप्त मिलन-स्थान में जा मिलो। बल्लभ=प्यारा। जनि मनि कांचन-दाम=जैसे सोने के धागे में मणियों की माला पिरोई गई हो।

[५०]

प्रथम सिरीफल गरबें गमग्रोलह
जे गुनें गाहक ग्रावे ।
गेल जौबन पुनु पलटि न ग्रावए
केवल रह पछतावे ।।२।।

सुन्दरि, बचन करह समधाने ।
तोहि सनि नारि दिवस दस ग्रछलिहुँ
ऐसन उपजु मोहि भाने ।।४।।

जौबन रूप तावे धरि छाजए
जावे मदन ग्रधिकारी ।
दिन दस गेले सखि सेहग्रो पराएत
सकल जगत परचारी ।।६।।

विद्यापति कह जुवति लाख लह
पड़ल पयोधर तूले (?)
दिन-दिन ग्राहे सखि ऐसनि होएबह
घोसिनि घोरक मूले ।।८।।

१—सिरीफल=श्रीफल, बेल (कुच) । गमग्रोलह=गँवा दिया, खो दिया। जे गुनें=जिसके लोभ से । २—करह समधाने=समाधान करो, विचार करो। ४—सनि=समान। ग्रछलिहुँ=मैं थी । भाने=ग्रनुमान । ५—छाजए=शोभता है। ६—गेले=जाने पर। सेहग्रो=वह भी। पराएत=भागेगा। ८—पयोधर तूले=स्तन रूई के समान शिथिल । ८—ग्राहे सखि=ग्ररी सखि। होएबह=हो जाग्रोगी। घोसिनि=ग्वालिन । घोरक=मट्ठा के। मूले=मूल्य की।

[५२]

ए धनि कामिनि सुनु हितबानि।
पेम करव जब सपुरुष जानि ।।२।।

सुजनक पेम हेम सलतूल।
दहइत कनक दुगुन होग्र मूल ।।४।।

टुटइत नहि टुट पेम ग्रदभूत।
जइसन बढ़ए मृनालक सूत ।। ६।।

सबहु मतंग मोति नहि मानि।
सकल कंठ नहि कोइल-बानि ।।८।।

सकल समय नहि रीतु बसन्त।
सकल पुरुष नहि होग्र गुनवन्त ।।१०।।

भनइ विद्यापति सुन बर नारि।
पेमक रीति ग्रब बुझह बिचारि ।।१२।।

१—धनि=बाला। बानि=वाणी, बात २—जब प्रेम करो तो सुपात्र ही जानकर। ३—सुजनक=सज्जन का। हेम=सोना। समतूल=समान। ४—दहइत=जलने पर। कनक=सोना। दुगुन=दो गुणा। मूल=मूल्य। ६—जइसन=जिस प्रकार। बढ़ए=बढ़ता है। मृनालक=मृणाल का, कमल की डंटी का। सूत=सूत्र, धागा, भीतर का रेशा। ८—मतंग=हाथी। मोती=मुक्ता। ६—कोइल-बानि=कोयल की काकली। १०—सभी पुरुष गुणवन्त ही नहीं होते।

[५१]

राधा की दूती

सुनु मनमोहन कि कहब तोए।
मुगुधिनि रमनी तुअ लागि रोए ।।३।।

निसि-दिन लागि जपए तुअ नाम।
थर-थर काँपि पड़ए सोइ ठाम ।।४।।

जामिनि आध अधिक जब होइ ।
विगलित लाज उठए तव रोइ ।।६।।

सखिगन जत परबोधए जाए
तापिनि ताप ततहि अधिकाए ।।८।।

कह कविसेखर ताक उपाए।
रचइत तबहि रयनि बहि जाए ।।१०।।

१—कि=क्या। कहब=कहूँ। तोए=तुझे। २—मुगुधिनि=मुग्धा, प्रेमासक्ता। रमनी=रमणी, स्त्री। तुअ लागि=तेरे लिये। रोए=रोती है। ४—पड़ए=(गिर) पड़ती है। ठाम=जगह। ५—जब रात आधी से अधिक बीत जाती है। ६—बिगलित लाज=लाज से रहित होकर। उठए तब रोइ= तब रो उठती है। ७—जत=जितना। परबोधए=प्रबोध करती है, समझाती है। ८—तापिनि=ज्वाला से जली हुई। ताप=ज्वाला। ततहि=उतना ही। अधिकाए=बढ़ता है। (वह विरह-ज्वाला से) जली हुई बाला ज्वाला से और भी अधिकाधिक जलती है। ९—ताक=उसका। १०—बहि जाए=बह जाती है, बीत जाती है।

[५३]

माधव ! कि कहब से विपरीते ।
तनु भेल जरजर भरमए अन्तर
चित बाढ़ल तसु भीते (?) ॥२॥
निरस कमल-मुख कर अबलम्बए
सखि माझ वइसए गोई ।
नयनक नीर थीर नहिं बाँधए
पंक कएल महि रोई ॥४॥
मरमक बोल, नयन नहि वोलए
तनु भेल कुहु-ससि-खीना ।
अबनि उपर धनि उठए न पारए
धएलि भुजा धरि दीना ॥६॥
तपत कनक जरि काजर भेल तनु
अतिसए बिरह हुतासे ।
कवि विद्यापति मन अभिलाखए
कान्ह चलह तसु पासे ॥८॥

२—जरजर=जर्जर, अत्यन्त क्षीण । भरमए=भटकता है । अन्तर=हृदय । बाढ़ल=बढ़ गया । तसु=उसका । ३—निरस=रसहीन, उदास । कर=हाथ । अबलम्बए=अवलम्बन करती है । माझ=मध्य । बइसए=बैठती है । गोई=छिपाकर । ४—नयनक नीर=आँसू । थीर=स्थिरता । ५—मरमक बोल=मर्म कथा, हृदय के भाव । कुहु-ससि=अमावास्या का चन्द्र । ६—उठए न पारए=उठ नहीं सकती । पृथ्वी पर वह बाला स्वयं उठ नहीं सकती, (सखियाँ) उस दीना की भुजा पकड़कर (धरती पर से) उठाती है ।

[५४]

लोटए धरनि, उठए धरि सोई ।
खने खन साँस खने खन रोई ॥२॥

खने खन मुरछइ कंठ परान ।
इथि पर की गति दैव से जान ॥४॥

हे हरि पेखलिहुँ से बर नारि ।
न जिउति बिनु कर-परसें तोहारि ॥६॥

केओ केओ जपए बेद दिठि जानि ।
केओ नब ग्रह पुज जोतिअ आनि ॥८॥

केओ केओ कर धरि धातु बिचार ।
बिरह-बिखिन कोइ लखए न पार ॥१०॥

७—तपत=तप्त, तपे हुए। कनक=सोना। जरि=जलकर। हुतासे=अग्नि। ८—तसु=उसके।

१—लोटए=लोटती है। धरनि=पृथ्वी। सोई=वह। २—खने-खन=क्षण-क्षण में। साँस=उसाँसें लेती है। रोई=रोती है। ३—क्षण-क्षण में वह मूर्च्छित हो जाती है और प्राण कंठ तक चले आते हैं। (मृतप्राय हो जाती है)। ४—इथि=इसके। पर=बाद। की=क्या। से=वह। ५—पेखलिहुँ=(मैंने) देखा। ६—जिउति=जीयेगी। कर-परसें=हाथ का स्पर्श। ७—केओ=कोई। दिठि=नजर लगना। ८—पुज=पूजता है। जोतिष=ज्योतिषी। आनि=ले आकर, बुलाकर। ९—धातु=नाड़ी। १०—बिरह-बिखिन=विरह-विखिन्न, बिरह से क्षीण हुई। लए नख पारए=लख नहीं सकती।

[५५]

अविरल नयन गरए जल-धार ।
नव-जल बिन्दु सहए के पार ॥२॥

कि कहब माधव ताहेरि कहिनी ।
कहए न पारिअ देखलि जहिनी ॥४॥

कुच-जुग ऊपर आनन हेरु ।
चाँद राहु डर चढ़ल सुमेरु ॥६॥

अनिल अनल बम मलयज बीख ।
जेहो छल सीतल सेहो भेल तीख ॥८॥

चाँद सताबए सबिताहु जीनि ।
नहि जीवन एकमत भेल तीनि ॥१०॥

किछु उपचार मान नहि आन ।
ताहि बेआधि भेषज पँचबान ॥१२॥

तुम दरसन बिनु तिलाओ न जीब ।
जइओ कलामति पीउख पीब ॥१४॥

१—अविरल=लगातार । गरए=गिरता है । २—नब-जल बिन्दु=नवीन जल के कण, आँसू । ३—ताहेरि=उसकी । कहिनी=कहानी । ४—जहिनी=जैसी । ५—आनन=मुख । ७—अनिल=वायु । अनल=आग । बम=वमन करता है, उगलता है । मलयज=चन्दन । बीख=विष । ८—छल=था । तीख=तीक्ष्ण । ९—सबिताहु=सूर्य को भी । जीनि=जीतकर, सूर्य से बढ़कर । १०—एकमत भेल तीनि=(वायु, चन्दन, चन्द्र) एकमत हुए । ११—उपचार=औषधादि । १२—भेषज=दवा । पँचबान=कामदेव । १३—तिलाओ=तिलमात्र भी, एक क्षण भी । जीब=जीयेगी । १४—पीउख=पीयूष, अमृत ।

[५६]

लाखे तरुअर कोटिहि लता
जुबति कत न लेख ।
सब फुल मधु मधुकर नहि
फुलहु फुल बिसेख ॥२॥

जे फुल भमर निदहु सुमर
बासि न बिसरि पार ।
जाहि मधुकर उड़ि-उड़ि पड़
सेहे संसारक सार ॥४॥

सुंदरि, अबहु बचन सून ।
सबे परिहरि तोहि इछ हरि
आपु सराहहि पून ॥६॥

१, २—तरुअर=तरुवर, वृक्ष-श्रेष्ठ। कत=कितना। न लेख=संख्या नहीं, असंख्य। मधु=पुष्परस। लाखों पेड़ हैं, करोड़ों लताएँ हैं, (यों ही) कितनी युवतियाँ हैं (जिनकी) गिनती नहीं। किन्तु सभी फूलों पर भौंरा नहीं जाता—फूलों में भी कोई विशेष फूल होते हैं। ३—जे=जिस। भमर=भौंरा। निन्दहु=नींद में भी। सुमर=स्मरण करता है। बासि=बसिया। न बिसरि पार=नहीं विस्मरण कर सकता, नहीं भूल सकता। ४—मधुकर=भौंरा। पड़=पड़ता, बैठता। सेहे=वही। जिसपर भौंरा उड़-उड़कर बैठे वही (फूल) संसार का सार है—संसार में उसी का खिलना सार्थक है। ५—सून=सुनो। ६—सबे=सबको। परिहरि=छोड़कर। इछ=इच्छा करता है। आपु=अपनी। सराहहि=सराहना करो। पून=पुण्य।

तोहरे चिन्ता तोहरे कथा
सेजहु तोहरे ठाम ।
सपनहु हरि पुनु पुनु लए
उठए तोहरे नाम ॥८॥

आलिंगन दए पाछु निहारए
तोहि बिनु सुन कोर ।
अकथ कथा न गुपुत बेथा
लाजें तेजए नोर ॥१०॥

राहि राहि नाम जाहि मुँह सुन
ततहि आपए कान ।
सिरि सिवसिंह ई रस जानए
*कवि विद्यापति भान ॥१२॥

७—तोहरे=तुम्हारा ही । सेजहु तोहरे ठाम=शय्या पर भी तुम्हारे लिए स्थान रखता है । ८—सपनहु=सपने में भी । पुनु पुनु=बारम्बार । लए उठए=ले उठते हैं । ९—पाछु=पीछे । निहारए=देखते हैं । सुन=शून्य, खाली । कोर=गोद । १०—अकथ=न कहने योग्य । गुपुत बेथा=गुप्त व्यथा । नोर=आँसू । ११—राहि=राधा । आपए=अर्पण करते हैं । १२—भान=कहते हैं ।

* रागतरंगिणी में इस प्रकार लिखा है :—

सरस कवि विद्यापति गाओल निअ मने अवधारि ।
जकर पेमे पराधीन बालमु सेहे कलामति नारि ॥

[५७]

आसाएँ मन्दिर बैसि गमाबए
राति न सूत सयान ।
जखन जतए जाहि निहारए
ताहि ताहि तोहि मान ॥२॥

मालति ! सफल जीबन तोर।
तोर बिरहे भुअन भमए
भेल मधुकर भोर ॥४॥

जातकि केतकि कत न अछए
सबहि रस समान ।
सपनहु नहि काहु निहारए
मधु कि करत पान ॥६॥

बन उपबन कुंज कुटीरहि
सबहि तोहि निरूप ।

१—आसाएँ=आशा में। गमाबए=बिताता है। सूत=सोता है। सयान=शयन पर, बिछावन। जखन=जब। जतए=जहाँ। जाहि=जिसे। निहारए=देखता है। जब जहाँ जिसे देखता है, उसे-उसे ही तुम्हें मान करता है—भ्रमवश सभी को तुम्हें ही समझता है। भुअन=भुवन, संसार। भमए=भ्रमण करता है। मधुकर=भौंरा। भोर=विभोर, व्याकुल। ५—जातकि=चमेली। कत=कितना। अछए=है। ६—स्वप्न में भी किसी को देखता तक नहीं, फि र उसका मधु क्यों पान करने चला। ७—सबहि=सभी स्थानों में। निरूप=निरूपण करता है, देखता है। ८—पुनु-पुनु=पुनः पुनः,

तोहि बिनु पुनु-पुनु मुरुछए
अइसन पेम सरूप ॥८॥

साहर निबह सउरभ न सह
गुजरि गीत न गाब ।
चेतन पापु चिन्ताएँ आकुल
हरख सबे सोहाब ॥१०॥

जकर हिरदय जतहि रतल
से धसि ततहि जाए ।
जइओ जतने बाँधि निरोधिअ
निमन नीर थिराए ॥१२॥

ई रस राय सिवसिंह जानए
कबि विद्यापति भान ।
रानि लखिमा देइ बल्लभ
सकल गुननिधान ॥१४॥

बारंबार। मुरुछए=मूर्च्छित होता है। अइसन=इस प्रकार का। ९—साहर=सहकार, आम। निबह=समूह। सउरभ=सौरभ, सुगंध। गुजरि=गुंजार करके। गाब=गाता है। १०—चेतन=चैतन्य, जीव। पापु=पापी। चिन्ताएँ=चिन्ता से। हरख सबे सोहाब=आनन्द में ही सबकुछ सुहाता है। ११—जकर=जिसका। जतहि=जहाँ। रतल=अनुरक्त हुआ। से=वह। धसि=घुसकर। ततहि=वहाँ ही। १२—जइओ=यद्यपि। निरोधिअ=रोक रखिये। निमन=नीची जगह। नीर=पानी। थिराए=स्थिर होता है।

नोक-झोंक

[५८]

कर धरि करु मोहि पारे ।
देब मएँ अपरुब हारे, कन्हैआ ।।२।।

सखि सबे तेजि चलि गेली ।
न जानु कओन पथ भेली, कन्हैआ ।।४।।

हमे न जाएब तुअ पासे ।
आएब औघट घाटे, कन्हैआ ।।६।।

विद्यापति एहो भाने ।
गूजरि भजु भगवाने, कन्हैआ ।।८।।

१—कर=हाथ। धरि=धरकर। करु=करो। पारे=उस पार। २—देब=दूँगी। हारे=माला। ३—तेजि=छोड़कर। चलि गेली=चली गई। ४—न जानु=न मालूम। कओन पथ भेली=किस रास्ते गई?. जाएब=जाऊँगी। तुअ=तेरे। पासे=निकट। ६—औघट घाटे=जिस घाट से कोई आता-जाता न हो। ७—एही=यह। भाने=कहते। ८—गूजरि=बाला, गोपी।

इस पद में प्रेमिका के हृदय का खासा चित्र विद्यमान है। जहाँ एक ओर कहती है—'हम न जाएब तुअ पासे', तो दूसरी ओर मुंह से निकलता है—'आएब औघट घाटे' यानी जा रही हूँ निश्चिन्त स्थान में ही, अर्थात् चलो, उस एकान्त स्थान में केलि-क्रीड़ा करें। यों ही इसके अन्य पदों में भी अपूर्व बारीक भाव विद्यमान है। रसिक पाठक गौर करें।

—:o:—

Poetry has some thing divine in it—Bacon

[५६]

कुंज-भवन सएँ निकसलि रे
रोकल गिरधारी ।
एकहि नगर बसु माधब हे
जनि करु बटमारी ।।२।।

छाड़ु कान्ह मोर आँचर रे
फाटत नव - सारी ।
अपजस होएत जगत भरि हे
जनि करिअ उघारी ।।४।।

संगक सखि अगुआइलि रे
हम एकसरि नारी ।
दामिनी आए तुलाएलि हे
एक राति अँधारी ।।६।।

भनहि विद्यापति गाओल रे
सुनु गुनमति नारी ।
हरिक संग किछु डर नहि हे
तोंहे परम गमारी ।।८।।

१—सएँ=से। निकसलि=निकली। रोकल=रोक लिया। २—बसु=रहते हो। जनि=मत। बटमारी=डकैती, राहजनी। ३—नव सारी=नवीन साड़ी। ४—उघारी=नग्न। संगक=साथ की। अगुआइलि=आगे गई। एकसरि=अकेली। ६—दामिनि आए तुलाए लि=बिजली भी चमकने लगी=मेघ छा गये। अँधारी=अँधेरी, कृष्णपक्ष की। ८—हरिक=श्रीकृष्ण के। गमारी=गँवारी, बेवकूफ।

[६०]

कुल गुन गौरब सील-सोभाब ।
सबे लए चढ़लिहुँ तोहरि नाब ।। २ ।।

हठ तेजि माधव कर मोहि पार ।
सब तहँ बड़ थिक पर-उपकार ।। ४ ।।

आइलि सखि सब साथ हमार ।
ते सबे भेलि निकहि बिधि पार ।। ६ ।।

हमरा भेल कान्ह तोहरि आस ।
से न करिअ जे होअ उपहास ।। ८ ।।

भल मन्द जानि करिअ परिनाम ।
जस अपजस दुइ रहत ए ठाम ।।१०।।

हमे अबला कत कहब अनेक ।
आइति पड़लें बुझिअ बिबेक ।।१२।।

तोहें पर नागर हमे पर नारि ।
काँप हृदय तुअ रीति बिचारि ।।१४।।

भनइ बिद्यापति तोहें गुनमान ।
हाथि महथ नब के नहि जान ।।१६।।

२—लए=लेकर। ४—सब तहँ=सबसे। थिक=है। ६—भेलि=हुई। निकहि बिधि=अच्छी तरह से। ११—कत=कितना। १२—आइति पड़ले=वश में पड़ने पर ही, विवशता का अवसर आने पर ही। बुझिअ बिबेक=विवेक की परख होती है। १३—पर नागर=अन्य पुरुष। १४—रीति=स्वभाव। १६—नब=झुकता है।

[६१]

नाब डोलाब अहीरे
जिबइत न पाओब तीरे
खर नीरे लो ।
खेबा न लेअए मोले
हँसि हँसि की दहु बोले
जिब डोले लो ॥२॥

किए बिके अएलिहु आपे
बेढ़ल मोहि बड़ सापे
मोरे पापे लो ।
करितहुँ पर उपहासे
परलिहुँ तहिं बिधि-फाँसे
नहिं आसे लो ॥४॥

न बुझसि अबुझ गोआरी
भजि रहु देब मुरारी
नहि गारी लो ।
कवि विद्यापति भाने
नृप सिवसिंह रस जाने
नव कान्हे लो ॥२॥

१—जिबइत=जीती हुई । खर नीरे=तीक्ष्ण धारा । २—मोले=मूल्य में, रुपये-पैसे में । की दहु=न जाने क्या । ३—किए=क्यों । अएलिहुँ=मैं आई । बेढ़ल=आ घेरा । ४—तहिं=उसी से । ५—गोआरी=ग्वालिन । गारी=गाली । ६—नव=नवीन, युवक ।

सखी-शिक्षा

राधा को शिक्षा

[६२]

प्रथमहि अलक तिलक लेब साजि ।
चंचल लोचन काजरें आँजि ॥२॥

जाएब बसन आँग सब गोए ।
दूरहि रहब तें अरथित होए ॥४॥

मोड़ि बदन सखि रहब लजाए ।
कुटिल नयन देव मदन जगाए ॥६॥

झाँपब कुच दरसाओब आध ।
खन खन सुदिढ़ करब निबि-बाँध ॥८॥

मान करब, दरसाओब भाव ।
रस राखब तें पुनु पुनु आब ॥१०॥

सुन्दरी, हमे कि सिखाओब रंग ।
अपनहि गुरु भए कहत अनंग ॥१२॥

सुकवि विद्यापति ई रस गाब ।
नागरि कामिनि भाव बुझाब ॥१४॥

१—अलक=केश । तिलक=टीका, बेंदी । लेब=लेना । २—आँजि=लगा देना । ३—बसन=कपड़ा । आँग=अंग । गोए=छिपाकर । ४—तें=इससे । अरथित=अर्थित, चाहक । ५—मुख मोड़कर लाज करना । ६—कुटिल=टेढ़े । झाँपब=ढकना । निबि-बाँध=नीबी का बन्धन । ९—मान करने के बाद ही भाव प्रकट करना । १२—अनंग=कामदेव । १४—नागरि-कामिनि= सुचतुरा स्त्री ।

[६३]

प्रथमहि सुन्दरि कुटिल कटाख ।
जिबि जोखि नागर देम्र दस लाख ॥ २ ॥

केम्रो देम्र हास सुधा सम नीक ।
जइसन परहोंक तइसन बीक ॥ ४ ॥

सुनु सुन्दरि नव मदन-पसार ।
जनि गोपह म्राम्रोब बनिजार ॥ ६ ॥

रोस दरसि रस राखब गोए ।
धएलें रतन म्रधिक मूल होए ॥ ८ ॥

भलहि न हृदय बुझाम्रोब नाह ।
म्रारति गाहक महँग बेसाह ॥१०॥

भनइ विद्यापति सुनह सयानि ।
सुहित बचन राखब हिय म्रानि ॥१२॥

१, २—जोखि=तौलकर। पहले, हे सुन्दरि, कुटिल कटाक्ष करना जिससे (मूल-रूप में) नागर दस लाख प्राण तौलकर देगा। ३—केम्रो=कोई। हास =हँसी। नीक=म्रच्छा। ४—परहोंक=बोहनी। बीक=बिक्री होती है। ५—मदन-पसार=कामदेव की दूकान। ६—गोपह=छिपाम्रो। बनिजार= व्यापारी। ७, ८—रोष प्रकट कर प्रेम छिपाये रखना, क्योंकि सँजोये हुए रत्न की कीमत म्रधिक होती है। ९—भलहि=म्रच्छी तरह। हृदय=म्रभिप्राय। १०—म्रारति=म्रार्त्त, म्राग्रहपूर्ण। महग=महँगा। बेसाह=खरीद करता है। १२—सुहित वचन=भलाई की बातें। हिय=हृदय।

[६४]

सुनु सुनु ए सखि बचन बिसेस ।
आजु देब हमे तोहि उपदेस ॥२॥

पहिलहि बैठबि सयनक सीम ।
हेरइत पिया मुख मोड़बि गीम ॥४॥

परसइत दुहु करें बारबि पानि ।
मौन रहबि पहु करइत बानि ॥६॥

जब हमें सोंपब करे कर आपि ।
साधस धरबि उलटि मोहि काँपि ॥८॥

विद्यापति कह एह रस ठाठ ।
भए गुरु काम सिखाओब पाठ ॥१०॥

३—सयनक-सीम=शय्या की एक ओर । ४—गीम=ग्रीवा, गरदन। जब प्रीतम मुख देखने लगे तब अपनी गरदन (दूसरी ओर) मोड़ लेना । ५—परसइत=स्पर्श करते । करें=हाथ से । बारबि=वारण करना, मना करना । पानि =हाथ । जब वे अंग-स्पर्श करने लगें तब दोनो हाथों से उनके हाथ को रोकना । ६—पहु=प्रभु, प्रीतम । करइत बानि=बात-चीत करते समय । ७,८—करे=हाथ में । कर=हाथ । आपि—अर्पण कर । साधस=भय । जब मैं उनके हाथ में तुम्हारा हाथ अर्पण कर तुम्हें सौंपूंगी, तो तुम संभ्रम से उलटकर काँपते हुए मुझे पकड़ना । ९—रस-ठाठ=रस की रीति । १०—भए=होकर ।

—:o:—

"वाक्यं रसात्मकं काव्यम्"—साहित्यदर्पणः

[६५]

परिहर, ए सखि, तोहि परनाम ।
हमे नहि जाएब से पिआ-ठाम ।।२।।

बचन-चातुरि हमे किछु नहि जान ।
इंगित न बूझिअ न जानिअ मान ।।४।।

सहचरि मीलि बनाबए भेस ।
बाँधए न जानिअ अपनुक केश ।।६।।

कहिओ सुनिअ नहि सुरतक बात ।
कइसे मिलब हमे माधब साथ ।।८।।

से बर नागर रसिक सुजान ।
हमे अबला अति अलप गेआन ।।१०।।

विद्यापति कह कि बोलब तोए ।
आजुक मीलब समुचित होए ।।१२।।

१—ए सखि, (मुझे) छोड़ो, मैं तुम्हें प्रणाम करती हूँ । २—ठाम =स्थान । ४—इंगित=इशारा । न मैं इशारा समझती हूँ और न मान करना जानती हूँ । ५—सहचरि=सखियाँ । बनाबए भेस=भेस बनाती हैं —मेरा श्रृंगार कर देती हैं । ६—अपनुक=अपना । ७—सुरतक बात= कामक्रीड़ा की बातें । ८—कइसे=किस प्रकार । ९—नागर=चतुर । १०—अलप=अल्प, थोड़ा । ११—तोए=तुम्हें । १२—आजुक=आज का । मीलब=मिलना ।

—:०:—

शेर दर अस्ल है वही 'हसरत'
सुनते ही दिल में जो उतर जाये ।

[६६]

काहे डरसि सखि चलु हमे संग ।
माधब नहि परसब तुअ अंग ।।२।।

एह रजनी फुल-कानन माझ ।
केओ एक भमए साजि बहु साज ।।४।।

कुसुमक घोर धनुष धरि पानि ।
मारए सर बाला जन-जानि ।।६।।

अतए चलह सखि भीतर कुंज ।
जहाँ रहए हरि महाबल पुंज ।।८।।

एत कहि आनलि धनि हरि पास ।।
पूरल बल्लभ सुख-अभिलास ।।१०।।

१—काहे=किसलिए। डरसि=डरती हो। २—परसब=स्पर्श करेंगे। ३,६—रजनी=रात । फुल-कानन=पुष्प-वन । माझ=में । एक=अकेले। कुसुमक=फूलों का। पानि=हाथ। इस रात में, पुष्प-वन में, यों नाना प्रकार शृङ्गार करके कोई एक व्यक्ति घूमता है और फूलों का कठोर धनुष हाथ में धरकर बाला स्त्रियों को खोज-खोजकर बाण मारता है। ७—अतए=अतएव, इस-लिए। ८—हरि=श्रीकृष्ण। महाबलपुंज=बड़े बलशाली। 'महाबलपुंज' कहकर सखी धैर्य देती है कि श्रीकृष्ण तुम्हें काम के बाण की चोट से बचायेंगे। ९—एत= इतना। आनलि=लाई। धनि=बाला। पास=निकट। १०—पूरल= पूरा हुआ।

[६७]

परिहर संका न कर तरास ।
साधस नहि कर, चल पिय पास ॥२॥

दुर कर दुरमति कहल मो तोए ।
बिनु दुख सुख कहिओ नहि होए ॥४॥

तिल आध दूख जनम भरि सुख ।
इथे लागि धनि किए होअह बिमुख ॥६॥

तिला एक मूँदि रहह दु नयान ।
रोगि करए जइसे औषध पान ॥८॥

चल चल सुन्दरि करह सिंगार ।
विद्यापति कह एहे सुबिचार ॥१०॥

१—परिहर=छोड़ो। तरास=त्रास, डर। २—साधस=भय। ३—दुर कर=दूर करो। दुरमति=दुर्बुद्धि। मो=मैं। तोए=तुझे। तिल आध=(मैथिली मुहावरा) एक क्षण के लिए। ६—इथे=इसलिए। किए=क्यों। होअह=होती हो। बिमुख=विमुख, विपक्ष। ७—मूंदि रहहु=मूंद रखो। दु=दो। नयान=आँखें। ८—जइसे=जिस प्रकार। ९—करह=करो। १०—एहे=यही।

A poet is not only a dreamer of dreams, his heart is the mirror of the world's emotions, his songs of gladness are the echoes of the world's laughter, his songs of sorrow reflect the tears of humanity. —*Sarojini*

श्रीकृष्ण को शिक्षा

[६८]

हमे दरसबइत कतन बेस करु
हमे हेरइत तनु झाँप ।
सुरते सिंगारि आज धनि आइलि
परसइत थर थर काँप ॥२॥

सुनु हे कान्हु कहिअ अवधारि
सकल काज हम बुझल बुझओलें
न बुझल अन्तर नारि ॥४॥

अभिनब काम नाम पुनु सुनइत
रोखए गुन दरसाइ ।
अरि सम गंजए मन पुनु रंजए
अपन मनोरथ साइ ॥६॥

अन्तर जीउ अधिक करि मानए
बाहर न गन तरासे ।
कह कबि सेखर सहज बिषय-रत
विदगधि केलि बिलासे ॥८॥

१—दरसइत=दिखा करती हुई। कतन=कितना ही। बेस करु=शृंगार करना। हेरइत=देखते। झाँप=ढाँप लेना। २—सुरते=काम-क्रीड़ा। ३—अवधारि=निश्चय करके। ४—बुझल-बुझाओलें=समझाने से समझ लिया है। अन्तर=हृदय। ५—अभिनब=नवीन। रोखए=रोष प्रकट करती है। गुन दरसाइ=गुण दिखाकर, कला प्रकट करके, चूंकि बिल्कुल ही नवीना है, अतः,

[६९]

सुन-सुन सुन्दर कन्हाई । तोहि सोंपलि धनि राई ।। २ ।।
कमलिनि कोमल कलेबर । तुहु से भूखल मधुकर ।। ४ ।।

सहज करब मधु पान । भूलह जनि पँचबान ।। ६ ।।
परबोधि पयोधर परसह । मधुकर जइसे सरोरुह ।। ८ ।।

गनइत मोतिम हारा । छलें परसब कुच भारा ।।१०।।
न बुझए रति-रस-रंग । खन अनुमति खन भंग ।।१२।।

सिरिस-कुसुम सम तनु । थोरि सहब फुल-धनु ।।१४।।
विद्यापति कवि गाब । दूतिक मिनति तुअ पाब ।।१६।।

काम का नाम सुनते ही कला प्रकट करती हुई क्रोधित हो उठती है। ६—गंजए=गंजना करती है। रंजए=प्रसन्न करती है। साइ=वह। ७—हृदय से तो (तुम्हें) प्राणों से अधिक चाहती है, किन्तु बाहर डर से प्रकट नहीं करती।

२—धनि=बाला। राई=राधा। ३—कलेबर=शरीर। ४—भूखल=भूखा हुआ। मधुकर=भौंरा। ५—सहज=स्वाभाविक ढंग से, धीरे-धीरे। करब=करना। जनि=नहीं। पँचबान=कामदेव। ७—परबोधि=प्रबोधकर, समझा-बुझाकर। पयोधर=कुच, स्तन। परसह=स्पर्श करना। ८—कुंजर=हाथी। सरोरुह=कमल। जिस प्रकार भौंरा कमल को छूता है उस प्रकार। ९—गनइत=गिनते हुए। १०—छलें=छल से। १२—अनुमति=राजी होना। १३—सिरिस कुसुम=एक कोमल फूल। १४—फुलधनु=काम का धनुष। १६—मिनति=विनती। पाब=पैर।

[७०]

प्रथम समागम भुखल अनंग ।
धनि बल जानि करब रतिरंग ॥ २ ॥
हठ नहिं करबे आइति पाए ।
बड़हु भुखल नहि दुहू करें खाए ॥ ४ ॥
चेतन कान्ह तोंहहि सब* भाँति ।
के नहि जान महते नब हाथि ॥ ६ ॥
तुअ गुन-गन कहि कत अनुबोधि ।
पहिलहि सबहि हललि परबोधि ॥ ८ ॥
हठ नहि तोरब रति-परिपाटि ।
कोमल कामिनि बिघटति साटि ॥१०॥
जावे रभस सह ताबे बिलास ।
बिमति बुझिअ जओं न जाएब पास ॥१२॥
धसि परिहरि नहि धरबिए बाहु ।
उगिलल चाँद गिजए जनि राहु ॥१४॥
भनइ विद्यापति कोमल काँति ।
कौसल सिरिस-सुमन अलि भाँति ॥१६॥

२—अनंग=कामदेव। ३—आइति पाए=वश में पाकर। ४—करें=हाथ से। ५—चेतन=चतुर। आथि=अस्ति, हो। ६—महत=महाउत। नब=नवता है, नम्र होता है। ७—अनुबोधि=समझा-बुझाकर। ९—रति-परिपाटि=रति क्रीड़ा की परिपाटी। १०—बिघटति साटि=सट्टी-घट्टी में विघटन होगा, मेल में अन्तर पड़ेगा। ११—रभस=काम-क्रीड़ा। सह=सहन करे। १२—बिमति=राजी नहीं। जओं=यदि।

* बहुत जगह 'अति आथि' पाठ है जिसका कोई अर्थ नहीं बैठता, अतः अनुमान से 'सब भाँति' पाठ कर दिया है।

[७१]

बुझब छएलपन आज ।
राहि मन रतने आनलि अति जतने
बंचि सब रमनि-समाज ॥२॥

सिरिस कुसुम जनि अति सुकुमारि धनि
आलिगब दिढ़ अनुरागे ।
निर्भय धरब देह के नहि बुझए एह
भौंरा भरें माजरि न भाँगे ॥४॥

पिरितिक बोल बोलि नियरे बइसाओब
नख हनि आनब कोल ।
नहि-नहि कर धनि कपट भुलब जनि
यदि कह कातर बोल ॥६॥

१३—एक बार छोड़कर पुनः धँसकर दोबारा आगे बढ़कर उसकी बाँह मत पकड़ना। १४—गिरय=निगल जाना। १६—जिस प्रकार भौंरा बड़े कौशल से सिरिस के फूल का रस चूसता है, उसी प्रकार।

१—छएलपन=रसिकता। २—राहि=राधा। मनि रतने=रत्नों में मनि। आनलि=लाई। बंचि=छल करके। जनि=ऐसा। आलिगन=आलिगन करना, छाती लगाना। ४—निर्भय होकर शरीर पकड़ना, यह किसे नहीं मालूम है कि भौंरे के शरीर के भार से कोमल मंजरी नहीं टूटती। ५—नियरे=निकट। नख हनि आनब कोले=नख से हनन कर, नख से कुचों को क्षत-विक्षत कर उसे गोदी में बैठा लेना। ६—नहि-नहि कर धनि=वह बाला यदि नहीं-नहीं करे। कातर बोल=दीन वचन।

---

* पहल ऐसा पाठ था—'निर्भय करब केलि केह नहि बूझे गेलि।'

मिलन

[७२]

सुन्दरि चललिह पहु-घर ना ।
चहुदिस सखि सब कर धर ना ।।२।।

जइतहु लागु परम डर ना ।
जइसे ससि काँप राहु डर ना ।।४।।

जाइतहि हार टुटिए गेल ना ।
भूखन बसन मलिन भेल ना ।।६।।

रोए रोए काजर दहाए देल ना ।
अदँकहि सिंदुर मेटाए गेल ना ।।८।।

विद्यापति कवि गाओल ना ।
दुख सहि सहि सुख पाओल ना ।।१०।।

१—चललिह=चली। पहु=स्वामी। २—चहुदिस=चारों ओर। कर=हाथ। जइतहु=जाने में। ४—ससि=चन्द्रमा। ७—रोए=रोकर। दहाए देल=दहा दिया। ८—अदँकहि=आतंक से ही, डर से।

स कविः कथ्यते स्रष्टा रमते यत्र भारती।
रसभावजुषैर्भूतैरलंकारैर्गुणोदयैः ।।

—वेंकटाचार्य।

[७३]

कौतुक चललि भवन कए सजनि गे
संँग दस चौदिस नारि ।
बिच-बिच सोभित सुन्दरि सजनि गे
जाहि घर मिलत मुरारि ॥२॥

लय अभरन कए षोड़स सजनि गे
पहिरि उतिम रँग चीर ।
देखि सकल मन मोहित सजनि गे
मुनिहुक चित नहि थीर ॥४॥

नील बसन तन घेरल सजनि गे
सिर लेल घोघट सारि ।
लहु-लहु पहु घर चलइत सजनि गे
सँकुचलि अंकम नारि ॥६॥

१—कौतुक=कुतूहलपूर्वक । चौदिस=चारों ओर । २—बिच-बिच=मध्य भाग में । ३—अभरन=आभरण, गहने । कए षोड़स=सोलह शृङ्गार करके । उतिम रंग=अच्छे रंग की । चीर=साड़ी । ४—मुनिहुक=ऋषियों का भी । थीर=स्थिर । नील बसन=नीले रंग का कपड़ा । तन घेरलि=शरीर को लपेटे हुई । घोघट=घूँघट । सारि लेल=सँभार लिया । ६—लहु-लहु=धीरे-धीरे । पहु=प्रीतम । सँकुचलि=सकुचा गई । अंकम=गोदी । प्रीतम के निकट जाने में बाला का हृदय सकुच गया ।

सखि सभ देल भवन कए सजनि गे
घुरि आइलि सभ नारि।
कर धए लेल पहु लग कए सजनि गे
हेरए बसन उघारि ॥८॥

भए बर सनमुख बोलए सजनि गे
लागल करए बिलास।
नब रस रीति पिरिति भेल सजनि गे
दुहु मन परम हुलास ॥१०॥

विद्यापति कवि गाओल सजनि गे
ई थिक नव रस रीति।
बएस जुगल समुचित थिक सजनि गे
दुहु मन परम पिरीति ॥१२॥

७—देल भवन कए=भवन कए देल=घर में ला रक्खा। घुरि आइलि=लौट आई। ८—कर धए=हाथ धरकर। पहु लग कए लेल=प्रीतम निकट ले आये। हेरए=देखता है। बसन=वस्त्र (अंचल), उघारि=उघारकर, अंचल हटाकर। ९—भए=होकर। बर=प्रीतम। लागल करए=करने लगा। बिलास=काम-क्रीड़ा। १०—नब=नवीन। हुलास=आनन्द। ११—ई=यह। थिक=है। १२—बरस=अवस्था। जुगल=दोनों को समुचित=योग्य।

Poetry is the spontaneous over flow of powerful feelings.

[७४

आहे सखि आहे सखि लए लनि जाह ।
हम अति बालिका निरदए नाह ॥२॥

गोट-गोट सखि सब गेलि बहराए ।
बजर केबाड़ पहु देलन्हि लगाए ॥४॥

ताहि अबसर सखि जागल कन्त ।
चीर सँभारइत जिब भेल अन्त ॥६॥

नहि नहि करिअ नयन ढर नोर ।
काँच कमल भमरा झिकझोर ॥८॥

जइसे डगमग नलिनिक नीर ।
तइसे डगमग धनिक सरीर ॥१०॥

भन विद्यापति सुनु कविराज ।
आगि जारि पुनि आगिक काज ॥१२॥

१—लए जाह=ले जाओ। जनि=मत, नहीं। २—नाह=नाथ, प्रीतम। ३—गोट-गोट=एक-एक कर (मैथिली मुहावरा)। गेलि=गई। बहराए=बाहर हो गई। ४—बजर=बज्रतुल्य। पहु=प्रभु, प्रीतम। देलन्हि=दिया। ६—वस्त्र हटाने का उपक्रम करते ही मालूम हुआ, मेरे प्राण निकल गये। ७—नोर=आँसू। ८—काँच कमल=अधखिला कमल। भमरा=भौंरा। ९—डगमग=हिलता-डुलता। नलिनिक नीर=कमल (के पत्ते पर) का पानी। १०—धनिक=धनि के, बाला के। १२—आग जला देती है तो भी फिर आग की आवश्यकता होती ही है। भनिता कहीं-कहीं यों है—"भनहि विद्यापति रखनुक रीति। जुग-जुग बाढ़ओ पहुक पिरीति"।

[७५]

कत अनुनय अनुगत अनुरोधि ।
पति-घर सखि पहुँचाओलि बोधि ॥२॥
बिमुखि सुतलि धनि समुखि न होए ।
भागल दल बहुराबए कोए ॥४॥
बालँमु बेसनि बिलासिनि छोटि ।
मेल न मिलए देलहु हेम कोटि ॥६॥
बसन झपाए बदन धर गोए ।
बादर तर ससि बेकत न होए ॥८॥
भुज-जुग चापि जीब जओं साँच ।
कुच कञ्चन कोरी फल काँच ॥१०॥
लग नहि सरए, करए कसि कोर ।
करे कर बारि करए कर-जोर ॥१२॥
एत दिन सैसब लाओल साठ ।
अब गए मदन पढ़ाओब पाठ ॥१४॥
गुरुजन परिजन दुअओ निबार ।
मोहर मुदल अछि मदन-भंडार ॥१६॥
भनइ विद्यापति इहो रस भान ।
सिबसिंह लखिमा देइ रमान ॥१८॥

१—कत=कितना । अनुनय=विनती । अनुबत=खुशामद। अनुरोधि=अनुरोध करके । ३—बिमुखि=दूसरी तरफ मुँह करके । ४—बहुराबए=फेरना । कोए=कौन । ५—बेसनि=व्यसनी, कामुक । विलासिनि=नायिका ।

[७६]

सखि परबोधि सयन-तल आनि ।
पिय हिय हरषि धयल निज पानि ।।२।।
छुबइत बालि मलिन भए गेलि ।
बिधु-कर मलिन कमलिनि भेलि ।।४।।
नहि नहि कहए नयन झर नोर ।
सूति रहलि राहि सयनक ओर ।।६।।
आलिंगए नीवि-बँध-बिनु खोरि ।
कर कुच परस सेह भेल थोरि ।।८।।
आँचर लेइ बदन पर झाँप ।
थिर नहि होअए थर थर काँप ।।१०।।
भनइ विद्यापति धैरज सार ।
दिन दिन मदनक होए अधिकार ।१२।

६—हेम=सोने का सिक्का। ७—गोए=छिपाकर। ८—बेकत=व्यक्त, प्रकट। ९,१०—चापि=दबाकर। साँच=संचय करना। कोरी=कोरा, अछूता। सोने के समान कुचों को कच्चे और अछूते फल समझकर दोनो हाथों से दबाकर प्राणों के समान जुगाती है। ११—लग=निकट। सरए=आती है। कोर =कोड़, गोदी। १२—करे कर बारि=अपने हाथ से (नायक) के हाथ रोक कर। करए करजोर=हाथ जोड़ती है, प्रार्थना करती है। सैसव=बचपन। साठ लाओल=संगत निभाई। निबार=निवारण किया हुआ। मोहर=मुहर देकर।

१—आनि=लाई। २—धएल=पकड़ा। पानि=हाथ। ३—बालि= बाला। ४—विधुकर=चन्द्रमा की किरणों से। ५—नोर=आँसू

[७७]

प्रथमहि गेलि धनि प्रीतम पास।
हृदय अधिक भेल लाज तरास ।।२।।

ठाढ़ि भेलि धनि अंगो न डोले ।
हेम-मुरति सनि मुखहु न बोले ।।४।।

कर धए लेल पहु पास बइसाए।
रहलि अचलि धनि बदन झुकाए ।।६।।

मुख हेरइत आँचरें झाँपि लेल ।
अंकम भरिकँ कमल मुखि लेल (?) ।।८।।

भनइ विद्यापति देह इ सुमति मति।
रस बूझ हिन्दूपति हिन्दूपति (?) ।।१०।।

६—सूति रहलि=सो रही। राहि=राधा। ओर=छोर पर (एक ओर)। खोरि=खोलना। ८—सेह=वही।

१—धनि=नायिका। ३—भेलि=हुई। ४—हेम=सोना। सनि=समान। ५—पहु=प्रभु, प्रीतम। बइसाए=बैठा लिया। ६—रहलि अचलि=निश्चल रही। ७,८—अंकम=गोद। भरिकँ-भरकर, भौंरा (कृष्ण) उसका मुख देखता था; अतः नायिका ने उसे ढाँप लिया। किन्तु ज्योंही उसने अपना मुँह ढाँपा कि मौका पाकर, नायक ने उसे गोद में ले लिया। ९—देह=दो। विद्यापति कहते हैं कि हे सुमति, अब यह (मति) अनुमति दो—कृष्ण की प्रार्थना स्वीकार करो। हिन्दूपति=राजा शिवसिंह(?)।

[७८]

जतने आएलि धनि सयनक सीम ।
पाँगुर लिखि खिति रहु नतगीम ।।२।।

सखि हे, पिया पास बैठलि राहि ।
कुटिल भौंह करि हेरए काहि ।।४।।

नबि बर नारि पहिल पिया मेलि ।
अनुनय करइत राति आध गेलि ।।६।।

कर धरि बालमु बइसाओल कोर ।
एक पए कह धनि नहि नहि बोल ।।८।।

कोर करइत मोड़ए सब अंग ।
प्रबोध न मानु, जनि बाल भुजंग ।।१०।।

भनइ विद्यापति नागरि रामा ।
अन्तर दाहिन बाहर बामा ।।१२।।

१—सयनक सीम=शय्या की सीमा में, शय्या के निकट । २—पाँगुर=पदांगुलि, पैर को अंगुलि । खिति=पृथ्वी । नतगीम=गरदन नीची किये । ३—राहि=राधा । ४—हेरए=देखती है । ५—नबि=नवीना । नवीना सुन्दरी नायिका को प्रथम-प्रथम प्रीतम से भेंट हुई । ६—अनुनय=विनय । ७—कर धरि=हाथ धरकर । बइसाओल कोर=गोदी में बिठलाया । ८—नहि नहि बोल=बस 'नहीं नहीं' का वचन कहती है—सदा नहीं नहीं बोलती है । ९—गोदी में बिठलाते ही अपने अंगों को ऐंठती है—भावभंगी दिखलाती है । १०—जनि=मानों । बालभुजंग=बच्चा साँप । १२—अन्तर=हृदय से । दाहिन=अनुकूल । बाहर=बाहर से, ऊपर से । बामा=प्रतिकूल ।

[७६]

मँगइते अधर अओंघ कर माथ ।
सहए न पार पयोधर हाथ ।।२।।

बिघटलि नीबी करें धर जाँति ।
अँकुरल मदन, धरए कत भाँति ।।४।।

कोमल कामिनि नागर नाह ।
कओन परि होएत केलि निरबाह ।।६।।

कुच कोरक तब कर गहि लेल ।
काँच बदरि अरुनिम रुचि भेल ।।८।।

लाबए चाहए नखर बिसेख ।
भौंह न आँटए (?) चाँदक रेख ।।१०।।

तसु मुख सोभा लोभे रहु हेरि ।
चाँद झपाब बसन कत बेरि ।।१२।।

१—अओंध कर=नीचे करता है । २—सहए न पार=सह नहीं सकती । पयोधर=कुच । ३—विघटलि=खुली हुई । नीबी=कोंचा, फुफनी । कर धर जाँति=हाथ से दबाकर रखती है । ४—अंकुरल=अंकुरित हुआ, पैदा हुआ । भाँति=रूप, आकार । ५—नागर=चतुर । नाह=नाथ, प्रीतम । ६—कओनें परि=किस प्रकार । ७—कुच-कोरक=स्तन रूपी कली । ८—बदरि=बेर (छोटे-छोटे कुचों की उपमा) । अरुनिम रुचि=लाल रंग की छटा । ९, १०—नखर=नख की रेखा । बिसेख=उत्तम, सुन्दर । आँटए=बराबरी करती । (जब प्रीतम) कुच पर नख-रेखा देना चाहता है, तब भौंह की (वक्रता) की बराबरी चन्द्र-लेखा नहीं कर पाती (?) । ११—तसु=उसका । १२—चाँद =चन्द्रमा (मुख) । बसन=कपड़ा (आँचल) ।

[८०]

जखन लेल हरि कँचुअ अछोड़ि ।
कत परि जुगुति कएलि अँग मोरि ॥२॥

तखनुक कहिनी कहल न जाए ।
लाजे सुमुखि धनि रहलि लजाए ॥४॥

कर न मिझाए दूर जर दीब ।
लाजे न मरए नारि कठजीब ॥६॥

अंकम कठिन सहए के पार ।
कोमल हृदय उखड़ि गेल हार ॥८॥

भनइ विद्यापति तखनुक भान ।
कओन कहए सखि होएत बिहान ॥१०॥

१—जखन=जिस समय । कँचुअ=कंचुकी, चोली । अछोड़ि लेल=उतार लिया । कत परि=कितना । जुगुति=युक्ति, उपाय । ३—कहिनी=कहानी, कथा । ४—लाजे=लाज से । ५—कर=हाथ । मिझाए=बुझता है । जर=जलता है । दीब=दीपक । दीपक (शय्या से) दूर पर जल रहा है, अतः वह नायिका के हाथ से नहीं बुझता । कवि-कुल-गुरु कालिदास के मेघदूत में एक ऐसा ही पद्य है, जिसका अनुवाद यों है —"नीवी ग्रंथी शिथिल करके वस्त्र प्रेमी छुटावे । मुग्धा प्यारी अरुण-अधरा काम क्रीड़ा दिखावे । भोली लज्जाविवश तब हो चूर्ण मुष्ठी चलावे । पै होती है विफल मणि का दीप कैसे बुझावे ।" ६—लाजे=लाज से । कठजीब (मैथिली मुहावरा)=कठोर-प्राण । ७, ८—अंकम=आलिंगन । सहए के पार=कौन सह सकता है ? उखड़ि गेल=उखड़ गया, निशान पड़ गया । ९—तखनुक=उस समय का । १०—बिहान=प्रात:काल ।

[८१]

ए हरि बलें यदि परसब मोहि ।
तिरि-बध पातक लागत तोहि ॥२॥

तोहें रस आगर नागर ढीठ ।
हमें न बुझिअ रस तीत कि मीठ ॥४॥

रस परसंग उठए मोहि काँप ।
बान हरिनि जनि करए निझाँप ॥६॥

असमय आस न पूरए काम ।
भल जन न कर बिरस परिनाम ॥८॥

विद्यापति कह बुझलहुँ साँच ।
फल पए मीठ होअए नहि काँच ॥१०॥

१—बलें=बलपूर्वक। पर सय=स्पर्श करना। मोहि=मुझे। २—तिरिबध-पातक=स्त्री के बध का पाप। तोहि=तुझे। ३—आगर=अग्रणी, श्रेष्ठ। नगर =चतुर। ४—तीत=तिक्त, कड़वा। कि=या। ५—परसंग=चर्चा। ६—मानों बाण से बेधी जाकर हरिणी उछल उठती हो। ७—कुसमय में कामदेव आशा पूरी नहीं करते हैं। ८—भलजन=भला आदमी। न कर= नहीं करते। बिरस=रसहीन, बुरा। परिनाम =अंतिम फल। अच्छे आदमी (ऐसा काम) नहीं करते जिसका परिणाम बुरा हो। ९—बझलहुँ=मैं समझी। १०—कच्चा फल भी मीठा नहीं होता।

[८२]

रति-सुबिसारद तुहु राख मान ।
बाढ़लें जौवन तोहि देब दान ।।२।।

आबे से अलप रस न पुरब आस ।
थोर सलिल तुअ न जाब पियास ।।४।।

अलप अलप रति एह चाह नीति ।
प्रतिपद चाँद-कला सम रीति ।।६।।

थोर पयोधर न पुरब पानि ।
नहि देह नख-रेख हरि रस जानि ।।८।।

भनइ विद्यापति कइसनि रीति ।
काँच दाड़िम फल ऐसनि पिरीति ।।१०।।

१—रति-सुबिसारद=कामक्रीड़ा में परम चतुर । तुहु=तुम । मान=मर्यादा । ३, ४—आबे=इस समय । से=वह । अलप=थोड़ा । पुरब=पूरेगा । सलिल=पानी । तुअ=तेरी । न जाब=नहीं जायगी । ५, ६—जिस प्रकार प्रतिपदा से चन्द्रमा थोड़ा-थोड़ा बढ़ता है, उसी प्रकार रति भी थोड़ी-थोड़ी करके बढ़नी चाहिए, यही नीति है । ७—थोर=छोटा । पयोधर=कुच । पानि=हाथ । अभी कुच छोटे हैं, उनसे तुम्हारे हाथ भी नहीं भरेंगे । ८—हे हरि, उनपर नख की रेखा मत दो—उन्हें नखों से मत बकोटो, तुम तो स्वयं रस की बात जानते हो । ९—कइसनि=किस प्रकार को । १०—दाड़िम =अनार (कुच की उपमा) । ऐसनि=इस प्रकार ।

—:o:—

"जहाँ न जाय रवि, तहाँ जाय कवि ।"

[८३]

निबि-बंधन हरि किए कर दूर ।
एहो पए तोहर मनोरथ पूर ॥२॥

हेरने कम्रोन सुख न बुझ बिचारि ।
बड़ तुहु ढीठ बुझल बनमारि ॥४॥

हमर सपथ जम्रों हेरह मुरारि ।
लहु-लहु तब हमे पारब गारि ॥६॥

बिहरसि रहसि हेरह जनु कान ।
से नहि सहबे हमर परान ॥८॥

कतहु न सुनिम्र एहन परकार ।
करए बिलास दीप लए जार ॥१०॥

परिजन सुनि सुनि तेजब निसास ।
लहु-लहु रमह, सखीजन पास ॥१२॥

भनइ विद्यापति एहो रस जान ।
सिवसिंह लखिमा-देबि रमान ॥१४॥

१—निबि बंधन=कोंचे का बंधन। किए=क्यों ? २—एहो पए=इससे भी। ४—बुझल=मैं समझ गई। ५—हेरह=देखो। ६—लहु-लहु=धीरे-धीरे। पारब गारि=गाली दूँगी। ७—बिहरसि रहसि=एकान्त में (चुपचाप) बिहार करो, देखो नहीं। ९—एहन परकार=ऐसा ढंग। १०—क्या जार (परपुरुष) दिया जलाकर काम-क्रीड़ा करता है ? ११—परिजन=पड़ोसी। तेजब निसास=निःश्वास लेना। पड़ोसी निन्दा करेंगे। १२—रमह=संभोग करो। पास=निकट।

[८४]

सुन-सुन नागर निबि-बंध छोर ।
गाँठिते नाहि सुरत धन मोर ।।२।।

सुरतक नाम सुनल हमे आज ।
न जानिअ सुरत करए कोन काज ।।४।।

सुरतक खोज करब जहाँ पाब ।
घर कि अछए नहि सखि रे सुधाब ।।६।।

वेरि एक माधव सुन मोर बानि ।
सखि सयँ खोजि माँगि देब आनि ।।८।।

बिनति करए धनि माँगे परिहार ।
नागरि-चातुरि भन कबि-कंठहार ।।१०।।

इस पद्य में राधा का विचित्र परिहास, बड़ी सफाई से वर्णित है। कृष्ण राधा से 'सुरत' माँग रहे हैं।—राधा से काम-क्रीड़ा करने को कह रहे हैं—इसपर राधा कहती है—"अरे चतुर, सुनो, मेरी नीवी का बन्धन छोड़ो। इसकी गाँठ में 'सुरत' रूपी धन नहीं छिपा पड़ा है। मैंने 'सुरत' का नाम तो आज ही सुना है, न जाने 'सुरत' (कौन है और) क्या काम करता है? हाँ, आज से मैं, जहाँ पाऊँगी, सुरत की खोज करूँगी। सखियों से पूछूँगी (सखि रे सुधाब) कि मेरे घर में है कि नहीं। माधव, एक बार मेरी बात सुन लो, सखियों से यदि प्राप्त कर सकूँगी तो खोज-ढूँढ़कर तुम्हें ला दूँगी।" यों (नायिका) विनती करती और मना कर रही है, कवि कंठहार विद्यापति नागरी नायिका की इस चातुरी का (चतुरता-पूर्ण) वर्णन करते हैं।

[८५]

हरि-कर हरिनि-नयनि धनि सोंपलि
सखिगन गेलि आन ठाम।
अबसर पाइ धनि-कर धरि नागर
विनति करए अनुपाम ।।२।।
इरिनि-नयनि धनि रामा ।
कानुक सरस परस संभाषन
मेटल लाजक नामा ।।४।।
सुखद सेज पर नागरि नागर
वइसल नवरति-साधे ।
प्रति अंग चुम्बन रस अनुमोदन
थर-थर काँपए राधे ।।६।।

मदन-सिंहासन कएल अरोहन
मोहन रसिक सुजान ।
भय-गढ़ तोड़ल अलप समाधल
राखल सकल समान ।।८।।
कह कवि-सेखर गरुअ भूख पर
करु जत थोर अहार।
अइसन दुहु तन तलफइ पुन पुन
उपजल अधिक विकार ।।१०।।

४—सरस परस=रसमय स्पर्श, आलिंगन। ५—कएल अरोहन=आरोहण किया, चढ़े। ८—अलप समाधल=थोड़े से सन्तुष्ट किया। समान=मान-सहित। ९—गरुअ=अधिक।

[८६]

*सुरत समापि सुतल बर नागर
पानि पयोधर आपी ।
कनक संभु जनि पूजि पुजारी
धएल सरोरुह झाँपी ॥२॥
सखि हे माधब केलि बिलासे
मालति रमि अलि ताहि अगोरए
पुनु रति-रंगक आसे ॥४॥
वदन मेराए धएल मुख-मंडल
कमल मिलल जनि चन्दा ।
भमर चकोर दुअओ अलसाएल
पीबि अमिअ-मकरन्दा ॥६॥
भनइ अमिअँकर सुनह मधुरपति
राधा-चरित अपारे ।
राजा सिवसिंह रूपनरायन
लखिमा देइ कंठहारे ॥८॥

१—सुरत=काम क्रीड़ा। समापि=समाप्त कर। सुतल=सो गया। पानि=हाथ। पयोधर=कुच। आपी=अर्पित कर, रख। २—कनक-संभु=सोने का महादेव। सरोरुह=कमल। ४—अलि=भौंरा। अगोरए=अगोरे रहता है। ५—मेराए=मिलाकर। धएल=रक्खा। बदन-मंडल=कृष्ण ने अपना मुख राधा के मुख से सटाकर रक्खा। ६—दुअओ=दोनों। अलसाएल=अलसा गये। ७—अमिअँकर=शिवसिंह के मन्त्री।

* रागतरङ्गिणी के अनुसार इस पद के रचयिता अमृतकर हैं, न कि विद्यापति।

[८७]

हे हरि हे हरि सुनिअ स्रवन भरि
अब न बिलासक बेरा ।
गगन नखत छल से अबेकत भेल
कोकिल कुल कर फेरा ।।२।।

चकबा मोर सोर कए चुप भेल
उठिअ मलिन भेल चंदा ।
नगरक धेनु डगर कए संचर
कुमुदनि बस मकरंदा ।।४।।

मुख केर पान सेहो रे मलिन भेल
अवसर भल नहि मंदा ।
विद्यापति भन एहो न उचित थिक
जग भरि होएत निंदा ।।६।।

१—स्रवन भरि=कान भरकर, अच्छी तरह । बिलासक बेरा=केलि का समय । २—गगन=आकाश। नखत=नक्षत्र, तारे। छल=थे। से=वह। अबेकत भेल=अव्यक्त हुए, छिप गये । फेरा=फेरा कर रही है, इधर-उधर घूम रही है। ३—सोर कए=शोरगुल करके । चुप भेल=चुप हो गये । ४—धेनु=गौ। डगर=राह। संचर=जा रही है। कुमुदिनि बस मकरंदा=कुमुदिनियों के वश में मकरंद हो गया अर्थात् ये मुँद गईं। ५—मुख केर=मुख का। सेहो=वह भी। भल=भला, अच्छा। मन्दा=बुरा। थिक=है।

[८८]

रयनि समापलि फूलल सरोज
भमि भमि भमरी भमरा खोज ।।२।।

दीप मंद रुचि अम्बर रात ।
जुगुतहि जानल भेल परात ।।४।।

अबहु तेजह पहु मोहि न सोहाए ।
पुनु दरसन होत मदन दोहाए ।।६।।

नागर राख नारि मन-रंग ।
हठ कएलें पहु हो रस-भंग ।।८।।

ततबे करिअ जत फाबए चोरि ।
पर धन लए नहि रहिअ अगोरि ।।१०।।

१—रयनि=रात । समापलि=बीत गई । सरोज=कमल । २–भ्रमरी घूम-घूमकर भ्रमर की खोज कर रही है—क्योंकि भ्रमरी को छोड़कर भ्रमर पराग के लोभ से रात भर कमलिनी-कोष में कैद था और अब उसके निकलने का समय आ गया है। ३—दीप=दीपक। मंद रुचि=क्षीण कान्ति, मलिन। अम्बर=आकाश। रात=लाल हुआ। ४—जुगुतहि=युक्ति से ही। जानल=जान गई। ५—तेजह=छोड़ो। पहु=प्रभु, प्रीतम। ६–मदन दोहाए=कामदेव की दुहाई। ७—नागर=चतुर। मनरंग=मन की रुचि। ६—फाबए=लहे।

—०—

"The beauty of poetry is to paint the human life truly."

सखी-सम्भाषण

[८९]

आजु बिपरित धनि देखिअ तोहि।
बुझए न पारिअ, संसय मोहि ॥२॥

तुअ मुख-मंडल पुनिमक चाँद ।
का लागि भए गेल ऐसन छाँद ॥४॥

नयन-जुगल भेल काजर बिथार ।
अधर निरस करु कओन गमार ॥६॥

पीनपयोधर नखरेख देल ।
सोनक कुंभ भगन जनि भेल ॥८॥

अंग बिलेपन कुंकुम भार ।
पीताम्बर धरु इथे कि बिचार ॥१०॥

सुजन रमनि तुहु कुलबति बाद ।
का सयँ भूंजलि मरमक साध ॥१२॥

कामिनि कहिनी कह सम्बाद ।
कह कवि-सेखर नहि परमाद ॥१४॥

१—बिपरित=बदली हुई। ३—पूनिमक=पूर्णिमा का। ४—का लागि=किसलिए। ऐसन छाँद=ऐसी छवि अर्थात् ऐसा मलिन रूप। ५—बिथार=विस्तार, फैल जाना। ६—अधर=ओष्ठ। ७—पीन-पयोधर=पुष्ट कुच। ८—सोनक कुम्भ=सोने के घड़े (कुच)। भगन=टूटा हुआ। कुंकुम भार=केशर से भरा हुआ अर्थात् पीतवर्ण। १०—पीताम्बर धारण किये हुई हो=शरीर पीला पड़ गया है। इथे=इसका। कि=क्या। १२-का सयँ=किसके संग। भूंजलि=भोग किया। मरमक साध=हृदय की इच्छा। १४—परमाद=शिकायत।

[९०]

आज देखलि पुनि कालि देखलि सखि
आज कालि कत भेद ।
सैसव बापुर सीमा छाड़ल
जउबन बाँधल फेद ॥२॥
सुन्दरि कनककेआसुति गोरी ।
दिन-दिन चाँद कला सम बाढ़लि
जउबन सीमा तोरी ॥४॥
बाल पयोधर वदन सहोदर
अनुमानिअ अनुरागे ।
कओन पुरुष करें परसए पाओल
जे तनु जिनल परागे ॥६॥
मन्द हास बंकिम कए दरसए
चंगिम भौंह विभंगे ।
लाज बेआकुलि सॅमुख न हेरए
आओल नयन-तरंगे ॥८॥
विद्यापति कविवर एह गाबए
नब जौबन नब कन्ता ।
राजा सिवसिंह ए रस जानए
मधुमति देबि सुकन्ता ॥१०॥

२—बापुर=बेचारा। फेद (अस्पष्ट)। ३—कनककेआसुति=स्वर्णवर्ण का एक प्रकार का फूल। ५, ६—बाल पयोधर=छोटे-छोटे कुच। बदन सहोदर=मुख के सदृश लाल। तुमने ऐसे किस पुरुष के हाथ का स्पर्श पाया है जिसने अपने पराग (सौरभ) से तुम्हारे शरीर को जीत लिया है। अनुमानिअ=अनुमान करते हैं। जिनल परागे=पराग को जीत लिया—पीला पड़ गया। ७—चंगिम=सुन्दर। ८—सँमुख=सामने।

६१

सामरि हे झामरि तोर देह ।
कह कह का सए लाम्रोल नेह ॥ २ ॥

नींद भरल छलि लोचन तोर ।
कोमल बदन कमल-रुचि चोर ॥ ४ ॥

निरस धुसर करु अधर पँवार ।
कोन कुबुधि लुटु मदन-भंडार ॥६॥

कोन कुमति कुच नख-खत दल ।
हा-हा सम्भु भगन भए गेल ॥८॥

दमन-लता सम तनु सुकुमार ।
फूटल बलय टुटल गृम हार ॥१०॥

केस कुसुम तोर, सिरक सिंदूर ।
अलक तिलक हे सबहु गेल दूर ॥१२॥

भनइ विद्यापति रति अबसान ।
राजा सिवसिंह ई रस जान ॥१४॥

१—सामरि=श्यामा, सुन्दरी। झामरि=मलिन। २—का सयँ=किससे। लाम्रोल=लगाया। ३—अछि=है। ४—कोमल मुख कमल की शोभा चुराने वाला (लाल) हो गया है। ५—धुसर=धूसर, भूरा। पँवार=प्रवाल, मूँगा। ७—खत=क्षत, घाव। ६—दमन-लता=द्रोण पुष्प की लता। १०—बलय=हाथ की चूड़ी। गृम=ग्रीवा, गला। ११—कुसुम=फूल। १२—अलक=आलता, महावर। १३—अवसान=समाप्ति।

[६२]

ए धनि ऐसन कहब मोहि ।
आजु जे कैसन देखिय तोहि ।।२।।

नयन बयन आनहि भाँति ।
कहइत कहिनि भूलसि पाँति ।।४।।

सुरँग अधर बिरँग भेलि ।
का सयँ कामिनि कएलि केलि ।।६।।

बेकत भए गेल गुपुत काज ।
अतए ककर करह लाज ।।८।।

सघन जघन काँपए तोर ।
मदन मथन कएल जोर ।।१०।।

गोर पयोधर रातुल गात ।
नखर आँचर झापसि हाथ ।।१२।।

अमिअ-सागर तुहु से राहि ।
मुकुंद मातग बिहर ताहि ।।१४।।

कह कबि-सेखर कि कर लाज ।
कह न कहिनी सखि समाज ।।१६।।

३—आनहि=अन्य ही। ५—सुरंग=लाल। बिरंग=मलिन। ७—बेकत=व्यक्त, प्रकट। ८—अतए=अतएव। ककर=किसकी। ९—सघन=पुष्ट। जघन=जाँघ। ११, १२—रातुल=लाल। गोर कुचों का रंग लाल हो गया है। नखर=नखों की रेखा। १३—अमिअ=अमृत। राहि=राधा। १४—मुकुन्द-मातंग=कृष्ण रूपी मत्त हाथी।

[६३]

आजु देखिअ सखि बड़ि अनमनि सनि।
बदन मलिन सन तोरा ।
मन्द बचन तोहि कओने कहल अछि
से न कहिअ किअ मोरा ।।२।।

आजुक रयनि सखि कठिन बितलि अछि
काम रभस कर मंदा ।
गुन-अबगुन पहु एकओ न बुझलन्हि
राहु गरासल चन्दा ।।४।।

अधर सुखाएल केस अरुझाएल
घामे तिलक बहि गेला ।
बारि बिलासिनि केलि न जानथि
भाल अरुन उड़ि गेला ।।६।।

भनइ विद्यापति सुन बर जौबति
ताहि कहबें किअ बाधे ।
जे किछु पहु देल आँचल बाँधि लेल
सखि सभ कर उपहासे ।।८।।

१—अनमनि=अनमनी, उदासीन। सनि=समान। बदन=मुख। ३—मंद=बुरा। अछि=है। ३—रयनि=रात। रभस=कामक्रीड़ा। मंदा=बुरी तरह से। ४—पहु=प्रीतम। ५—अधर=ओष्ठ। घामे=पसीने से। तिलक=टीका। ६—बारि=बालिका। भाल अरुन उड़ि गेला=मस्तक का सिंदूर-बिन्दु नष्ट हो गया। ७—किअ=क्यों। बाधे=बाधा देना, रोकना। ८—उपहासे=निंदा।

[६४]

न कर न कर सखि मोहि परिबोध ।
जिब किअ देब तन्हिक अनुरोध ॥२॥

अलप बयस हम कान्ह से तरुना ।
अतिहि लाज डर अतिसे करुना ॥४॥

लोभे निठुर हरि कएलन्हि केलि ।
कि कहब जामिनि जत दुख देलि ॥६॥

हठ भेल रस-रङ्ग हरल गेआन ।
निबि-बँध तोड़ल कखन के जान ॥८॥

देल आलिंगन भुज-जुग चापि ।
तखन हृदय मोर ऊठल काँपि ॥१०॥

नयन बारि दरसाओलि रोइ ।
तबहु कान्ह उपसम नहि होइ ॥१२॥

अधर सुरस मोर कएलन्हि मन्द ।
राहु गरसि निसि तेजल चन्द ॥१४॥

कुच-जुग देलन्हि नख-परहार ।
केहरि जनि गज-कुम्भ बिहार ॥ १६ ॥

भनइ विद्यापति रसवति नारि ।
तुहु से चेतन लुबुध मुरारि ॥१८॥

६—जामिनि=रात । जत=जितना । ७—कखन=कब । भुज-जुग=दोनो हाथ । चापि=दबाकर । १०—तखन=उस समय । ११—उपसम=शान्त, ठंढा । १३—अधर=ओष्ठ १४—तेजल=छोड़ दिया । १५—नख-परहार=

[६५]

कि कहब हे सखि आजुक बिचार ।
स सुपुरुष मोहि कएल सिंगार (?) ॥२॥

हँसि-हँसि पहु आलिंगन देल ।
मनमथ अंकुर कुसुमित भेल ॥४॥

आँचर परसि पयोधर हेरु ।
जनम पंगु जनि भेटल सुमेरु ॥६॥

जब निबि-बंध खसाओल कान ।
तोहर सपथ हम किछु जदि जान ॥८॥

रति-चिन्हे जानल कठिन मुरारि ।
तोहर पुने जीअलि हमे नारि ॥१०॥

कह कवि-रंजन सहज मधु राई ।
न कह सुधामुखि गेल चतुराई ॥१२॥

नखों का प्रहार । १६—केहरि=सिंह । गज-कुम्भ=हाथी का मस्तक । बिदार=फाड़ना । १८—चेतन=चतुरा । लुबुध=लुब्ध, लुभाया ।

२—कएल=किया । ३—पहु=प्रीतम । ४—मनमथ=कामदेव । कुसुमित=फूला हुआ । कामदेव रूपी अंकुर फूल उठा—काम का पूर्ण विकास हुआ । ५—आँचर=अंचल । पयोधर=कुच । हेरु=देखना । ६—पंगु=पगहीन । जनि=मानों । ७—खसाओल= (खोलकर) गिरा दिया । कान=कृष्ण । ६—रति के चिह्न से जाना कि कृष्ण बड़े कठोर-हृदय हैं । १०—पुने=पुण्य से । जीअलि—जीती बची । ११—सहज मधु राई=राई (राधा) स्वभावतः ही मधु (सदृश) है । १२—गेल चतुराई=चतुरता गई ।

[६६]

दिढ़ परिरम्भन पीड़लि मदने ।
उबरि अइलिहुँ सखि पुरबक पुने ।।२।।
टुटि छिड़ियाएल मोतिम हार ।
सिन्दुर लोटाएल सुरंग पँवार ।।४।।

सुन्दर कुच-जुग नख-खत भरी ।
जनि गज कुंभ बिदारल हरी ।।६।।
अधर दसन देखि जिब मोरा काँपे ।
चाँद-मंडल जनि राहुक झाँपे ।।८।।

समुद ऐसन मिसि न पारिए ऊर ।
कखन उगत मोर हित भए सूर ।।१०।।
हमे न जाएब सखि तन्हि पिया-ठाम ।
बरु जिब मारि नड़ाबथि काम ।।१२।।

भनइ विद्यापति तेज भय लाज ।
आगि जारए पुनु आगिक काज ।।१४।।

१—दिढ़ परिरम्भन=गाढ़ आलिगन । पीड़लि=पीड़ित हुई । मदने=काम द्वारा । २—उबरि अइलिहुँ=मैं बच आई । पुने=पुण्य से । ३—छिड़ियाएल=बिखर पड़ा । ४—सुरंग=लाल । पँवार=प्रबाल, मूँगा । ५—कुच=स्तन । युग=दो । नख-खत=नखों द्वारा किये गये घाव । ६—गजकुम्भ=हाथी का मस्तक । बिदारल=विदीर्ण किया, चीर-फाड़ डाला । हरी=सिंह । ओष्ठ पर दाँतों का आक्रमण करना देख मेरे प्राण काँप उठे । राहुक झाँपे=राहु का आक्रमण । ९—समुद=समुद्र, सागर । ऐसन=समान । ऊर=ओर, सीमा ।

[६७]

कि कहब हे सखि रातुक बात ।
मानिक पड़ल कुबानिक हाथ ॥२॥

काच कंचन नहि जानए मूल ।
गुंजा रतन करए समतूल ॥४॥

जे किछु कमु नहि कला रस जान ।
नीर खीर दुहु करए समान ॥६॥

तन्हि सएँ कैसन पिरिति रसाल ।
बानर-कंठ कि मोतिम माल ॥८॥

भनइ विद्यापति एह रस जान ।
बानर-मुँह की सोभए पान ॥१०॥

१०—उगत=उगेगा। सूर=सूर्य। ११—हमें=मैं। तन्हि=उस। १२—बरु =भले ही। नड़ाबथि=छोड़ दे। १४—आग जलाती है, किन्तु पुनः आग ही की जरूरत होती है।

१—कि कहब=क्या कहूँ। रातुक=रात की। २—मानिक=माणिक्य, मणि। पड़ल=पड़ गया। कुबानिक=अपटु व्यापारी। ३—कंचन=सोना। मूल=मूल्य की। ४—गुंजा=एक प्रकार का लाल फल जो जंगल में विशेष होता है, वनवासी इसकी माला बनाते है, घंघची। रतन=रत्न, मणि। समतूल=समान। ६—नीर=पानी। खीर=क्षीर, दूध। ७—तन्हि सय= उनसे। रसाल=रसमय। ८—बानर=बंदर। कि=क्या। ९—एह=यह। १०—की=क्या। सोभए=शोभता है।

[९८]

पहिलुक परिचय पेमक संचय
रजनी आध समाजे ।
सकल कला-रस सँभरि न भेले
बैरिन भेलि मोरि लाजे ॥२॥

साए-साए, अनुसए रहलि बहुते ।
तन्हिहि सुबन्धु पुनि कहिअ पठाइअ
जओं भमरा होअ दूते ॥४॥

खनहि चीर धर खनहि चिकुर गह
करए चाह कुच भंगे ।
एकलि नारि हमे कत अनुरंजब
एकहि बेरि सब रंगे ॥६॥

१—पहिलुक=प्रथम बार का। परिचय=जान-पहचान । पेमक=प्रेम का। रजनी=रात। पहली बार का परिचय था, आधी रात को भेंट हुई थी। २—सँभरि न भेले=मैं सँभल न सकी। भेलि=हुई । ३—साए=सखि । अनुसाए=अनुताप, पछतावा। रहलि=रह गया। ४—तन्हिहि=उनके। कहिअ पठाइअ=बोल पठाना, बुला भेजना। जओं=यदि। भमरा=भ्रमर, भौंरा। ५—खनहि=कभी। चीर=साड़ी। चिकुर=केश। गह=पकड़ता। कुच-भंगे=कुच को विदीर्ण करना। ६—एकलि=अकेली। कत=कितना। अनुरंजन=अनुरंजन करूँगी, प्रेम निबाहूँगी। बेरि=बार।

तखन बिनय जत से सब कहब कत
कहए चाहल कर जोली ।
नब रस-रंग भंग भए गेल सखि
ओर धरि भेल नहि बोली ।।८।।

भनइ विद्यापति सुनु बरजौबति
पहु अभिमत अभिमाने ।
राजा सिवसिंह रूपनराएन
लखिमा देइ रमाने ।।१०।।

७—तखन=उस समय। जत=जितना। से=वह। कहब=कहूँगी। कत=कितना। कहए चाहल=कहना चाहा। कर-जोली=हाथ जोड़कर। ८—नव=नवीन, नया। भंग भए गेल=भंग हो गया। ओर=अंत। ओर धरि भेल न बोली=अन्त तक कह भी न सके—साफ-साफ बात भी नहीं कह सके। ७-८—इस पद का तात्पर्य यह है कि समागम के समय श्रीकृष्ण यह देखकर कि राधा उनकी प्रत्येक चेष्टा का यथोचित समाधान नहीं करती, दोनों हाथ जोड़कर उस समय उनकी प्रार्थना करने लगे। यों, ऐन मौके पर दोनों हाथ प्रार्थना के लिए जोड़े जाने के कारण रति-रंग में भंग हो गया। फिर तो कृष्ण के मुख से बोली तक न निकली। इस पद का यथार्थ मर्म विदग्ध पाठक ही समझ सकेंगे। ९—पहु=प्रभु, प्रीतम। अभिमत=युक्ति-युक्त।

कौतुक

[९९]

उठ उठ माधव कि सुतसि मंद।
गह्न लाग देखु पुनिमक चंद ।।२।।

हार - रोमाबलि यमुना - गंग।
त्रिबलि त्रिबेनी बिप्र अनंग ।।४।।

सिंदुर-तिलक तरनि सम भास।
धूसर मुख-ससि नहि परगास ।।६।।

एहन समय पूजह पँचबान।
होअ उगरास देह रतिदान ।।८।।

पिक मधुकर पुर कहइत बोल।
अलपओ अबसर दान अतोल ।।१०।।

विद्यापति कवि एहो रस भान।
राए सिवसिंघ सब रसक निधान ।।१२।।

१—मंद=असमय। २—गहन=ग्रहण। ३, ४—रोमाबलि=कमर के निकट केशों की पंक्ति। त्रिबलि=पेट में पड़ी तीन रेखाएँ। अनंग=कामदेव। हार और रोमावली क्रमशः गंगा और यमुना हैं, त्रिवली ही त्रिवेणी है और कामदेव ही विप्र है। ५—सिंदूर-तिलक=सिंदूर का टीका। तरनि=सूर्य। भास=प्रकाशित। ६—धूसर=धूमिल, प्रभाहीन। परगास=प्रकाश। ७—एहन=ऐसा। पँचबान=कामदेव। ८—होअ उगरास=उगरह होगा, ग्रहण छूटेगा। देह रतिदान=रति का दान दो। ९—पिक=कोयल। मधुकर=भौंरा। पुर कहइत बोल=गाँव में कहता फिरता है। १०—अलपओ=थोड़ा भी। अतोल=अनंत।

[१००

त्रिबलि तरंगिनि पुर दुग्गम जानि,
मनमथे पत्र पठाउ।
जौबन-दलपति तोहि समर लागि
ऋतुपति दूत बढ़ाउ ॥२॥

माधव, अब देखु साजिए बाला।
तसु सैसबे तोहें जे संतापल
से सरिआउति बाला ॥४॥

कुंडल चक्क तिलक अंकुस कए
चंदन कबच अभिरामा।
नयन कमान कटाख बान दए
साजि रहल अछि बामा ॥६॥

सुन्दरि साजि खेत चलि आइलि
विद्यापति कवि भाने।
राजा सिवसिंह रूपनराएन
लखिमा देइ बिरमाने ॥८॥

१—त्रिबलि=पेट में पड़ी तीन रेखाएँ। तरंगिनी=नदी। त्रिबली रूपी नदी के तट पर (बसे हुए) नगर को दुर्गम जान कामदेव रूपी राजा ने (उसे विजय करने को) पत्र भेजा। २—दलपति=सेनापति। समर लागि=युद्ध के लिए। ऋतुपति=बसंत। ४—तसु=उसके। ६—तोहें=तुमने। संतापल=दुःख दिया। ५—कुण्डल चक्क=कुण्डल (कर्णफूल) चक्र है। तिलक अंकुस—टीका ही अंकुश है। चंदन का कवच=चंदन लेप ही शरीर त्राण है। ६—कमान=धनुष। ७—खेत=युद्धभूमि।

[१०१]

अम्बर बदन झपाबह् गोरि।
राज सुनइ छिअ चाँदक चोरि ॥२॥
घरें घरें पहरि गेल अछि जोहि।
एखने दूखन लागत तोहि ॥४॥
कतए नुकाएत चाँदक चोर।
जतहि नुकाएत ततहि उजोर ॥६॥
हास-सुधारस न कर उजोर।
बनिक धनिक धन बोलब मोर ॥८॥
अधर समीप दसन कर जोति।
सिन्दुर सीम बैसाउलि मोति ॥१०॥
भनइ विद्यापति होहु निरसंक।
* चाँदहु काँ किछु लागु कलंक ॥१२॥

१—अम्बर=वस्त्र। बदन=मुख। झपाबह्=ढाँप लो। २—चाँदक= चन्द्रमा की। ३—पहरि=पहरी, पहरुआ। गेल अछि जोहि=ढूँढ़ गया है। ४—दूषन=दोष, कलंक। ५—कतए=कहाँ। नुकाओब=छिपेगा। ६—उजोर=प्रकाश। ७, १०—हास=हँसी। सुधारस=अमृत का रस। दसन= दाँत। बैसाउलि=बैठाया। हँसकर प्रकाश मत करो, धनी व्यापारी कहेंगे कि ये मेरे ही धन हैं (क्योंकि) ओष्ठ के निकट दाँत प्रकाश फैला रहे हैं (जो मुक्ता के समान है) और सिदूर-बिन्दु मोतो-से चमक रहे हैं। ११—होहु=होओ। १२—थिक=है। चाँद (और तुम्हारे मुख) मे भेद है, क्योंकि उसमें कुछ कलंक लगा हुआ है।

---

* कहीं-कहीं, पंक्ति ५-६ इस प्रकार है :—

मुन-सुन सुन्दरि हित उपदेस
सपनहु जनु हो विपद कलेस ॥६॥

[१०२]

लोलुअ बदन-सिरी अछि धनि तोरि ।
जनु लागहि तोहि चाँदक चोरि ॥२॥

दरसि हलह (?) जनु हेरह काहु ।
चाँद भरम मुख गरसत राहु ॥४॥

धवल नयन तोर जनि तरुआर ।
तीख तरल तेहि कटाखक धार ॥६॥

निरबि निहारि फाँस गुन जोलि ।
बाँधि हलब तोहि खंजन बोलि ॥८॥

सागर-सार चोराओल चंद ।
ता लागि राहु करए बड़ दंद ॥१०॥

भनइ विद्यापति होउ निरसंक ।
चाँदहु काँ किछु लागु कलंक ॥१२॥

१—लोलुअ=सुन्दर। बदन-सिरी=वदनश्री, मुख की शोभा। अछि=अस्ति, है। धनि=स्त्री। २—जनु=नहीं। ३, ४—दरसि हलह=देखकर (झटपट) हट जाओ (?) 'शृंगार तिलक' में यों लिखा है—"झटिति प्रविश गेहे मा बहिर्तिष्ठ कान्ते, ग्रहण-समय-वेला वर्त्तते शीतरश्मेः। तव मुखमकलङ्कं वीक्ष्य नूनं स राहुः, ग्रसति तव मुखेन्दु पूर्णचन्द्रं विहाय।" ५—धवल=उजला। जनि=ऐसा। तरुआर=तलवार। ६—तीख=तीक्ष्ण। कटाखक=कटाक्ष की। ७, ८—निरबि=बहेलिया। फाँस गुन=गुण रूपी फाँस में। जोलि=जोड़कर, बाँधकर। बाँधि हलब=बाँध लेगा। बोलि=समझकर। ९—सागर-सार=अमृत। १०—दंद=द्वन्द्व।

[१०३]

साँझक बेरि उगल नव ससधर ।
भरम बिदित सबताहु ।।
कुंडल - चक्र तरास नुकाएल ।
दूर भेल हेरथि राहु ।।२।।

जनु बइससि रे वदना हाथ चढ़ाई।
तुअ मुख चंगिम अधिक चपल भेल
कति खन धरब लुकाई ।।४।।

रातोपल जनि कमल बइसाओल
नील नलिनि दल तहु ।
तिलक कुसुम तहु माझ देखि कहु
भमर आबथि लहु लहु ।।६।।

पानि पलब-गत अधर बिम्ब-रत
दसन दाड़िम बिज तोरे ।
कोर दूर भेल, पास न आबए
भौंह धनुहि के भोरे ।।८।।

१-२—सबताहु=सर्वत्र ही। सर्वत्र ही यह भ्रम फैल गया कि संध्या के समय नवीन चन्द्र का उदय हुआ। २—कुंडल-चक्र=कुंडल (कर्णफूल) रूपी चक्र। नुकाएल=छिपा हुआ। ३—वदना हाथ चढ़ाई=मुख हाथ पर रखकर। ४—चंगिम=सुन्दरता। कति खन=कबतक। ५—रातोपल=

[१०४]

बड़ कौसल तुअ राधे !
किनल कन्हाई लोचन आधे ।।२।।

ऋतुपति हटबए नहि परमादी ।
मनमथ मधथ उचित मूलबादी ।।४।।

द्विज पिक लेखक मसि मकरंदा ।
काँप भमर-पद साखी चंदा ।।६।।

बहि रति-रंग लिखापन माने ।
श्री सिवसिंह सरस कवि भाने ।।८।।

लाल कमल (हाथ) । कमल=(मुख) । नील नलिनी=नील कमल (आँखें) । तहु=वहाँ भी । ६—लहु-लहु=धीरे-धीरे । ७—पानि-पलब-गत=हाथ पल्लव के समान है। अधर=ओष्ठ । बिम्ब-रत=बिम्ब फल के समान लाल । दाड़िम बिज=अनार के दाने । ८—कीर=सुग्गा । भोरे=भ्रम में ।

१—कौसल=चतुरता । किनल=क्रय किया, खरीदा । ३—लोचन आधे= अधी आँख से, एक कटाक्ष से। ऋतुपति=वसन्त । हटबए=हाट का मालिक (मैथिली प्रयोग)—तौलनेवाला । नहि परमादी=प्रमादी नहीं, बुद्धिमान् । ४—मनमथ=कामदेव । मधथ=मध्यस्थ, दलाल । मूल=मूल्य । बादी= कहनेवाला । द्विज पिक लेखक=कोयल-रूपी ब्राह्मण लेखक है । मसि= रोशनाई । मकरन्दा=पराग । ६—काँप=काँड़े की कलम । भमर-पद=भौंरे का पैर । साखी=साक्षी, गवाह । बहि=दस्ताबेज । रति-रंग=काम-विलास । लिखापन माने=मान ही लिखाने का शुल्क है । इस पद्य का संस्कृतानुवाद स्वयं विद्यापति ने (?) यों किया है—"रत्नाकरसुता भार्या यस्य

[१०५]

कंचन गढ़ल हृदय हृथिसार ।
तें थिर थम्भ पयोधर भार ।।२।।

लाज-सिकर घर दृढ़ कए गोए ।
आनक बचन फोलह जनु कोए ।।४।।

दूर कर आगे सखि चिन्ता आन ।
जउबन-हाथि करिअ अबधान ।।६।।

मनसिज-मदजल जओं उमताए ।
धरिहसि, पियतम-आँकुस लाए ।।१०।।

जाबे सुमत नहि ताबे अगोर ।
मसइते निबारिहसि मानस चोर ।।८।।

भन विद्यापति सुनु मतिमान ।
हाथि महते नब के नहि जान ।।१२।।

कृष्णस्य राधिके । लोचनार्द्धेन स क्रीतस्त्वया ते कौशलम्महत् ।। हट्टाधिपो वसन्तर्तु रप्रमादी विचक्षणः । योग्यमूल्यार्थवादी च मध्यस्थो मन्मथोऽभवत् । भ्रमरस्य पदं कर्पो लेखकः कोकिलो द्विजः । अभूत् कृष्ण-क्रये राधे शशो पात्रं मसी मधु ।। बहिर्नतिरतिक्रीडा मानो वेदन-लेखकः । कृष्णस्य शिवसिंहेन वाणी विद्यापतेः कवेः ।।"

१—कंचन=सोना । हथिसार=हस्तीशाला । २—थिर=स्थिर । थम्भ=स्तम्भ, खम्भा । पयोधर=कुच । ३—सिकर=शृंखला, जंजीर । गोए=छिपाकर । ४—आनक=दूसरे के । फोलह जनु कोए=कोई मत खोलो । ६—जवानी रूपी हाथी के विषय में सावधानता रखो । ७—मनसिज=कामदेव । मदजल=हाथी के मस्तक से चूनेवाला पानी । उमताए=

[१०६]

कउाड़ पठाओलें पाव नहि घोर ।
घीव उधार माँग मतिभोर ।।२।।

बास न पावए माँग उपाति ।
लोभक रासि पुरुष थिक जाति ।।४।।

कि कहब आज की कौतुक भेल ।
अपदहि कान्हक गौरब गेल ।।६।।

आएल बइसक पाब पोआर ।
सेजक कहिनी पूछए बिचार ।।८।।

ओछाओन खँड़तरि पलिया चाह ।
आओर कहब कत अहिरिनि नाह ।।१०।।

भनइ विद्यापति एहु गुनमंत ।
सिरि सिवसिंघ लखिमा देइ कंत ।।१२।।

पागल हो । पिअतम-आँकुस=प्रीतम रूपी अकुश । ९—सुमत=मत में आ जाय । १०—मुसइते=(मुच् धातु) खोलने से । मनिहसि=मना करना । १२—गहते=महावत से ।

१—कउड़ी=कौड़ी । पठाओलें—भेजने पर । घोर=मट्ठा । २—घीव=घी । मतिभोर=मूर्ख । ३—बास=रहने की जगह । उपाति=खाद्यसामग्री, जो आदरणीय अतिथि को भोजनार्थ समर्पित की जाती है । लोभक रासि=लोभ का खजाना । थिक=है । ६—अपदहि=स्थान पर, बुरी जगह । ७—पोआर=पयाल, पुआल । ८—ओछाओन–ओछावन=बिछावन । खँड़तरि=

अभिसार

[१०७]

धनि धनि चलु अभिसार ।
सुभ दिन आजु राजपथ मनमथ
अपन किरीति बिथार ।।२।।

गुरुजन नयन अन्ध करि आओल
बांधब तिमिर बिसेख ।
तुअ उर फुरत बान कुच लोचन
महुमंगल करि लेख (?) ।।४।।

कुलबति धरम करम भय अब सब
गुरु-मंदिर चलु राखि ।
प्रियतम संग रंग करु चिर दिन
फलत मनोरथ साखि ।।६।।

नीरद बिजुरि बिजुरि सँग नीरद
किंकिनि गरजन जान ।
हरखए बरखए फुल सब साखी
सिखि-कुल दुहु गुन गान ।।८।।

१—अभिसार=गुप्त मिलन । २—मनमथ=काम । बिथार=विस्तार । ३—गुरुजन=बड़े लोग । बांधब=बन्धु, मित्र । तिमिर=अन्धकार । ४—फुरत=फड़कना । उर=हृदय । लेख=समझो । ६—साखि=शाखी, वृक्ष । ७—नीरद=मेघ । संग=साथ । मेघ बिजली के साथ रहता है और बिजली मेघ के साथ (यों ही राधा कृष्ण के साथ और कृष्ण राधा के साथ) । ८—साखी=वृक्ष । सिखिकुल=मोर ।

[१०८]

कह कह सुन्दरि न कर बेग्राज ।
देखिग्र ग्राज तुग्र ग्रपरुब साज ।।६।।

मृगमद पंक करसि ग्रंगराग ।
कोन नागर परिनत होग्र भाग ।।४।।

पुन-पुन उठसि पछिम दिसि हेरि ।
कखन जाएत दिन कत ग्रछि बेरि ।।६।।

नूपुर उपर करसि कसि थीर ।
दृढ़ कए पहिरसि तम सम चीर ।।८।।

उठसि बिहँसि हँसि तेजिग्र सार ।
तोर मन भाव सघन ग्रँधिग्रार ।।१०।।

भनइ विद्यापति सुनु बर नारि ।
धैरज धरु मन मिलत मुरारि ।।१२।।

१—बेग्राज=बहाना । ३—मृगमद पंक=कस्तूरी का लेप (जो काला होता है) । ४—किस नायक का भाग्य परिणत हुग्रा=किसका भाग्योदय हुग्रा है । ५—हेरि=देख । ६—कखन=कब । कत=कितना । ग्रछि—ग्रस्ति=है । बेरि=समय । ७—नूपुर को पैर के ऊपरी भाग में कसकर स्थिर करती हो जिसमें चलने पर शब्द न हो । ८—तम-सम=ग्रन्धकार के समान काला । ९—तेजिए सार=गम्भीरता त्यागकर । १०—तोर=तुम्हारे । भाव=ग्रच्छा लगता है । ग्रँधियार=ग्रन्धकार ।

[१०६]

माधव, धनि आएलि कत भाँति ।

प्रेम-हेम परखाओल कसौटी
भादब कुहु-तिथि राति ॥२॥

गगन गरज घन ताहि न गन मन
कुलिस न कर मुख बंका ।
तिमिर - अंजन जलधार धोए जनि
ते उपजाबति संका ॥४॥

भाँग भुजग सिर, करि अभिनय करें
झाँपए फनिमनि दीप ।
जानि सजल घन से देअ चुम्बन
तें तुअ मिलन समीप ॥६॥

नारि - रतन धनि नागर ब्रजमनि
रचि गुन पहिरल हार ।
गोविन्द चरन मन कह कविरंजन
सफल भेल अभिसार ॥८॥*

१—हेम=सोना। कसौटी भादब कुहु-तिथि राति=भादो की अमावस्या की रात-रूपी कसौटी पर। ३—गगन=आकाश। कुलिस=बज्र, ठनका। मुख बंका=मुख टेढ़ा करना, विमुख करना। ४—तिमिर-अंजन=अन्धकार-रूपी अंजन का। जनि=मानों। सर्प की मणि को हाथ से ढाँप लेती है। ६—इस भाव का पद गीतगोविन्द में यों है—श्लिष्यति चुम्बति जलधर-कल्पम्। हरिरुपगत इति तिमिरमनल्पम् ॥ ७—धनि=बाला (राधे)। नागर=नायक (कृष्ण)।

* भनिता से प्रतीत होता है, यह पद विद्यापति रचित नहीं है।

[११०]

चन्दा जनि उग आजुक राति ।
पिया के लिखिअ पठाओब पाँति ।।२।।

साओन सएँ हम करब पिरीति ।
जत अभिमत अभिसारक रीति ।।४।।

अथवा राहु बुझाएब हँसी ।
पिबि जनि उगिलह सीतल सभी ।।६।।

कोटि रतन जलधर तोहें लेह ।
आजुक रयनि घन तम कए देह ।।८।।

भनइ विद्यापति सुभ अभिसार ।
भल जन करथि परक उपकार ।।१०।।

१—जनि=मत। उग=उदित होओ। २—पठाओब=पठाऊँगी, भेजूंगी। पाँति=पत्र। ३—साओन सएँ=श्रावन मास मे। ४—अभिनत=मनोऽनुकूल। जो अभिसार करने की निश्चित रीति है—निश्चित काल है। ६—पिबि=पीकर। उगिलह=उगल दो। ससी=चन्द्रमा। ७—जलधर=मेघ। लेह=लो। ८—रयनि=रजनी, रात। घन=घना, निबिड। तम=अन्धकार। देह=दो। १०—करथि=करते हैं। परक=दूसरे का।

—:०:—

Poetry is an emotion realized in tranquility.

—*Wordsworth*

[१११]

आज मएँ हरि-समागम जाएब
कत मनोरथ भेल ।
घर गुरुजन निंद निरूपइते
चान्द उदय देल ॥२॥

चन्दा भलि नहि तुअ रीति ।
एहि भाँति तोहि कलंक लागल
तैओ न गुनह भीति ॥४॥

जगत नागरि मुह जिनइते
गगन गेलाह हारि ।
ततहु राहु गरास पड़ला
देब तोहि कि गारि ॥६॥

एक मास बिहि तोहि सिरिजए
कतन जतन बले ।
दोसर दिन पुर न रहसि
एही पापक फले ॥८॥

भन विद्यापति सुनह जुबति
न कर चाँदक साति ।
दिना सोरह चाँदक आइति
ताहि पर भलि राति ॥१०॥

२—निंद निरूपइते = नींद की प्रतीक्षा करते । ४—भीति = डर ।
५—संसार की नागरियों के मुख को जीतने के प्रयास में हारकर आकाश में

[११२]

गगन अब घन मेह दारुन, सघन दामिनिझ लकई ।
कुलिस पातन सबद झनझन, पबन खरतर बलगई ।।२।।

सजनी, आजु दुरदिन भेल ।
कंत हमर नितांत अगुसरि संकेत-कुंजहि गेल ।।४।।

तरल जलधर बरिख झरझर, गरज घन घनघोर ।
साम नागर कइसे एकसर पंथ हेरए मोर ।।६।।

सुमरि मोर तनु अबस भेल जनि अतिसे थर थर काँप ।
इ मोर गुरुजन नयन दारुन, घोर तिमिरहि झाँप ।।८।।

तुरित चल अब किए बिचारसि, जिबन हरि अनुसार ।
कबीसेखर बचन अभिसर, किए से बिघिन-बिथार ।।१०।।

भाग गये। ७—पुर=पूर्ण। ६—साति=शास्ति, निन्दा। १०—आइति=आयत्त, वश। ताहि पर=उसके बाद।

१—गगन=आकाश। घन=निबिड़। दामिनि=बिजली। २—कुलिस-पातन=बज्र का गिरना, ठनके की ठनक। खरतर बलगई=अत्यन्त तेजी से सनसनाती हुई बहती है। ४—अगुसरि=अग्रसर होकर, आगे लाकर। संकेत=गुप्त मिलन स्थान। ५—तरल=अस्थिर, चलायमान। जलधर=मेघ। बरिख=बरस रहा है। ६—साम=श्याम, श्रीकृष्ण। ७—मोर=मेरा। अतिसे=अतिशय। ८—ई=यह। गुरुजन=बड़े लोग, श्रेष्ठ पुरुष। तिमिरहि=अन्धकार। ९—तुरित=तुरत। किए=क्या। बिचारसि=बिचारती हो। जिबन हरि अनुसार=जीवन में हरि का अनुसरण करो। १०—अभिसार=अभिसार करो। बिथार=विस्तार।

नोट—जीवन में हरि का स्मरण और अनुसरण एक ही चीज है।

[११३]

रयनि काजर बम भीम भुअंगम
कुलिस पड़ए दुरबार।
गरज तरज मन, रोसे बरिस घन
संसअ पड़ु अभिसार ॥२॥

सजनी, बचन छाड़इते मोहि लाज
जे होए से होअ बरु सब हमे अंगिकरु
साहस मन देल आज ॥४॥

अपन अहित चित परतेख देखइत
पेमक न पारिअ ओर।
चाँद हरिन बह राहु कबल सह
प्रेम पराभव थोर ॥६॥

१—रयनि=रात। बम=वमन करती है। रयनि काजर बम=रात अन्धकार-पूर्ण है। भीम=विशाल, भयानक। भुअंगम=सर्प। कुलिस=बज्र, ठनका। दुरबार=जिससे बचाना मुश्किल है। २—रोस=रोष, क्रोध। ४—जे होए से होअ बरु=जो होना होगा, वह भले ही हो जाय। अंगिकरु=अंगीकार करूँगी। ५—अहित=बुराई। परतेख=प्रत्यक्ष। ओर=सीमा, अन्त। चित्त में अपना अहित प्रत्यक्ष देखती हुई भी मैं प्रेम का अन्त न पा सकी, प्रेम को दबा न सकी। ६—हरिन=चन्द्रमा में जो हरिण के आकार का काला धब्बा है। बह=धारण करना। कबल=कौर, ग्रास। सह=साथ, सहता है। पराभव=हार। राहु का ग्रास हो जाने पर भी चन्द्रमा हरिण को धारण किये रहता है, प्रेम के आगे पराभव (कष्ट) कुछ नहीं है। ७—बेढ़ल=लपेटा, घेरा। फनि=सर्प।

चरन बेढ़ल फनि हित मानलि धनि
नेपुर न करत रोर।
सुमुखि पुछओं तोहि सरुप कहसि मोहि
सिनेहक कत दुर ओर ।।८।।

ामहि रहिअ घुमि परस चिन्हिअ भूमि
दिग मग उपजु संदेह ।
हरि हरि सिव सिव ताबे जा इह जिव
जाबे न उपजु सिनेह ।।१०।।

भनइ विद्यापति सुनहु सुचेतनि
गमने न करह बिलम्ब ।
राजा सिवसिंह रूपनराएन
सकल कला अवलंब ।।१२।।

रोर=शब्द, झंकार। पैर में सर्प लिपट जाने पर बाला ने उसे अपना हित समझा, क्योंकि (सर्प लिपट जाने से) नूपुर झंकार नहीं करते थे। ८—सरुप=सत्य। ओर=अन्त। सुन्दरी, मैं तुमसे पूछती हूँ, सच-सच बताओ, प्रेम की अन्तिम सीमा कहाँ पर है। ९—दिग=दिशा। घूम-घूम कर एक ही स्थान पर चली आती हूँ। स्पर्श से ही पृथ्वी जानी जाती है (अन्धकार के कारण दीख नहीं पड़ती)। दिशा और राह के विषय में सन्देह है। मालूम होता है कि दिग्भ्रम हो गया है जिससे मैं राह भूल गई हूँ। १०—ताबे=तबतक। जाबे=जबतक। ११—सुचेतनि=बुद्धिमती, सुचतुरा। गमन=जाने में।

[११४]

सखि हे, आज जाएब मोहि।
घर गुरुजन डर न मानब
बचन चूकब नहि ।। २ ।।
चानन आनि आनि अँग लेपब
भूषन कए गजमोति।
अंजन बिहुन लोचन - जुगुल
धरत धबल जोति ।। ४ ।।
धबल बसने तनु झपाओब
गमन करब मंदा।
जइओ सगर गगन ऊगत
सहस सहस चन्दा ।। ६ ।।
न हम काहुक डीठि निबारब
न हम करब भीति।
अधिक चोरी पर सएँ करिअ
एहे सिनेहक रीति ।। ८ ।।
भन विद्यापति सुनह जुबती
साहस सफल काज।
बूझ सिबसिंह रस रसमय
सोरम देबि समाज ।। १० ।।

३—चानन=चंदन। आनि=लाकर। ४—बिहुन=रहित। धवल=उजला। ५—मंदा=धीरे-धीरे। ६—सगर=समग्र, समूचे। गगन=आकाश। ७—निबारब=बचा दूंगी। ओत=ओट। ८—सोत=स्रोत।

[११५]

प्रथम जउवन नव गरुअ मनोभव
छोटि मधुमास रजनि ।
जागे गुरुजन गेह राखए चाह नेह
संसअ पड़लि सजनि ।। २ ।।

नलिनि दल निर चित न रहए थिर
तत घर तत हो बहार ।
बिहि मोर बड़ मंदा उगि जनु जाए चंदा
सुति उठि गगन निहार ।। ४ ।।

पथहु पथिक संका पथ पथ धय पंका
कि करति ओ नव तरुनी ।
चलत चाह धसि पुनु पड़ खसि-खसि
जालक छेकलि हरिनी ।। ६ ।।

साए-साय कओन बेदन तसु जाने ।
निकुंज वनहि हरि जाइति कओन पर
अनुखन हन पँचबाने ।। ८ ।।

विद्यापति भन कि करत गुरुजन
नींद निरूपन लागी ।
नयन नीर भरि चीर झपावाए
रयनि गमाबए जागी ।। १० ।।

१—मधुमास=चैत्र । ३—नलिनि दल निर=कमल के पत्ते पर के पानी के समान । बहार=बाहर । ४—सुति=सोकर । ५—पथ=पग । पंका=कीचड़ । ६—जालक छेकलि=जाल में घिरी हुई । ७—साए=सखी । ८—हन=मारना ।

[११६]

अबहु राजपथ पुरुजन जाग ।
चाँद-किरन नभमंडल लाग ।।२।।
सहए न पारए नब नब नेह ।
हरि हरि सुन्दरि पड़लि संदेह ।।४।।
कामिनि कएल कतहु परकार ।
पुरुषक बेसें कयल अभिसार ।।६।।
धम्मिल लोल झोंट कए बंध ।
पहिरल बसन आन करि छन्द ।।८।।
अम्बर कुच नहि सम्बरि भेल ।
बाजन-जन्त्र हृदय करि लेल ।।१०।।
अइसे मिलिलि धनि कुंजक माझ ।
हेरि न चीन्हए नागर राज ।।१२।।
हेरइत माधब पड़ला धंद ।
परसइत भाँगल हृदयक दंद ।।१४।।
भनइ विद्यापति सुन बर नारि ।
दूध-समुद जनि राज-मरालि ।।१६।। *

३—सहए न पारए=सह नहीं सकती। नब=नया। ५—परकार=प्रकार, उपाय। ७—धम्मिल=केश, वेणी। लोल=चंचल। झोंट=झोंटा, जूड़ा। चंचल वेणी को (साधुओं के ऐसा) जूड़े के समान बाँधा। ८—आन छन्द करि=दूसरी तरह से। ६—अम्बर=कपड़ा। सम्बरु=सँभालना। किन्तु कपड़े के कसे जाने पर भी कुछ सँभल न सके—छिप न सके। १०—बाजन

* पदकल्पतरु के अनुसार यह पद गोविन्ददास-रचित है।

[११७]

चरण नूपुर ऊपर सारि ।
मुखर मेखल करें निबारि ॥२॥

अबर सामर देह झपाई ।
चलहि तिमिर पथ समाई ॥४॥

समुद कुमुद रभस रसी ।
अबहि उगत कुगत ससी ॥६॥

आएल चाहिअ सुमुखि तोरा ।
पिसुन लोचन भम चकोरा ॥८॥

अलक तिलक न कर राधे ।
आंग बिलेपन करहि बाधे ॥१०॥

कुसुम कानन कालिन्दि-तीर ।
तहाँ चलि आओल गोकुल बीर ॥१२॥

तएँ अनुरागिनि ओ अनुरागी ।
भूषण लागत दूषन लागी ॥१४॥

भनहि विद्यापति सरस कवि ।
नृपति - कुल - सरोरुह रवि ॥१६॥

जन्त्र=सितार। हृदय करि लेल=हृदय पर रख लिया। १३—धंद=संदेह। १४—दंद=द्वन्द्व, दुविधा। १६—समुद=समुद्र। राज-मरालि=राजहंसिनी।

१, २—पैर के नूपुर को ऊपर चढ़ाकर और मुखरा (शब्द करनेवाली) करधनी को हाथ से निवारण करके। ३—अम्बर=वस्त्र। तिमिरपथ=अन्धकारपूर्ण राह। समाई=घुसकर। ५—समुद=समुद्र। कुमुद=कुहूँ। रभस=केलि-विलास। रसी=रसिक। ६—कुगत=जिसका आगमन अशुभ

[११८]

गुरुजन घरहि नींदे भेल भोर ।
सेज तेजल उठि नन्द-किशोर ॥२॥

सघन गगन हेरि नखतक पाँति ।
अबधि न पाओल छूटल राति ॥४॥

जलधर रुचिहर सामर काँति ।
जुबति-मोहन बेस धरु कत भाँति ॥६॥

धनि अनुरागिनि जानि सुजान ।
घोर अँधियारहि कएल पयान ॥८॥

पर-नारी पिरितिक ऐसनि रीति ।
चलत निभृत पथ न मानए भीति ॥१०॥

कुसुमित कानन कालिन्दि-तीर ।
तहँ चलि आएल गोकुल बीर ॥१२॥

कबिसेखर पथ मीलल जाई ।
आएल नागर भेटलि राई ॥१४॥

हो। ससी=चन्द्रमा। ८—पिसुन=दुष्ट। भम=भ्रमण कर रहे हैं। ९—अलक-तिलक=महावर और टीका। १०—आंग-बिलेपन=शरीर में अंगराग लगाना। करह बाधा=बाधा कर दो, मत लगाओ।

१—नींदे भेल भोर=निद्रा में बेसुध हो गये। ३—नखत=नक्षत्र, तारे। ४—रात कितनी बीती, इसका अन्दाज न पाया। ५—जलधर=मेघ। रुचि-हर =शोभा हरनेवाला। ६—जुबती मोहन=युवतियों को मोहनेवाला। १०—निभृत =सुनसान, अन्धकारपूर्ण। १४—राई=राधा।

[११६]

तपनक ताप तपत भेल महि तल
तातल बालू दहन समान ।
चढ़ल मनोरथ भामिनि चलु पथ
ताप तपत नहि जान ॥२॥

प्रेमक गति दुरबार ।
नबिन जौबनि धनि चरन कमल जनि
तइओ कएल अभिसार ॥४॥

कुल-गुण-गौरव सति जस-अपजस
तृन करि न मानए राधे ।
मन मधि मदन महोदधि उछलल
बूड़ल कुल मरजादे ॥६॥

कत कत बिघिन जितल अनुरागिनि
साधल मनमथ तंत ।
गुरुजन-नयन निबारइत सुबदनि
पाठ करए मन मंत ॥८॥

केलि कलावति कुसुम-सरिस-अति
कौसल कएल पयान ।
जत छल मनोरथ पूरल मनमथ
इह कबिसेखर भान ॥१०॥

१—तपनक=सूर्य की। ताप=गर्मी। तपत=तप्त, जलता हुआ। तातल=गर्म हो गया। दहन=अग्नि। २—मनोरथ=इच्छा रूपी रथ। भा मिनि=स्त्री। ३—दुरबार=अटल। ४—जनि=समान। तइओ=तौ भी।

[१२०]

निअ मंदिर सएँ पद दुइ चारि ।
घन घन बरसि मही भर बारि ।।२।।

पथ पीछर बड़ गरुअ नितम्ब ।
खसु कत बेरि न किछु अवलम्ब ।।४।।

बिजुरि-छटा दरसावए मेघ।
उठय चाह जल धारक थेघ ।।६।।

एक गुन तिमिर लाख गुन भेल ।
उतरहु दखिन भान दुर गेल ।।८।।

ए हरि करिअ मोहि जनि रोस ।
आजुक बिलम्ब दइब दिअ दोस ।।१०।।

५—सति=सती स्त्रियों का । ६—मधि=मध्य, में । महोदधि=महासमुद्र । उछलल=उछलने लगा, तरंगित होने लगा । ७—मनमथ=कामदेव । तन्त=तान्त्रिक क्रिया । निबारइत=बचती हुई । मन्त=मन्त्र । ९—कुसुम=फूल । कौसल=छल से । १०—छल=था ।

१—निअ=अपना । सएँ=से । पद=डेग । २—घन घन=घने बादल । मही भर बारि=पृथ्वी जल से भर गई । ३—पीछर=जिसपर पैर फिसल जायँ । गरुअ=भारी । नितम्ब=चूतड़ । ४—खसु कत बेरि=कितनी बार गिर पड़ी । ६—जल धारक थेघ=मूसलधार बरसना चाहता है । ७—तिमिर=अन्धकार । ८—उत्तर और दक्षिण का ज्ञान दूर हो गया, दिशा-ज्ञान नहीं रहा ।

[१२१]

माधब, करिअ सुमुखि समधाने !
तुअ अभिसारे कएल जत सुन्दरि
कामिनि करु के आने ॥२॥

बरसि पयोधर धरनि बारि भर
रयनि महाभय भीमा ।
तइओ चलिलि धनि तुअ गुन मने गुनि
तसु साहस नहि सीमा ॥४॥

देखि भवन-भिति लिखित भुजँग पति
जसु मने परम तरासे ।
से सुबदनि करें झपइत फनिमनि
बिहुसि आइलि तुअ पासे ॥६॥

निअ पहु परिहरि सन्तरि विषम नरि
आँगिरि अपन कुल गारी ।
तुअ अनुराग मधुर मदे मातलि
किछु न गुनल बर नारी ॥८॥

ई रस-रसिक बिनोदक बिन्दक
कवि विद्यापति गाबे ।
काम पेम दुहु एकमत भए रहु
कखने की न कराबे ॥१०॥

२—के=कौन। ३—आने=दूसरा। ४—पयोधर=बादल। भीमा=डरावनी। ५—भिति=दीवाल। भुजंग=सर्प। ७—कर=हाथ। फनिमनि

[१२२]

राहु मघ भए गरसल सूर ।
पथ परिचय दिबसहि भेल दूर ।।२।।

घन बरिसए अबसर नहि होए ।
पुर परिजन संचर नहि कोए ।।४।।

चल चल सुन्दरि कर गए साज ।
दिवस समागम सपरत आज ।।६।।

गुरुजन परिजन डर करु दूर ।
बिन साहस अभिमत नहि पूर ।।८।।

एहि संसार सार बथु एह ।
तिल एक संगम जाब जिब नेह ।।१०।।

भनइ विद्यापति कविकंठहार ।
कोटिहुँ न घर दिबस - अभिसार ।।१२।।

=सर्प की मणि को। ७—पहु=प्रभु, प्रीतम। गारी=गाली, शिकायत। १०—कखने की कराबे=कब क्या नहीं कराता।

१—मेघ ने राहु बनकर सूर्य को ग्रस लिया है—मेघ के कारण सूर्य हीनप्रभ हो गये। २—पथ-परिचय=राह की पहचान। दिवसहि=दिन में ही। ४—गाँव में लोग नहीं आते-जाते। ५—कर गए साज=जाकर साज करो—श्रृंगार करो। ६—दिवस-समागम=दिन का मिलन। सपरत=सम्पूर्ण होगा। ८—अभिमत=मनोवांछा। ९—सार=तत्व। बथु=बस्तु। १०—एक क्षण के लिए रति-क्रीड़ा और जीवन-भर प्रेम-करना। ११—कोटिहुँ=करोड़ों उपाय करने पर भी। न घट=न घट सकता, न हो सकता।

[१२३]

आज पुनिम तिथि जानि मएँ अइलिहुँ
उचित तोहर अभिसार ।
देह - जोति ससि - किरन समाइति
के बिभिनाबए पार॥२॥

सुन्दरि अपनहु देखह बिचारि ।
आँखि पसारि जगत हमे देखलिहुँ
के जग तुअ सम नारि ॥४॥

तोहें जनि तिमिर हीत कए मानह
आन तोर तिमिरारि ।
सहज विरोध दूर परिहरि धनि
चल उठि जतए मुरारि ॥६॥

दूती बचन हीत कए मानल
चालक भेल पंचबान ।
हरि - अभिसार चललि वर कामिनि
विद्यापति कवि भान ॥८॥

१—पुनिम=पूर्णिमा। अइलिहुँ=मैं आई । २—देहजोति=शरीर की कान्ति । ससि-किरन=चन्द्रमा की किरण (में)। समाइति=घुस जायगी, मिल जायगी । के=कौन । बिभिनाबए पार=विभिन्न कर सकता है, अलग कर सकता है । ५—जनि=मत । तिमिर=अन्धकार । हीत=मित्र । आनन=मुख । तिमिरारि=अन्धकार का शत्रु, चन्द्र । ६—जतए=जहाँ । ७—चालक=प्रेरक । पँचबान=काम । हरि-अभिसार=कृष्ण से गुप्त मिलन करने को ।

[१२४]

अरुन किरन किछु अम्बर देल।
दीपक सिखा मलिन भए गेल ।।२।।

हठ तेज माधव जएबा देह।
राखए चाहिअ गुपुत सनेह ।।४।।

दुरजस जाएत परिजन कान।
सगर चतुरपन होएत मलान ।।६।।

भमर कुसुम रमि न रह अगोरि।
केओ नहि बेकत करए निअ चोरि ।।८।।

अपनहु धन हे धनिक धर गोइ।
परक रतब परगट कर कोइ ।।१०।।

फाब चोरि जओं चेतन चोर।
जागि जाएत पुर परिजन मोर ।।१२।।

भनइ विद्यापति सखि कह सार।
से जीवन जे पर उपकार ।।१४

१—अरुन=सूर्य। अम्बर=आकाश। २—सिखा=लौ, टेम। ३—तज =छोड़ो। जएबा देह=जाने दो। ४—गुपुत=गुप्त, छिपा हुआ। ६—सगर =सब। मलान=म्लान, मलिन। ७—भमर=भौंरा। रमि=रमण कर, विहार कर। अगोरि=अगोर कर रखना। ८—बेकत=व्यक्त, प्रकट। ९-१० –धनी लोग अपने धन को भी छिपाकर रखते हैं। फिर दूसरे के धन को कहीं कोई प्रकट करता है? ११—फाब=फबना, शोभना। चेतन=चतुर। १३—सार=सत्य।

[१२५]

दुहु रुप लावनि मनमथ मोहनि
निरखि नयन भूलि जाए।
रजनि-जनित रति विशेष अलापन
अलस रहल दुहु गाए ॥२॥
चाँचर कुन्तल ताहि कुसुम-दल
लोलए आनहि भाँति।
दुहु दुहु हेरि मुख हृदय बाढ़य सुख
बोलत भूलत पाँति ॥४॥
निज निज मन्दिर नागरि नागर
चलइत करु अनुबन्ध।
बिरह - बिषानल दुहु तनु जारल
लोचन लाग धन्द ॥६॥
भीतक चीत पुतुलि सन दुहु जन
रहल बिदाइक बेला।
प्रेम-पयोनिधि उछलि - उछलि पड़
चेतन अचेतन भेला ॥८॥
दुहु जन चीत - रीत हेरि, सहचरि
छन छन गगनहि चाए।
रजनि पोहाएल सब जन जागल
से उर अधिक डराए ॥१०॥
सेखर बुझि तब करि कत अनुभव
दुहु सँग भंग कराब।
निज निज मन्दिर गमन कएल दुहु
गुरुजन भेद न पाब ॥१२॥

२—गाए=गात्र, देह। ३—चाँचर=छितराया हुआ। लोलए=झूलता है। ५—अनुबन्ध=पारस्परिक प्रतिज्ञा। ७—चीत पुतुलि=चित्रलिखित मूर्त्ति। ६—चाए=निहारते हैं। १०—पोहाएल=बीती।

छलना

[१२६]

मन्दिर अछिलिहुँ सहचरि मेलि।
परसंगे रजनि अधिक बहि गेलि।।२।।

जब सखि चललिहुँ आपन गेह।
तब मोहि नींदे भरल सबे देह।।४।।

सूति रहलिहुँ हमे करि एक चीत।
दैव - बिपाके भेल बिपरीत।।६।।

न बोल सजनि, सुन सपन-सम्बाद।
हँसए केओ जनि कए परिवाद।।८।।

विषाद पड़ल मोर हृदयक माँझ।
तुरित घोंचओलहुँ नीबिक काज।।१०।।

एक पुरुष पुनु आओल आगे।
कोप अरुन आँखि अधरक दागे।।१२।।

से भयें चिकुर चिर आनहि गेल।
कपाल-काजर मुख सिन्दूर भेल।।१४।।

अंतर (?) कहब केओ अपजस गाब।
विद्यापति कह के पतिआब।।१६।।

१—अछलिहुँ=मै थी। सहचरि=सखी। १—परसंगे=प्रसंग में, बातचीत में। रजनि=रात। ५—सूति रहलिहुँ=सो रही। एक करि चीत=चित्त एकाग्र करके। ६—बिपाक=फल। ७—सपन=स्वप्न। ८—परिबाद=प्रवाद, शिकायत। १०—घोंचओलहुँ=शिथिल कर दिया। नीबिक काज=नीबी का बंधन (?) १२—अरुन=लाल। अधरक दागे=क्रोधवश स्वयं अपने अधर को दाँत से काटकर दाग बना दिया। १३—भय=उस डर से।

[१२७]

कुसुम तोरए गेलिहुँ जहाँ।
भमर अधर खंडल तहाँ ॥२॥

तें चलि अएलिहुँ जमुना तीर।
पवन हरल हृदय चीर॥४॥

ए सखि सरुप कहल तोहि।
आन किछु जनि बोलसि मोहि ॥६॥

हार, मनोहर बेकत भेल।
उजर उरग संसअ लेल ॥८॥

तें धँसि मजूर जोड़ल झाँप।
नखर गाड़ल हृदय काँप ॥१०॥

भन विद्यापति उचित भाग।
बचन पाटव कपट लाग ॥१२॥

चिकुर=केश। चीर=साड़ी। आनहि गेल=दूसरे ही ढग का हो गया। १४—कपाल=मस्तक। १५—अन्तर=हृदय की बात। १६—पतिआब=विश्वास करेगा।

१—कुसुम=फूल। गेलहुँ=मैं गई। २—भमर=भौंरा। अधर=ओष्ठ। ३—तें=तहाँ से। ४—हृदय चीर=वक्ष:स्थल की साड़ी, अंचल। ५—सरुप=सत्य। आन=अन्य। ७—बेकत=व्यक्त, प्रकट। उजर=उज्ज्वल। उरग=सर्प। ९—झाँप जोड़ल=झपट पड़ा। १०—नखर गाड़ल=नख गड़ा गया। १२—पाटव=पटुता, चतुरता।

—:०:—

[१२८]

सखि हे तोहि हमर बहु सेबा।
ऐसनि बानि कबहु जनि बोलबि
जाति कुल किए मोर लेबा ॥२॥

गोकुल नगर कान्ह रति लम्पट
जौवन सहज हमारा।
तोहें सखि रभसि मोहि जनि बोलबि
लोक करब पतिआरा ॥४॥

केसर कुसुम हेरि हमे कौतुक
भुज जुग मेरल ताहि।
दाड़िम भरम पयोधर ऊपर
दौड़ल कीर लोभाइ ॥६॥

चकित उभय भुज इति-उति फेकल
तें बेष भए गेल आन।
इथे परिबाद कहसि मोहि बैरनि
एह कबि सेखर भान ॥८॥

१—हे सखि, मैं तुम्हारी बहुत सेवा करूँगी। २—बानि=बोली। जाति कुल=मेरा जाति-कुल क्यों लोगी, क्यों नष्ट करोगी। ४—रभसि=दिल्लगी में। पतिआरा=विश्वास। ५—केशर के फूल देखकर, कौतुकवश, उसे दोनो हाथों से मसल दिया [जिस कारण मेरे अंगों में अंगराग लगे दीख पड़ते हैं]। ६—अनार समझकर सुग्गा मेरे कुचों पर लुभाकर दौड़ा। [उनकी चोंचों के आघात से कुच क्षतविक्षत हो गये, जिसे तुम नख-रेखा समझ रही हो।] ६—उभय=दोनो। भुज=हाथ। तें=इससे। बेष=रूप। आन=दूसरा।

[१२९]

खरि नरि बेग भासलि नाई।
धरए न पारए बाल कन्हाई ॥२॥
तें धसि जमुना भेलहुँ पार।
फूटल बलग्रा टूटल हार ॥४॥
ए सखि ए सखि न बोल मंद।
बिरुह बचन बाढ़ए दंद ॥६॥
कुंडल खसल जमुन माँझ।
ताहि जोहइते पड़लि साँझ ॥८॥
ग्रलक तिलक तें बहि गेल।
सुध सुधाकर बदन भेल ॥१०॥
तटनि तट न पाइग्र बाट।
तें कुच गड़ल कठिन काँट ॥१२॥
भन विद्यापति नहि ग्रवसाद।
बचन-कउसले जिनिग्र बाद ॥१४॥

१—खरि=तीव्र। नरि=नदि। भासलि=भस गई, बह चली। नाई=नाव, नौका। ३—धसि=पैठकर। ४—बलग्रा=चूड़ी। ५—मंद=बुरी बात। ६—विरुह=विरुद्ध, विपरीत। दंद=झगड़ा। ७—खसल=गिर पड़ा। ८—जोहइते=खोजने में। ९—ग्रलक=ग्रालता, महावर। तिलक=टीका। १०—सुध=शुद्ध निष्कलंक। सुधाकर=चन्द्रमा। ११—तटिनि=नदी। बाट=राह। १२—गड़ल=गड़ गया। १३—ग्रवसाद=पराजय। १४—जिनिग्र=जीता जा सकता है। बाद=मुकदमा। १५—बचन कउसले=वचन-चातुरी से। बाद=मुकदमा।

[१३०]

ननदी सरूपें निरूपह दोसे ।
बिनु बिचार बेभिचार बुझग्रोबह
सासु करएबह रोसे ।।२।।

कौतुकें कमल नाल हमे तोरल
करए चाहल ग्रबतंसे ।
रोषे कोष सए मधुकर धाग्रोल
तेहि ग्रधर करु दंसे ।।४।।

सरबर-घाट बाट कंटक-तरु
देखए न पारल ग्रागू ।
साँकर बाट उबटि कहु चललिहुँ
तें कुच कंटक लागू ।।६।।

१—सरूपें=स्वरूप से, ग्राकृति से । निरूपह=निरूपण करती हो । मेरी ननद, तुम ग्राकृति देखकर मुझे दोष लगाती हो । २—ग्रेभिचार=व्यभिचार, पाप-कर्म । बुझग्रोबह=समझाग्रोगी । रोसे=क्रोध। ३—नाल सयँ=मृणाल से । ग्रबतंसे=सिर का ग्राभूषण । ४—रोष=क्रोधित होकर । कोष=कमल का भीतरी भाग । मधुकर=भौंरा । तेहि=उसीने । करु दंसे=काट लिया (जिससे ग्रोष्ठ मलिन हो गया) । ५—सरबर=तालाब । बाट=राह । कंटक तरु =काँटों के पेड़ । देखहि न पारल=देख न सकी । ६—साँकरि=संकीर्ण, पतली । तें=इसमें । कुच=स्तन ।

गरुअ कुम्भ सिर थिर नहि थाकए
तें उधसल केस - पास ।
सखि जन सएँ हम पाछे पड़लिहुँ
तें भेल दीघ निसास ॥८॥

पथ अपवाद पिसुन परचारल
तथिहु उतर हम देला ।
अमरख बसें धैरज नहि रहल
तें गदगद सर भेला ॥१०॥

भनइ विद्यापति सुन बर जौबति
ई सभ राखह गोई ।
ननदि संग रस - रीति बढ़ाबह
गुपुत बेकत नहि होई॥१२॥

७—गरुअ=भारी। कुम्भ=घड़ा। सिर थिर नहि थाकए=सिर स्थिर नहीं रहता। उधसल=अस्तव्यस्त हो गया। ८—सएँ=स। पीछे पड़लिहुँ=पीछे पड़ गई। दीर्घ भेल=तीव्र हुआ। निसास=ऊँची साँस, उच्छ्वास। मैं सखियों स पीछे पड़ गई, अत. दौड़कर उन्हें पाने की चेष्टा करने के कारण साँस जल्दी-जल्दी आ रही है। ६—पथ=राह। अपबाद=शिकायत। पिसुन=दुष्ट। परचारल=प्रचारित किया, फैलाया। तथिहु=वहाँ। उतर देला=उत्तर दिया। १०—अमरख बसें=आमर्षवश, क्रोध के आवेग से। गदगद सर=भर्राई आवाज। ११—ई सभ=यह सब। गोई=छिपाकर। १२—ननँद से प्रीति बढ़ाओ, उसे मेल में रक्खो तो गोपनीय (बात) प्रकट न होगी।

[१३१]

जाहि लागि गेलि हे ताहि कहाँ लइल हे
ता पति बैरि पितु कहाँ ।
अछलि हे दुखे सुखे कहह अपन मुख
भूसन गमओलह जहाँ ॥२॥

सुन्दरि, कि कए बुझाओब कंते
जन्हिका जनम होइत तोहें गेलिह
अइलिह तन्हिका अंते ॥४॥

जाहि लागि गेलहुँ से चलि आएल
तें हमे रहलि नुकाई ।

१—जाहि लागि=जिसके लिए (जल के लिए)। गेलि=गई। ताहि=उसे। कहाँ लाइलि=कहाँ लाई (नहीं लाई)। ता पति बैरि पितु कहाँ=उसके (जलके) पति=समुद्र, समुद्र का बैरी=अगस्त्य, अगस्त्य का पिता=घट, घड़ा; कहाँ है ? २—अछलि=थी। भूसन=अंगराग, आदि। गमओलह=खो दिया। जहाँ अंगराग आदि (रतिक्रीड़ा की मस्ती में) नष्ट हो गये, वहाँ के सुख-दुःख अपने ही मुख से कहो। ३—कि कए=क्योंकर। बुझाओब=समझाओगी। ४—जन्हिका जनम होइत=जिसके (दिन के) जन्म होते ही प्रातःकाल ही। अइलिह तन्हिका अन्ते=उसके (दिन के) अन्त में—संध्या को आई। ४—जिसके लिए (जल के लिए) मैं गई, वह (जल-वृष्टि वर्षा) चली आई—वर्षा होने लगी, जिससे मैं छिप रही।

से चलि गेल ताहि लए चललिहुँ
तें पथ भेल अनेआई ।।६।।

ंकर - बाहन खेड़ि खेलाइत
मेदिनी - बाहन आगे ।
ने सबे अछलिसँग से सबे चललि भँग
उबरि अइलिहुँ अति भागे।।८।।

जाहि दुई खोज करइ छथि सासुड़ि
से मिलु अपना संगे ।
भनइ विद्यापति सुन बर जौबति
गुपुत नेह रति - रंगे ।।१०।।

=वह (जलवृष्टि) चली गई तब उसे (जल) लेकर चली। तें=इस कारण। पथ=राह। अनेआई=अन्याय। ७—संकर-बाहन=बैल। खेड़ि खेलाइत=खेल कर रहा था, आपस में लड़ रहा था। मेदिनि-बाहन=सर्प। आगे=आगे था। ८—अछलि=थी। भँग=छिटककर। उबरि अइलिहुँ=उबर आई। भागे=भाग्य से ही। ६—जिन दोनो (जल और घड़ा) की खोज सासुजी कर रही हैं, वे दोनों अपने साथियों से मिल गये—(वर्षा हो रही थी कि घड़ा फूट गया—घड़े का पानी वर्षा के पानी में मिल गया और मिट्टी का घड़ा मिट्टी में मिल गया)। १०—जौबति=युवती। गुपुत नेह=गुप्त प्रेम। रति-रंग=रति-क्रीड़ा।

When passion and philosophy meet in a single Individual, we have a great poet. —*Browning.*

मान

[१३२]

खनहि खन महघि भए कछु अरुन नयन कए
कपटे धरि मान सम्मान लेही ।
कनक जएँ पेम कसि पुनु पलटि बाँक हसि
आधि सयँ (?) अधर मधु-पान देहि ॥२॥

अरेरे इन्दुमुखि अढ़ न कर पिअ हृदय खेद हर
कुसुम-सर रंग संसार सारा ॥३॥

बचन बस होसि जनु ससरि भौन होइते तनु
सहज बरु छाड़ि देब सयन सीमा ।
प्रथम रस-भंग भेले लोभे मुख-सोभ गेले
बाँधि भुज-पास पिअ धरब गीमा ॥५॥

जदि नयन-कमल बर मुकल केर कान्ति धर
खर नखर-घात करु सेहे बेला ।
परम पद लाभ सम मोद चिर हृदय रम
नागरि सुरत-सुख अमिअ मेला ॥७॥

सरसकवि सरस भन चारुतर चतुरपग
नारि अगहिअइ पंचबाने ।
सकल जन सुजन गति गनि लखिमाक पति
रूपनराएन सिवसिंह जाने ॥६॥

१—महघि=महँगा । ३—अढ़=ओट, टालमटूल । कुसुम-सर=कामदेव । ५—गीम=ग्रीवा, गरदन । ६—यदि नयन रूपी कमल कली का रूप धारण करे—आँखें झिपने लगें—तो उस समय नख का विकट प्रहार करना ।

[१३३]

लोचन अरुन बुझल बड़ भेद ।
रयनि उजागर गरुअ निबेद ॥२॥

ततहि जाह हरि न करह लाथ ।
रयनि गमाओलह जन्हिके साथ ॥४॥

कुच कुंकुम माखल हिअ तोर ।
जनि अनुरागे राँगि करु गोर ॥६॥

आनक भुसन कलंक तुअ अंग ।
बड़ओ मन्द मन्दक परसंग ॥८॥

चिटि-गुड़ चुपड़लि राड़क पोरि ?
लाओले लाथ बेकत भेल चोरि ॥१०॥

भनइ विद्यापति बजबहु बाध ।
बड़ अपराध मौन पए साध ॥१२॥

१-२—उजागर=जागरण। निवेद=जनाता है। लाल आँखों को देखकर मैंने सारा भेद समझ लिया; वे रात का अधिक जागरण प्रकटक करती हैं। "रजनि-जनित-गुरुजागर-राग-कषायितमलस-निमेषम्"—गीतगोविन्द। ३—ततहि जाह=वहीं जाओ। लाथ=बहाना। ५-६—(उसके) कुच का लगा केसर तुम्हारे हृदय में लिपटा हुआ है। मानों अनुराग के रंग में रँगकर (काले वक्ष:स्थल को) गोरा बना दिया हो। ७—आनक=दूसरे का। ८—परसंग=प्रसंग, संगति। ९—चिटि-गुड़=गुड़-चीटी। राड़=शूद्र की एक उपजाति। पोरि=घर। लओले लाथ=बहाना करने पर। बेकत=व्यक्त। ११—बजबहु=बोलना।

[१३४]

कुंकुमे लग्रोलह नख-खत गोइ ।
अधरक काजर अएलहु धोइ ॥२॥

तइग्रो न छपल कपट-बुधि तोरि ।
लोचन अरुन बेकत भेल चोरि ॥४॥

चल चल कान्ह बोलह जनु आन ।
परखत चाहि अधिक अनुमान ॥६॥

जानग्रों प्रकृति बुझग्रों गुनशीला ।
जत तोर मनोरथ मनसिज-लीला ॥८॥

बचन नुकाबह बेकतग्रो काज ।
तोहें हँसि हेरह मोहि बड़ लाज ॥१०॥

अपथहु सपथ बुझाबह राधे ।
कोन परि खेमग्रों सठ अपराधे ॥१२॥

भनइ विद्यापति पिअ अपराध ।
उदघट न कर मनोरथ साध ॥१४॥

१—नायिका ने जो अपने नखों से बकोटकर तुम्हारे वक्ष:स्थल पर चिह्न बना दिया था, उसे कुंकुम लगाकर छिपा लाये हो। २—अधरक=ओष्ठ का। अएलहु=आये हो। ३—छपल=छिप सका। ४—अरुण=लाल। बेकत=व्यक्त, प्रकट। ५—आन=अन्य। ६—परतख=प्रत्यक्ष। ७—प्रकृति=स्वभाव। ८—जस=जैसा। मनसिज=कामदेव। ९—नुकाबह=छिपाते हो। १०—तुम हँसकर (मेरी ओर) देखते हो किन्तु मुझे लज्जा आती है। ११—अपथहु=बुरी राह जानकर भी। १२—कोन परि=किस प्रकार। खेमग्रों=क्षमा करूँगी। १४—उदघट=प्रकाश। साध=साधना।

[१३५]

आध आध मुदित भेल दुहु लोचन
बचन बोलत आध आधे ।
रति-आलस सामर तनु झामर
हेरि पुरल मोर साधे ।।२।।

माधव, चल चल चल तन्हि ठाम ।
जसु पद - जाबक हृदयक भूषन ।
अबहु जपह तसु नाम ।।४।।

कत चंदन कत मृगमद कुंकुम
तुअ कपोल रहु लागि ।
देखि सौतिन अनुरूप कएल बिहि
अतए मानिअ बहु भागि ।।६।।

१—मुदित=मुँदे हुए। २—रति- आलस=काम-क्रीड़ा में अलसाया। सामर=श्यामला। झामर=मलिन। हेरि=देखकर। साधे=हौसला। ३—चल=जाओ। तन्हि ठाम=उसके यहाँ। ४—जसु=जिसके। पद-जाबक=पैर का महावर। जिसके पैर का महावर तुम्हारे हृदय का आभूषण हुआ है, उसी का नाम तुम अब भी जप रहे हो। [अकस्मात् कृष्ण के मुँह से उस नायिका का नाम निकल गया था।] ५—कत=कितना। मृगमद=कस्तूरी। कुंकुम=केशर। कपोल=गाल। ६—अनुरूप=समान। ६—मैं तो इसी में अपना सौभाग्य मानती हूँ कि ब्रह्मा ने मुझे एक योग्य सौत दी है।

[१३६]

सुन सुन सुन्दरि कर अबधान।
बिनु अपराध कहसि काहे आन ।।२।।

पुजलहुँ पसुपति जामिनि जागि।
गमन बिलम्ब भेल तेहि लागि ।।४।।

लागल मृगमद कुंकुम दाग।
उचरइत मंत्र अधर नहि राग ।।६।।

रजनि उजागर लोचन घोर।
ताहि लागि तोहें बोलसि चोर ।।८।।

नबकबिसेखर कि कहब तोए।
सपथ करह तब परतित होए ।।१०।।

१—अबधान=मनोयोग, ध्यान देना। कहसि काहे आन=दूसरी बात क्यों कह रही हो ? पसुपति=महादेव। जामिनि=रात। ४—गमन=आने में, चलने में। तेहि लागि=इसलिए। ५-६—उचरइत=उच्चारण करते-करते। राग=लालिमा। कस्तूरी और केशर से शिव की पूजा की। शरीर पर उन्हीं के चिह्न हैं। बराबर मंत्र उच्चारण करने के कारण ओष्ठ की ललाई नष्ट हो गई। ७—रजनि=रात। उजागर=जागरण, घोर=भयानक (लाल)। ८—इसीलिए तुम मुझे चोर कहती हो। ६-१०—विद्यापति कहते हैं—तुम क्या कहोगे, जब सपथ करो, तो तुम्हारी बातों पर विश्वास हो।

[अगले पद में श्रीकृष्ण की विचित्र शपथ पढ़िये और गौर कीजिये]

[१३७]

ए धनि मानिनि करह संजात।
तुअ कुच हेम-घट हार भुजंगिनि
ताक ऊपर धरु हाथ ॥२॥

तोहें छाड़ि जदि हम परसब को।
तुअ हार-नागिनि काटब मोए ॥४॥

हमर बचन यदि नहि परतीत।
बूझि करह साति जे होए उचीत ॥६॥

भुज-पास बाँधि जघन-तले तारि।
पयोधर-पाथर अरेह भारि ॥८॥

उर-कारा बाँधि राखह दिन-राति।
विद्यापति कह उचित इ साति ॥१०॥

१—धनि=बाला। करह संजात=संयत करो (?) क्रोध छोड़ो। २—हेम-घट=सोने का पहाड़। भुजंगिनि=सर्पिणी। ताक=उसके। [यदि विश्वास न हो तो शपथ करा लो। सोना छूकर शपथ खाना प्रामाणिक माना जाता है, सो] तेरे कुच-रूपी सोने के घड़े तथा हाररूपी सर्पिणी के ऊपर हाथ रखकर शपथ खाता हूँ। ३—छोड़ि=छोड़कर। परसब=स्पर्श करूँगा। कोए=किसी को। ६—साति=शास्ति, दण्ड। ७—भुज-पास=भुजा-रूपी जंजीर। जघन तले=जाँघों के तले। तारि=ताड़ना करके, खूब ठोक-पीट के। ८—स्तनरूपी भारी पत्थर हृदय पर रख दो। ९—उरकारा=हृदय रूपी जेलखाने में। राख=रक्खो। १०—इ=यह। साति=शास्ति, दण्ड।

[१३८]

*अरुण पुरब दिशा बहलि सगरि निसा
गगन मलिन भेल चन्दा।
मुँदि गेलि कुमुदिनि तइओ तोहर धनि
मूंदल मुख अरबिंदा ।।२।।

चाँद बदन कुबलय दुहु लोचन
अधर मधुरि निरमान।
सगर सरीर कुसुमें तुअ सिरिजल
किए दहु हृदय पखान ।।४।।

असकति कर कंकन नहि पहिरसि
हार हृदय भेल भार।
गिरिसम गरुअ मान नहि मुंचसि
अपरुब तुअ बेवहार ।।६।।

अवगुन परिहरि हेरह हरखि धनि
मानक अबधि . बिहान।
राजा सिवसिंह रूपनराएन
कवि विद्यापति भान ।।८।।

१—अरुण=लाल। बहलि=बीत गई। सगरि=समग्र, समूची। २—अरबिंदा=कमल। ३—बदन=मुख। कुबलय=कमल। मधुरि=एक लाल फूल। ४—कुसुम=फूल। सिरिजल=बनाया। किए दहु=क्यों। पखान=पत्थर। ५—असकति=(मैथिली प्रयोग) आलस। ६—गरुअ=भारी। मुंचसि=छोड़ती हो। ७—बिहान=प्रातःकाल।

* यह पद उमापति रचित 'पारिजात-हरण' में पाया जाता है, अतः इसके रचयिता विद्यापति नहीं, उमापति हैं।

[१३९]

मदन-कुंज तर बइसल नागर
वृन्दा सखि मुख चाहि ।
जोड़ि जुगल कर बिनति करए कत
तुरित मिलाबह राहि ।।२।।

मोहि पर रोखि बिमुख भए सुन्दरि
जबहु चललि निज गेहा ।
मदन हुतासन मोर मन जारल
जीब न बाँधए थेहा ।।४।।

तुअ अति चतुर सिरोमनि नागरि
तोहें कि सिखाओब बानि ।
तोहि बिनु हमर मरम कओने जानब
कइसे मिलाएब आनि ।।६।।

चन्दन चाँद पवन भेल रिपु सम
वृन्दाबन बन भेल ।
कोकिल मयूर झंकार करए कत
मोर मन मनमथ सेल ।।८।।

छल-छल नयन बयन भरि रोअए
चरण पकड़ि रहि जाब ।
हा हा से धनि हमहि न हेरब
सिंह भूपति रस गाब ।।१०।।

१—चाहि=देखकर । २—राहि=राधा । ४—मदन-हुतासन=कामदेवरूपी अग्नि । जीव न बाँधए थेहा=जीव स्थैर्य नहीं बांधते, प्राण स्थिर नहीं होते । ८—मनमथ=कामदेव ।

[१४०]

माधब, ई नहि उचित विचार।
जनिक एहनि धनि काम-कला सनि
से किअ करु बेभिचार ॥२॥

प्रानहु चाहि अधिक कए मानए
हृदयक हार समाने।
कोन परि जुगुति आनकें ताकह
की थिक तोहर गेआने ॥४॥

कृपिन पुरुषकें केओ नहि निक कह
जग भरि कर उपहासे।
निज धन अछइत नहि उपभोगब
केवल परहिक आसे ॥६॥

भनइ विद्यापति सुनु मथुरापति
ई थिक अनुचित काज।
माँगि लाएब बित से जदि हो नित
अपन करब कोन काज ॥८॥

२—जनिक=जिनकी। एहनि=ऐसी। सनि=समान। ४—जुगुति=तर्क। आनकें ताकह=दूसरे को देखते ही। की=क्या। थिक=है। ५—कृपिन=सूम। निक=नीक, अच्छा। उपहास=हँसी। ६—अछइत=रहते। परहिक=दूसरे की ही। ८—यदि माँगा हुआ धन नित्य रहता—यदि मँगनी की चीज से ही काम चल जाता—तो लोग अपने धन के लिए क्यों कष्ट उठाते?

[१४१]

बिरह ब्याकुल बकुल तरुतर
पेखल नन्द-कुमार रे ।
नील नीरज नयन सएँ सखि
ढरए नीर अपार रे ॥२॥

पेखि मलयज-पङ्क मृगमद
तामरस घनसार रे ।
निज पानि पल्लव - मूँदि लोचन
धरनि पड़ असँभार रे ॥४॥

बहए मन्द सुगन्धि सीतल
मन्द मलय - समीर रे ।
जनि प्रलय कालक प्रबल पावक
दहए सून सरीर रे ॥६॥

अधिक बेपथु टूटि पड़ खिति
मसृन मुकुता - माल रे ।
अनिल तरल तमाल तरुबर
मुंच सुमनस जाल रे ॥८॥

मान मनि तजि सुदति चलु जहिं
राय रसिक सुजान रे ।
स्रुति ; सुखद अति सरस दण्डक
कवि विद्यापति भान रे ॥१०॥

१—बकुल=मौलिश्री, मनसरी। २—नीरज=कमल । ३—मलयज =चन्दन। मृगमद=कस्तूरी। तामरस=कमल। घनसार=कपूर । ४–पानि-

[१४२]

रामा, कि आब बोलसि आन ।
तोहर चरन सरन से हरि
आबहु मेटह मान ।।२।।

गोबर्धन गिरि वाम करे धरि
कएल गोकुल पार ।
बिरह खिन से करक कंकन
गरुअ मानए भार ।।४।।

काल - दमन कएल जे जन
चरन - जुगल - तरे ।
आब भुजंगम भरमे भूलल
हृदय हार न धरे ।।६।।

सहज चातक छाड़ न बरत
बैसल नदी तीर ।
नव नहि जलधर-बारि बिनु
पिवए तकर नीर ।।८।।

=हाथ । ६—पाबक=अग्नि । सून=शून्य । ७—बेपथु=कम्प । खिति=पृथ्वी । मसृन=चिकना । ८—अनिलतरल=वायु द्वारा आन्दोलित । मुंच=गिराता है । सुमनस=फूल । ९—सुदति=सुन्दरी । १०—स्रुतिसुखद=सुनने में अच्छा । दंडक=इस छंद का नाम दंडक है ।

१—रामा=सुन्दरी । आन=अन्य । ४—करक=हाथ का । गरुअ=भारी, कठिन । ६—भुजंगम=सर्प । ७—बरत=व्रत । बैसल=बैठा । ८—जलधर=बादल ।

[१४३]

सखि हे बूझल कान्ह गोआर ।
पितरक टाँड़ काज कोन दहु लह ।
ऊपर चकमक सार ।।२।।

हमे न कएल मन गेलहि होएत भल
हमे छलि सुपुरुख भाने ।
तोहर बचन सखि कएल आँखि देखि
अमिअ-भरम विष पाने ।।४।।

पसुक संग जे जनम गमाओल
से कि बुझब रतिरंग ।
मधु-जामिनि मोरि आज बिफल गेलि
गोप गमारक संग ।।६।।

तोहर बचने कूप धसि जाएब
तें हमे गेलिहुँ अबाट ।
चंदन भरम सिमर आलिंगल
सालि रहल हिअ काँट ।।८।।

भनइ विद्यापति हरि बहुबल्लभ
कएल बहुत अपमान ।
राजा सिवसिंह रूपनराएन
लखिमा पति रस जान ।।१०।।

२—पितरक=पीतल का । टाँड़=हाथ का एक गहना । काज कोन दहु लह=कौन-सा काम सिद्ध करेगा ? ३—गेलहि=जाने से ही । छलि=थी । मधुजामिनि=वसंत की रात । ७—अबाट=कुपथ । ८—सिमर=सेमल । ९—बहुबल्लभ=बहुत स्त्रियों के पति ।

[१४४]

मधु सम बचन कुलिस सम मानस
प्रथमहि जानि न भेला ।
अपन चतुरपन पिसुन हाथ देल
गरुअ गरब दुर गेला ॥२॥

सखि हे, मन्द पेम परिनामा ।
बड़ कए जीवन कएल पराधिन
नहि उपसम एको ठामा ॥४॥

झाँपल कूप देखिहि नहि पाओल
आरति चलिलिहुँ धाई ।
तखन गरुअ लहु किछु नहि गूनल
अब पछताबक जाई ॥६॥

एत दिन अछलिहुँ आन भान हमे
आब बुझल अबगाहि ।
अपन मूँड़ अपनेहि हम चाँछल
दोख देब गए काहि ॥८॥

भनइ विद्यापति सुनु बर जौवति
चीत गनब नहि आने ।
पेमक कारन जीव उपेखिअ
ई जग के नहि जाने ॥१०॥

१—कुलिस=वज्र । २—पिसुन=दुष्ट । ४—उपसम=शान्त । ५—आरति=आर्तिवश । ६—गूनल=समझा । ७—आन भान=दूसरी धारणा में । अबगाहि=भीतर से सोचकर । ८—चाँछल=छील लिया । १०—उपेखिअ=उपेक्षा करें ।

[१४५]

माधव, दुरजए मानिनि-मानि ।
बिपरित चरित पेखि चकरित भलि
न पुछलि आधहु बानि ।।२।।

तुअ रूप साम आखर नहि सूनए
तुअ रूप रिपु सम मानि ।
तुअ जन सँग सम्भास करए नहि
कइसे मिलाएब आनि ।।४।।

नील बसन बर, कांचन चुरि कर
पौतिक? माल उतारि ।
करि-रद चुरि कर, मोति माल बर
पहिरलि अरुनिम सारि ।।६।।

असित चित्र उर ऊपर मेटल
मलयज देह लगाए ।
मृगमद तिलक धोए दृग अंजन
कच लेल बसन छिपाए ।।८।।

२—बिपरित=उलटा । चकरित=चक्रित, चक्कर आ गया । ३—साम=श्याम (कृष्ण)। आखर=अक्षर । ४—सँग=साथ । सम्भास=बातचीत । **कांचन चुरि कर**=हाथों की सोने की चूड़ी । पौतिक=पिरोजा, नीलमणि । ६—**करि-रद चुरि**=हाथी के दाँत की चूड़ी । अरुनिम=लाल । सारि=साड़ी । ७—**असित चित्र**=काला गोदना । मलयज=चंदन । ८—मृगमद=कस्तूरी (काली होती है) । दृग=आँख । कच=केश । ९—तील=तिलवा ।

एक तील छल चारु चिबुक पर
निदित मधुप-सम सामा ।
तृन - अग्रे करि मलयज रंजल
ताहि छपाओल रामा ।।१०।।

जलधर देखि चन्द्रातप झाँपल
सामरि सखि नहि पास ।
तमाल तरु गन चूना लेपल
सिखि पिक दूरि निवास ।।१२।।

मधुकर डरे घनि चम्पक तरु तर
लोचन जल भरिपूर ।
सामर चिकुर हेरि मुकुर पटकि टेल
टूटि भए गेल सत चूर ।।१४।।

तुअ गुन-गान करए सुक पंडित
सुनितहि उठल रोसाइ ।
पिंजर झटकि फटिक पर पटकल
धाए धएल तहि जाइ ।।१६।।

मेरु सम मान कोप सुमेरु सम
देखि भेल रेनु समान ।
विद्यापति कह राहि मनाबए
आपु सिधारह कान ।।१८।।

चिबुक=ठुड्डी । निद्रित भौरे के समान श्याम । १०—खर की नोक से चन्दन लगाकर उस सुन्दरी ने उसे मिटा दिया । ११—जलधर=मेघ । चन्द्रातप= चँदोबा । १२—काले तमाल के वृक्ष को चूने से पोत दिया और (काले) मयूर

[१४६]

मानिनि, हमे कहिए तुअ लागी ।
नाह निकट सुख जे जन बंचित
तन्हिकर बड़हि अभागी ॥२॥

दिनकर - बन्धु कमल सब जानए
जल तसु जीबन कोई ।
पंक बिहिन तनु भानु सुखाबए
जल पटाब बरु कोई ॥४॥

नाह समीप सुखद जत बैभव
अनुकुल होएत जोई ।
तन्हिकर बिरह सकल सुख सम्पद
खन खन दगधए सोई ॥६॥

तुहु धनि गुनमति बूझि करह रति
परिजन ऐसन भास ।
सुनइते राहि हृदय भेल गदगद
अनुमति कएल प्रगास ॥८॥

तथा कोयल को खदेड़ दिया । १३—चिकुर=केश । मकुर=आईना । १४—सत चूर=सौ टुकड़े । १५—पुक=सुग्गा । रोसाइ=क्रोधित होकर । फटिक=स्फटिक पत्थर । १६—रेनु=धूल ।

१—तुअ लागि=तुम्हारे लिए । २—नाह=पति । ३—दिनकर=सूर्य । ४—बिहिन=हीन । भानु=सूर्य । पटाब=छिड़के । ६—दगधए=जलता है ।

[१४७]

मानिनि आब उचित नहि मान।
एखनुक रंग एहन सन लागए
जागल पए पँचबान ॥२॥

जूड़ि रयनि चकमक करु चाँदनि
एहन समय नहि आन।
एहि अवसर पिय-मिलन जेहन सुख
जकरहि होए से जान ॥४॥

रभसि-रभसि अलि बिलसि-बिलसि कलि
करए मधुर मधु पान।
अपन-अपन पहु सबहु जेमाओल
भूखल तुअ जजमान ॥६॥

त्रिबलि तरंग सितासित संगम
उरज सम्भु निरमान।
आरति पति मँगइछ परतिग्रह
करु धनि सरबस दान ॥८॥

दीप-बाति सम थिर न रह मन
दिढ़ करु अपन गेआन।
संचित मदन बेदन अति दारुन
विद्यापति कवि भान ॥१०॥

२—इस समय का समाँ (रंग) कुछ ऐसा मालूम होता है मानों कामदेव सोते से जग पड़ा हो। ३—जूड़ि=शीतल। ४—जेहन=जैसा। जकरहि=जिसीको। ५—रभसि=उमंग में आकर। अलि=भौंरा। ६—पहु=

[१४८]

अखिल लोचन तम-ताप-बिमोचन
उदयति आनन्द कन्दे ।
एक नलिनि मुख मलिन करए जदि
इथे लागि निन्दह चन्दे ॥२॥

सुन्दरि, बूझल तुअ प्रतिभाति ।
गुन-गन तेज दोष एक घोषसि
अन्त अहीरिनि जाति ॥४॥

सकल जीव-जन जीब समीरन
सीत सुगन्ध सुधीरे ।
दीपक - जोति परसे जदि नासए
इथे लागि निन्दह समीरे ॥६॥

प्रीतम। जेमाओल=खिलाया। ७—त्रिवली की तरंग में गंगा-यमुना (हार और रोमावलि) का संगम हुआ है, जहाँ कुच-रूपी शिव की स्थापना है। ८—आरति=आर्ति, व्याकुलता। परतिग्रह=दान। ९—दीप-बाति=दीपक की शिखा, लौ। १०—मदन=कामदेव।

१—अखिल=समूचा (संसार)। तम=अंधकार। ताप=गर्मी, ज्वाला। बिमोचन=नाश करनेवाला। उदयति=उगता है। कंद=मूल, जड़। २—नलिनि=कमलिनी। इथे लागि=इसलिए। निन्दह=निंदा करती हो। ३—प्रतिभाति=बुद्धि। 'परिपाटि' पाठ उचित जँचता है। ४—घोषसि=कहती हो। ५—जीव-जन=प्राणी। जीव=प्राण। समीरन=वायु। ६—परस=स्पर्श। समीरे=पवन को।

स्थावर जंगम कीट पतंगम
सुखद जे सकल सरीरे ।
कागद पत्र परसें जओं नासए
इथे लागि निन्दह नीरे ।।८।।

खन-खन सकल कुसुम मन तोषय
निसि रहु कमलिनि संगे ।
चम्पक एक जइओ नहि चुम्बए
इथे लागि निन्दह भृंगे ।।१०।।

पाँच-पाँच गुन दस गुन चौगुन
आठ दुगुन सखि माझे ।
विद्यापति भन आकुल तुअ विनु
विसरि न पावसि लाजे ।।१२।।

७—स्थावर=वृक्ष आदि अचल जीव। जंगम=मनुष्य आदि चलनेवाले जीव। कीट=कीड़े। पतंगम=फनगे आदि। ८—कागद पत्र=कागज के पन्ने। परस=स्पर्श। जओं=यदि। नीर=पानी। ९—खन=क्षण। कुसुम=फूल। तोषए=संतुष्ट करता है। निसि=रात। १०—चम्पक=चम्पा। जइओ=यद्यपि। भृंगे=भौरे को। ११—(५×५×१०×४×८×२)=१६००० सखियों के मध्य में। १२—बिसरि=भूलकर। पावसि=पाती हो।

"सा कविता सा वनिता यस्याः श्रवणेन दर्शनेनापि ।
कविहृदयं विटहृदयं सरलं तरलं च सत्वरं भवति ।।"

[१४६]

चानन भरमे सेबल हमे सजनी
पूरत सब मनकाम ।
कंटक दरस परस भेल सजनी
सीमर भेल परिनाम ॥२॥
एकहि नगर बसु माधब सजनी
पर-भामिनि बस भेल ।
हमें धनि एहनि कलावति सजनी
गुन गौरव दुरि गेल ॥४॥
अभिनव एक कमल फुल सजनी
दोना नीमक डारि ।
सेहो फुल ओतहि सुखाएल सजनी
रसमय फुलल नेवारि ॥६॥
बिधि बस आज आएल पुनि सजनी
एत दिन ओतहि गमाए ।
कोन परि करब समागम सजनी
मोर मन नहि पतिआए ॥८॥
भनइ विद्यापति गाओल सजनी
उचित आओत गुनसाह (?) ।
उठ बधाव करु मन भरि सजनी
आज आओत घर नाह ॥१०॥

१—चानन=चंदन । भरमे=भ्रम से । सेवल=सेवा की । २—कंटक=काँट । सीमर=सेमल । ३—पर-भामिनि=दूसरे की स्त्री । ४—एहनि=ऐसी ।

[१५०]

सजनी अपद न मोहि परबोध।
तोड़ि जोड़िअ जहाँ गाँठ पड़ए तहाँ
तेज तम परम बिरोध ॥२॥

सलिल सनेह सहज थिक सीतल
ई जानए सब कोई।
से जदि तपत कए जतने जुड़ाइअ
तइओ बिगत - रस होई ॥४॥

गेल सहज हे कि रिति उपजाइअ
कुल—ससि नीली रंग (?)।
अनुभवि पुनु अनुभवए अचेतन
पड़ए हुतास पतंग ॥६॥

दूरि गेल=दूर हो गया। ५—एक नये कमल के फूल को (अर्थात् मुझे) नीम की डाली पर डाल दिया, वह यहीं सूख गया, और नेवार का फूल रसयुक्त होकर खिला। ७—ओतहि=वहीं। ८—समागम=भेंट। १०—आओत=आवेगा।

१—अपद=अस्थान, अनुचित रूप से। परबोध=समझाओ। ३—सहज थिक सीतल=स्वभावतः ही ठंढा है। ४—तपत कए=गर्म करके। जतने=यत्न-पूर्वक। जुड़ाइअ=ठंढा कीजिये। तइओ=तोभी। बिगत-रस=रसहीन। ५—कुल-रूपी चन्द्रमा में नीला धब्बा पड़ जाने पर कितना भी प्रयत्न करने पर क्या उसमें स्वाभाविक रंग उत्पन्न हो सकता है। ६—अनुभवि=अनुभव करके। पुनु=पुनः। अनुभवए=अनुभव करता है। हुतास=अग्नि।

[१५१]

कबहु रसिक सएँ दरसन होअ जनु
दरसन होअ जनु नेह ।
नेह बिछोह जनु काहुक उपजओ
बिछोह धरओ जनु देह ।।२।।

सजनी दुर करु ओ परसंग।
पहिलहि उपजइते प्रेमक अंकुर
दारुन विधि देल भंग ।।४।।

दैबक दोष प्रेम जदि उपजए
रसिक संग जनु होए ।
कान्ह सएँ गुपुत नेह करि अब एह
सबहु सिखाओल मोए ।।६।।

एहन औषध सखि कतहु न पाइअ
जेहि जौवन जरि जाब ।
असमंजस रस सहए न पारिअ
एह कवि सेखर गाब ।।८।।

१—सएँ=से । जनु=नहीं । २—बिछोह=जुदाई । काहुक=किसी को। ३—दुर करु=अलग करो, बंद करो। परसंग=विषय, बातचीत । ४—दारुन=कठोर । देल भंग=तोड़ डाला, कुचल डाला । ५—दैबक दोष=विधि-विड़म्बना से । ६—कृष्ण से गुप्त प्रेम करके मैं एक शिक्षा लोगों को देती हूँ । ७—ऐसी दवा मैं कहीं भी नहीं पाती, जिसके खाने से यह जवानी जल जाती। ८—असमंजस=दविधा। सहए न पारिअ=सहा नहीं जाता।

[१५२]

जनम होअए जनु, जओं पुनि होइ।
जुबती भए जनमए जनु कोइ ।।२।।

होइए जुबति जनु हो रसमंति।
रसओ बुझए जनु हो कुलमंति ।।४।।

निधन माँगओं विहि एक पए तोहि।
थिरता दिहह अबसानहु मोहि ।।६।।

मिलओ सामि नागर रसधार।
परबस जनु होअ हमर पिआर ।।८।।

परबस होइह बुझिह बिचारि।
पए बिचार हार कओन नारि।।१०।।

भनइ विद्यापति अछि परकार।
दंद-समुद होअ जिब दए पार ।।१२।।

१—जओं=यदि। २—जनु=नहीं। जुबती=नौजवान स्त्री। ४—यदि युवती होकर जन्म मिले तो सुरसिका न हो, और यदि सुरसिका हो तो ऊँचे कुल की नहीं हो। ५—निधन=मृत्यु। बिहि=ब्रह्मा। एक पए=एक ही। ६—थिरता=स्थिरता। दिहह=देना। अबसानहु=अन्तिम अवस्था में भी। ७—सामि=स्वामी, पति। नागर=चतुर। रसधार=रसिक। ८—परबस=दूसरे के वश। ९-१०—यदि परवश भी हो जाय तो कुछ समझ-बूझ रक्खे, क्योंकि समझ-बूझ होने पर कौन स्त्री हार सकती है अर्थात् पति विचारवान् हो तो कोई स्त्री हार न सकती। ११—अछि=है। परकार=उपाय। दंद=कलह। समुद-समुद्र। प्राण देकर कलह-रूपी समुद्र से पार हो जाओ।

[१५३]

चरन - नखर मनि - रंजन छाँद।
धरनि लोटाएल गोकुलचाँद ॥२॥

ढरकि - ढरकि परु लोचन नोर।
कतरुप मिनति कएल पहु मोर ॥४॥

लागल कुदिन कएल हमे मान।
अबहु न निकसए कठिन परान ॥६॥

रोस तिमिर अत बेरि किए जान।
रतने भेल मोहि गेरुक भान ॥८॥

नारि जनम हमे कएल अभागि।
मरन सरन भेल मानक लागि ॥१०॥

विद्यापति कह सुन धनि राइ।
रोअसि काहे कह भल समुझाइ ॥१२॥

१, २—मेरे चरण की नख-रूपी मणि को रंजित करने के बहाने वह गोकुलचन्द (श्रीकृष्ण) पृथ्वी में लोट गया। ३—नोर=आँसू। ४—कतरुप=कितने प्रकार से। मिनति=विनय। पहु=प्रीतम। ६—निकसए=निकलता है। ७, ८—क्रोध रूपी अन्धकार में मैं उस समय क्या जानने गई, रत्न को मैंने गेरू मिट्टी समझा। ९—अभागि=अभाग्य। १०—मान के कारण मुझे मृत्यु की शरण लेनी पड़ी। ११—राइ=राधा। १२—रोअसि=रोती है। काहे=किसलिए? भल समुझाइ=अच्छी तरह समझाकर।

[१५४]

धनि भेलि मानिनि सखि गन माँझ ।
अनुनय करइत उपजए लाज ॥२॥

पिरितक आरति बिरति न सहई ।
इंगित - भंगिएँ दुहु सब कहई ॥४॥

राहि सुचेतनि कान्ह सयान ।
मर्नाह समाधल मन अभिमान ॥६॥

अधर मुरलि जब धरए मुरारि ।
फोइ कबरि धनि बाँध समारि ॥८॥

जब निज पुर - पथ धरए मुरारि ।
सखि लखि अनतए चलु बर नारि ॥१०॥

हरि जब छाया कर धनि पाए ।
धनि संभ्रमे बइसलि कर लाए ॥१२॥

कह कबिसेखर बुझए सयान ।
इंगितें रस पसार पँचबान ॥१४॥

१—धनि=बाला । ३—आरति=आतुरता । प्रेम की आतुरता उदासीनता नहीं रहती । ४—इंगित-भंगिएँ=इशारे से । ५—राहि=राधा । सुचेतनि=सुचतुरा । ६—समाधल=समाधान किया । ८—फोइ=खोलकर । कबरि=केश । धनि=बाला । सामरि—सँभालकर । ९—पुर-पथ=गाँव का रास्ता । १०—अनतए=अन्यत्र । सखियों की ओर देखकर (वह चतुर स्त्री) दूसरी ओर चली । ११—जब कृष्ण ने (रास्ते मे), राधा को पाकर, उस पर छाया की तब राधा झटपट उनका हाथ पकड़ बैठ गई ।

[१५५]

(श्रीकृष्ण का मान)

राधा-माधब रतनक मन्दिर
निबसए सयनक सूखे।
रसें - रसें दारुन दंद उपजल पुन
कान्ह चलल तब रोखे ॥२॥
नागर - अंचल कर धरि नागरि
हँसि मिनती करु राधा।
नागर - हृदय पाँचसर हनलक
उरज दरसि मन बाधा ॥४॥

देख सखि झूठक मान।
कारन किछु ओ बुझए नहि पाइअ
तब काहे रोखल कान ॥६॥

रोख समापि पुन रभस पसारल
भेल मधथ पँचबान।
अवसर जानि मनाबथि राधा
कवि विद्यापति भान ॥८॥

१—रतनक=रत्न का बना। निबसए=निवास करते हैं। सयनक सूखे=शय्या के सुख में—मिलनानन्द में। २—रसें-रसें=धीरे-धीरे। दारुण=कठोर। दंद=कलह। ३—अंचल=चादर की खूँट। कर=हाथ। ४—पाँचसर=कामदेव। हनलक=मारा। उरज=कुच। दरसि=देखकर। मन-बाधा=मन में बाधा उपस्थित हुई, मन चंचल हो उठा। ६—रोखल=क्रुद्ध हुआ।

[१५६]

एत दिन छलि नब रीति रे ।
जल मिन जेहनि पिरीति रे ॥२॥

एकहि बचने बिच भेल रे ।
हँसि पहु उतरो न देल रे ॥४॥

एकहि पलँग पर कान रे ।
मोरे लेखें दुर देस भान रे ॥६॥

जाहि बन केओ नहि डोल रे ।
ताहि बन पिया हँसि बोल रे ॥८॥

धरब जोगिनिआक भेस रे ।
करब मएँ पहुक उदेस रे ॥१०॥

कवि विद्यापति भान रे ।
सुपुरुष न कर निदान रे ॥१२॥

७—समापि=समाप्त कर। रभस पसारल=काम-क्रीड़ा में लगा। मधथ=मध्यस्थ, पंच। ८—(उपयुक्त) समय जानकर राधा मनाने लगीं। भान=कहते हैं।

१—एत=इतने। छलि=थी। नब=नवीन। २—मिन=मछली। जेहनि=जैसा। ३—बिच भेल=अन्तर पड़ गया। ४—पहु=प्रीतम। उतरो=उत्तर भी। ५—कान=कन्हैया, कृष्ण। ६—मोर लेखें=मेरे लिए। भान=मालूम होता है। ७—केओ=कोई। डोल=आता-जाता है। ९—धरब=धरूँगी। जोगिनिआ=जोगिन। १०—पहुक=प्रीतम का। उदेस=तलाश। ११—निदान=अन्त, मर्यादा का अतिक्रमण।

[१५७]

जतहि पेम रस ततहि दुरन्त ।
पुनु कर पलटि पिरिति गुनमन्त ॥२॥
सबतहु सुनिअ अइसन बेवहार ।
पुनु टूटए पुनु गाँथिअ हार ॥४॥
ए कान्ह ए कान्ह तोहहि सयान ।
बिसरिए कोप करह समधान ॥६॥
पेमक अंकुर तोहें जल देल ।
दिन-दिन बाढ़ि महातरु भेल ॥८॥
तोहें गुन न गुनल, सउतिनि आछ ।
रोपि न काटिअ बिषहुक गाछ ॥१०॥
जे नेह उपजल प्रानक ओल ।
से न करिअ दुर दुरजन बोल ॥१२॥
जगत बिदित भेल तोहे-हमे नेह ।
एक परान कएल दुइ देह ॥१४॥
भनइ विद्यापति न कर उदास ।
सुपुरुख बचन करिअ बिसवास ॥१६॥

१-२—जहाँ प्रेम-रस है, वहीं कलह भी है। अतः गुणवान् एक बार टूटने पर पुनः प्रीति करते हैं। ३—सबतहु=सर्वत्र ही। ६—**समधान**=समाधान। ७—तोह=तुमने। गुन न गनल=तुमने गुण कुछ न देखा। **सउतिनि** आछ=(और) सौतिन कर लाये। १०—विषहुक गाछ=विष का भी वृक्ष। ११—प्रानक ओल=प्राणों की ओर, अन्तस्तल में। १२—दुर=दूर, भंग। १३—तोहे हमे=तुम्हारा और मेरा।

१५८]

की हमे साँझक एकसरि तारा
भादब चौठिक ससी ।
इथि दुहु माझ कओन मोर आनन
जे पहु हेरसि न हँसी ॥२॥

साए साए, कहह कहह कान्हु कपट करह जनु
कि मोरा भेल अपराधे ॥
न मएँ कबहु तुअ अनुगति चुकलिहुँ
बचन न बोलल मंदा ।
सामि समाज पेम अनुरंजिअ
कुमुदिनि सन्निधि चंदा ॥५॥

भनइ विद्यापति सुनु बर जौबति
मेदिनि मदन समाने ।
राजा सिबसिंह रूपनराएन
लखिमा देवि रमाने ॥७॥

१-२—क्या मैं संध्याकाल की अकेली तारा हूँ (जिसे लोग देखना नहीं चाहते) या मैं भादो शुक्ल चतुर्थी का चन्द्रमा हूँ (जिसे देखने से कलंक लगता है)। मेरा मुख इन दोनो में क्या है, जो हे प्रियतम, उसे तुम हँसकर नहीं देखते। (कैसा अच्छा तर्क है।) ३—साए=सखि। कहह=कहो। ४—अनुगति=पीछे जाना, आज्ञा मानना। ५—सामि=स्वामी, पति। अनुरंजिअ=अनुरंजन करती हूँ, निभाती हूँ। सन्निधि=निकट। ६—मेदिनि मदन=पृथ्वी के कामदेव।

[१५६]

करतल कमल नयन ढर नीर।
न चेतए अभरन कुंतल चीर ।।२।।

तुअ पथ हेरि-हेरि चित नहि थीर।
सुमिरि पुरुब नेहा दगध सरीर ।।४।।

कत परि माधब साधब मान।
बिरही जुबति माँग दरसन दान ।।६।।

जल-मध कमल गगन-मध सूर।
आँतर चान कुमुद कत दूर ।।८।।

गगन गरज मेघ सिखर मयूर।
कत जन जान नेह कत दूर ।।१०।।

भनइ विद्यापति बिपरित मान।
राधा बचनें लजाएल कान ।।१२।।

१—करतल=हथेली। कमल=(मुख)। नीर=आँसू। २—चेतए=सँभालती है। अभरन=आभरण, गहने। कुंतल=केश। चीर=वस्त्र। ३—तुअ पथ=तेरी राह। हेरि-हेरि=देख-देखकर। थीर=स्थिर। ४—पुरुब=पहला। दगध=जलता है। ५—कत परि=कब तक। साधब मान=मान किये रहोगे। ७—मध=मध्य। सूर=सूर्य। आँतर=अन्तर, बीच। चान=चन्द्रमा। कुमुद=कुईं, कुमुदिनी। कत=कितना। ६—गरज=गरजता है। सिखर=पहाड़ की चोटी। १०—जन=आदमी। जान=जानते हैं। ११-१२—यह विपरीत मान कैसा ? (मान स्त्रियाँ करती है, पुरुष नही)। राधा का यह वचन सुन श्रीकृष्ण लज्जित हुए।

मान-भंग

[१६०]

बड़ रे चतुर मोर कान ।
साधन बिनहि भाँगल मोर मान ।।२।।

जोगी बेस धरि आओल आज ।
के इह समुझब अपरुब काज ।।४।।

सासु बचनें हमे भीख आनि देल ।
मोर मुख हेरइते गदगद भेल ।।६।।

कह तब—'मान-रतन देह मोय' ।
समुझल तब हमे सुकपट सोय ।।८।।

जे किछु कहल तब कहइते लाज ।
केओ नहि जानल नागर-राज ।।१०।।

विद्यापति कह सुन्दरि राई ।
किए तोहें समुझबि से चतुराई ।।१२।।

२—भाँगल=तोड़ा । ३-आओल=आया । ४—के=कौन । अपरुब=अपूर्व । ५—सासु बचनें=सास के कहने से । आनि देल=ला दिया । ६—हेरइते=देखते । ७—तब कहा—मुझे मान-रूपी रतन दो । ८—सोय=वह । १०—जानल=जाना । नागर-राज=चतुरों का बादशाह । ११—राई=राधा । १२—किए=कैसे ?

—:o:—

"सुभाषितेन गीतेन युवतीनां च लीलया ।
मनो न भिद्यते यस्य स योगी ह्यथवा पशुः ।"

[१६१]

जटिला सासु फुकरि तहि बोलल
बहुरि बेरि काहे ठाढ़ि ।
ललिता कहल अमंगल सूनल
सति पतिभय अबगाढ़ि ।।२।।

सुनि कह जटिला घटल की अकुसल
घर सएँ बाहर होहि ।
बहुरिक पानि धरि हरह जोगी
किए अकुसल कह मोहि ।।४।।

जोगेस्वर फेरि बहुरिक पानि धरि
` कुसल करब बनदेब ।
इहे एक अंक बंक बिसंकओं
बन मधि पसुपति सेब ।।६।।

१—फुकरि=चिल्लाकर । बहुरि=बहुरिया, पतोहू । बेरि=बिलम्ब । २—अबगाढ़ि=निश्चय । जटिला सास चिल्लाकर बोली—बहुरिया, उतनी देर से वहाँ क्यों खड़ी हो ? ललिता ने कहा—कुछ अमंगल सुना है । सती को पति-भय निश्चय है। ३—घटल की अकुसल=कौन-सा अमंगल घटा है ? ४—बहुरिक पानि=बहुरिया के हाथ । हेरह=देखो । ५-६-अंक=रेखा । वंक=टेढ़ा । बिसंकओ=शंका करता हूं । मधि=में । तब योगेश्वर ने बहुरिया का हाथ धरकर कहा—वन-देवता कुशल करें, यही हाथ की एक रेखा कुछ टेढ़ी है, जिससे अकुशल की आशंका है । इसके निवारण के लिए वन में पशुपति की सेवा करनी होगी । ७-८—पूजा के बहुत से

पुजनक तंत्र - मंत्र बहु आछए
से हम किछु नहि जान।
जटिला कह आन देव कहाँ पाओब
तुहु बीज कर इह दान ।।८।।

एत सुनि दुहु जन मंदिर पइसल
दुहु जन भेल एक ठाम।
मनमथ मंत्र पढ़ाओल दुहु जन
पूरल दुहु मनकाम ।।१०।।

पुनु दुहु जन मंदिर सएँ निकसल
जटिला सएँ कह भाखी।
जब इह गौरि अराधन जाओब
बिधबा जन घर राखी ।।१२।।

एत कहि सबहु चललि निज मंदिर
जोगी चरन प्रनाम।
विद्यापति कह नटबर सेखर
साधि चलल मन काम ।।१४।।

मंत्र-तंत्र हैं। हम कुछ नहीं जानते। जटिला सास ने कहा—तुम्हारे ऐसा देवता फिर कहाँ मिलेगा—तुम इसे बीजदान दो—मंत्र की दीक्षा दो। ९—पइसल=प्रवेश किया। ११—सएँ=से। १२—जब यह गौरी की आराधना करने जाय, तब विधवा को घर में ही रख ले—विधवा इसके साथ न जाय। [बेचारी सास विधवा थी, अतः बहू अकेली जायगी, तो मिलने में सुविधा होगी।] १४—मनकाम=मनःकामना, इच्छा।

[१६२]

गोकुल देवदेयासिनि आइलि
नगरहि ऐसे पुकारि ।
अरुन बसन पैन्हि जटिल बेस धरि
कान्ह द्वार माझ ठारि ।। २ ।।

सुनि धनि जटिला तुरत चलि आइलि
हेरइत चमकित भेल ।
हमर बधुक रीति देखि जनि आनमति
कहि मंदिर लए गेल ।।४।।

देवदेयासिनि कान ।
जटिला बचन सुधामुखि नियरहि
एक दिठि हेरइ बयान ।। ६ ।।

कह तब अतनु देव इथे पाओल
हृदि - मधि पइसल काल ।

१—देवदेयासिनि=वह स्त्री जो झाड़-फूँक करती है । आइलि=आई । नगरहि=नगर में । २—अरुन=लाल । बसन=वस्त्र । पैन्हि=पहनकर । जटिल=योगिनी । माझ=में । ३—जटिला धनि=सास । चमकित= आश्चर्यित । ४—बधुक=बधू की, पतोहू को । जनि=जैसे । आनमति=कुछ दूसरी ही की तरह की । लए गेल=(श्रीकृष्ण को) ले गई । ६—जटिला= सास । सुधामुखि=चद्रवदनी (बाला) । नियरहि=निकट ही । एकदिठि= एकटक । बयान=मुख । ७—अतनुदेव=कामदेव । इथे=इसे । हृदिमधि= हृदय में । पइसल=प्रवेश किया ।

निरजन होइ मंत्र जब झाड़िअ
तब इह होएब भाल ।। ८ ।।

एत सुनि 'जटिला घर दोहे लेअल
निरजन दुहु एक ठाम ।
सब जन निकसल बाहर बइसल
पुरल कान्ह मनकाम ।। १० ।।

बहु खन अतनु मंत्र पढ़ि झारल
भागल तब सेहो देवा ।
देवदेयासिनि घर सएँ निकसलि
चातुरि बूझब केबा ।।१२।।

जटिला बहुत भकति करि हरखलि
कतक भीख आनि देल ।
कह कबिसेखर भीख लइए तब
सेहो देयासिनि गेल ।।१४।।

८—निरजन=एकान्त में । झाड़िअ=झाड़-फूँक करूँ । इह=यह । भाल =अच्छी । ६—एत=इतना । जटिला=सास । घर दोहे लेअल=दोनों को र में ले आई । ठाम=जगह । १०—निकसल=निकल गई । बइसल=बैठी । मनकाम=मन:कामना, इच्छा । ११—भागल=भाग गया । सेहो=वह । १२—केबा=किसने ? अर्थात् किसी ने नहीं । १३—भकति=भक्ति । कतक =कितना (बहुत) । आनि देल=ला दिया । १४—गेल=गई ।

—:०:—

"कलेजे की सबसे गुप्त एवं मधुर रागिणी का नाम कविता ।"

१६३

बर नागर साजए नागरि बेसा ।
मुकुट उतारि सीमंत सँवारल
बेनी बिरचल केसा ।। २ ।।

चंदन धोए सिंदुर भाल रंजल
लोचन अंजन अंका ।
कुंडल खोलि करनफूल पहिरल
भरि तनु केसर-पंका ।। ४ ।।

बेसर खचित सतेसरि पहिरल
कनक चूड़ि कर कंजे ।
चरन-कमल पास जावक रंजल
तापर मंजिर गंजे ।। ६ ।।

कंचुकि माँझ कदम्ब-कुसुम भरि
आरम्भल कुच आभा ।
अरुनाम्बर बर साड़ी पहिरल
वस्त्र बिलोकन सोभा ।। ८ ।।

१—चतुर कृष्ण स्त्री का वेष बना रहे हैं। २—सीमंत=माँग। बिरचल=बनाया। ३—रंजल=अनुरंजित किया, लगाया। अंका=रेखा। ४—केसर-पंक=केशर का लेप। ५—कनक चूड़ि कर कंजे=कमल-रूपी हाथों में सोने की चूड़ियाँ। ६—जाबक=महावर। गंजे=गुंजार कर रहा है। ७—चोली में कदम्ब के फूल रखकर कुचों का आभास बनाया। ८—अरुनाम्बर=लाल कपड़ा।

धरि परिबादिनि स्याम मिलन हित
शुभ अनुकूल पयाने।
पहिलहि बाम चरण तुलि मोहन
त्रियागति लच्छन भाने ।।१०।।

ऐसन चरित मिलन जहाँ सुन्दरि
दूरहि एकलि ठारि।
कर धरि यंत्रक तंत्र सँवारत
केओ पए लखए न पारि ।।१२।।

राइक निकट बजाओल सुन्दरि
सुनइत भए गेल साधा।
ए नव - यौवनि नबिन बिदेसिनि
आबह पुकारए राधा ।।१४।।

सुनइत स्याम हरखि चित आएल
उठि धनि आदर देल।
बाँहि पकड़ि निज आसन बइसाओल
कत कत हरखित भेल ।।१६।।

९—परिबादिनि=वीणा। पयाने=जाना। १०—पहले बायाँ पैर बढ़ाया, क्योंकि स्त्रियों की यही रीति है। ११—एकलि=अकेली। १२—कर=हाथ। यंत्र=वीणा। तंत्र=तार। केओ पए=कोई भी। लखए न पारि=देख नहीं सकती। १३—राइक=राधा के। साधा=इच्छा। १५—धनि=बाला। १६—बाँहि=बाँह। कत-कत=कितना।

*   *   *

जबहि बजाश्रोल बीन सुमाधुरि
रीझि देहल मनि - माल।
अइसे बजाबए हमर जंतरिय
मोहन जंत्र रसाल ।।२०।।

नाम गाम कह कुल अवलम्बः
ब्रज आगम किए काजा।
सुखमइ नाम मथुरापुर जदुकुल
गुनिजन पीड़ए राजा ।।२२।।

धनि कह तुअ गुन रीझि प्रसन्न भेल
माँगह मानस जोए।
मनोरथ कर्म जाँचलि जदि सुन्दरि
मान रतन देह मोए ।।२४।।

हँसि मुख मोड़ि पीठि दए बइसल
कान्ह कएल धनि कोर।
टूटल मान बढ़ल कत कौतुक
भूपति के करु श्रौर ।।२६।।

१९—देहल=दिया। २०—बजाबए=बजाता है। २१—जंतरिया=वीणा बजानेवाला। यंत्र=वीणा। २२—मेरा नाम सुखमयी है, गाँव मथुरा, कुल यदुवंश, वहाँ के राजा गुणियों को पीड़ा देते हैं, इसलिए आई हूँ। २३—मानस=हृदय। २४—मान रतन=मानरूपी रत्न। देह=दो। २५—कोर=गोद। २६—भूपति=शिवसिंह।

विदग्ध-विलास

[१६४]

आजुक लाज तोहे कि कहब माई ।
जल दए धोइ जदि तबहु न जाई ॥२॥

नहाई उठलि हमे कालिन्दि तीर ।
अंगहि लागल पातल चीर ॥४॥

तें बेकत भेल सकल सरीर ।
ताहि उपनीत समुख जदुबीर ॥६॥

बिपुल नितम्ब अति बेकत भेल ।
पलटि ताहि पर कुंतल देल ॥८॥

उरज उपर जब देहल दीठ ।
उर मोरि बइसलिहुँ हरि करि पीठ ॥१०॥

हँसि मुख मोड़ए दीठ कन्हाई ।
तनु-तनु झाँपइते झाँपल न जाई ॥१२॥

विद्यापति कह तोहें अगेआनि ।
पुनु काहे पलटि न पैसलि पानि ॥१४॥

१—आजुक=आज का। माई=अरी दैया। २—जल दए=जल देकर। ३—नहाई=स्नान कर। ४—पतली साड़ी शरीर से सट गई। ५—तें=इससे। बेकत=व्यक्त, प्रकट। ३—ताहि=वहाँ। उपनीत=आ पहुँचा। जदुबीर=कृष्ण। ७, ८—पलटि=पर्दा (?) ताहिपर=उसपर। कुंतल=केश। ६—देहल दीठ=(श्रीकृष्ण) ने दृष्टि डाली। १०—मोरि=मोड़कर। बइसलिहुँ=मैं बैठ गई। हरि करि पीठ=कृष्ण की ओर पीठ करके। १२—तनु-तनु=अंग-अंग। १४—पुनः लौटकर पानी में क्यों न पैठ गई ?

[१६५]

हमे अबला सखि किअ गुन जान ।
से रसमय तनु रसिक सुजान ॥२॥

कतहु जतने मोहि कोर बइसाए ।
बाँधल बेनि से कबरि खसाए ॥४॥

कंचुक देल हृदय पर मोर ।
परसि पयोधर भए गेल भोर ॥६॥

कंठ पहिराओल मनिमय हार ।
अंग बिलेपन कुंकुम भार ॥८॥

बसन पेन्हाओल कए कत छंद ।
किंकिनि जालहि नीबि निबंध ॥१०॥

निज कर पल्लव मोर मुख माज ।
नयनहि कयल सु-काजर साज ॥१२॥

अलक तिलक दए चोलि निहारि ।
कह कवि सेखर जाओं बलिहारि ॥१४॥

१—किअ गुन जान=क्या गुन जानने गई। से=वह। ३—कतहु=कितने। कोर बइसाए=गोद में बिठलाकर। ४—कबरि=केश। खसाए=खोलकर। ५—कंचुक=चोली। ६—परसि=स्पर्श कर, छूकर। पयोधर=कुच। भोर=बेसुध। ८—बिलेपन=लेप किया। कुंकुम=केसर। ९—पेन्हाओल=पहनाया। कए कत छन्द=कितने छल करके। १०—नीबि निबंध=नीबी को बांधा। ११—माँज=माँजना, पोंछना। १३—अलक तिलक=महावर और टीका। चोलि=कंचुकी।

[१६६]

ए धनि रंगिनि कि कहब तोए ।
आजुक कौतुक कहल न होए ॥२॥
एकलि सुतलि छलि कुसुम सयान ।
दोसर मनमथ कर धनुबान ॥४॥
नूपुर झुन - झुन आएल कान ।
कौतुक मुंदि हमे रहलि नयान ॥६॥
आएल कान्ह बइसल मोर पास ।
पास मोड़ि हमे नुकाओल हास ॥८॥
कुंतल कुसुमदाम हरि लेल ।
बरिहा माल पुनहि मोहि देल ॥१०॥
नासा मोतिम गीमक हार ।
जतने उतारल कत परकार ॥१२॥
कंचुकि फोअइते पहु भेल भोर ।
जागल मनमथ बाँधल चोर ॥१४॥
कवि विद्यापति एह रस भान ।
तोहि रसिका पहु रसिक सुजान ॥१६॥

१—रंगिनि=सुरसिका । ३—एकलि=अकेली । सुतलि छलि=सोई थी । कुसुम सयान=पुष्पशय्या पर । ४—मनमथ=कामदेव । कर=हाथ । ५—आएल=आया । ७—बइसल=बैठा । मोर=मेरे । ८—करवट फेरकर मैंने अपनी हँसी छिपाई । ९—कुंतल=केश । कुसुमदाम=फूल की माला । हरि लेल=हर लिया, उतार लिया । १०—बरिहा=मयूर की पूँछ । ११—गीमक=गले का । १३—फोअइते=खोलते ही । पहु=प्रीतम । भोर=बेसुध । १५—भान=कहते हैं ।

[१६७]

हरि धरु हार चम्रोंकि परु राधा ।
म्राध माधव कर गिम रहु म्राधा ।।२।।

कपट कोप धनि दिठि धरु फेरी ।
हरि हँसि रहल बदन बिधु हेरी ।।४।।

मधुरिम हास गुपुत नहि भेला ।
तखने सुमुखि-मुख चुम्बन देला ।।६।।

कर धरु कुच, म्राकुल भेलि नारी ।
निरखि म्रधर-मधु पिबए मुरारी ।।८।।

चिकुर-चमर झरु कुसुमुक धारा ।
पिबि कहु तम जनि बम नव तारा ।।१०।।

विद्यापति कह सुन्दरि बानी ।
हरि हँसि मिलति राधिका रानी ।।१२।।

१, २—राधिका सोई हुई थी कि कृष्ण ने चुपके निकट जाकर उसका हार पकड़ लिया। राधिका चौंक पड़ी। हार टूट गया। म्राधा हार कृष्ण के हाथ में रहा म्रौर म्राधा राधिका के गले में। ३—कपट कोप=झूठमूठ का क्रोध। दिठि धरु फेरी=म्रांखें फेर लीं। ४—बदनबिधु=मुखचंद। हेरी=देखना ५, ६—राधा की मधुर मुस्कान छिप न सकी; उसी समय कृष्ण ने उसके मुख को चूम लिया। ८—म्रधर=नीचे का म्रोष्ठ। ९—चिकुर=केश। १०—मानो म्रन्धकार तारे को निगलकर पुनः उसे उगल रहा हो।

[१६८]

सासु सुतलि छलि कोर अगोर।
तहि अति ढीठ पीठ रहु चोर॥२॥

कत कर-आखर कहल बुझाई।
आजुक चातुरि कहल कि जाई॥४॥

नहि कर आरति ए अबुझ नाह।
अब नहि होएत बचन निरबाह॥६॥

पीठ आलिंगन कत सुख पाब।
पानि पियास दूध किए जाब॥८॥

कत मुख मोरि अधर रस लेल।
कत निसबद कए कुच कर देल॥१०॥

समुख न जाए सघन निसोआस।
किए कारन भेल दसन विकास॥१२॥

जागलि सासु चलल तब कान।
न पूरल आस विद्यापति भान॥१४॥

१—सुतलि छलि=सोई थी। कोर अगोर=अपनी गोद में लेकर। २—तहि=वहाँ। ३—हाथ के अक्षरों (संकेतों) द्वारा कितनी ही बातें बुझाईं। ४—कहल की जाई=क्या कहा जाता है? ५—आरति=आतुरता, शीघ्रता। ६—नाह=प्रीतम। ७,८—मेरी पीठ के आलिंगन से उन्हें क्या सुख मिला—पानी की प्यास कहीं दूध से जाती है? ९—मोरि=मोड़कर। १०—निसबद कर=निःशब्द होकर, चुपचाप। ११—निसोआस=निःश्वास, साँस। ऊँची साँस सम्मुख नहीं छोड़ती कि कहीं उस साँस के स्पर्श से मेरी सास न जग जाय। १२—न मालूम क्यों, उसी समय दाँत चमक उठे। १३—कान=कृष्ण। १४—न पूरल आस=आशा नहीं पूरी हुई।

[१६६]

कि कहब हे सखि आजुक रंग।
सपनहि सूतल कुपुरुष संग ॥२॥

बड़ सुपुरुख बलि आएल धाई।
सूति रहल मोर आँचर झँपाई ॥४॥

काँचलि खोलि आलिगन देल।
मोहि जगाए आपु निद गेल ॥६॥

हे बिहि हे बिहि बड़ दुख देल।
से दुख रे सखि अबहु न गेल ॥८॥

भनइ विद्यापति एह रस धंद।
भेक कि जान कुसुम-मकरंद ॥१०॥

१—रंग=रस-वार्त्ता। २—आज मैं स्वप्न में—भ्रम में आकर—कुपुरुष के साथ सोई। ३—बलि=समझकर। आएल धाई=दौड़कर आया। ४—आँचर झँपाई=आँचर से ढँककर। ५—काँचलि=चोली। आलिगन देल=छाती से लगाया। ६—मुझे जगाकर पुनः आप सो रहा। ७—बिहि=ब्रह्मा। ९—रस धंद=रस की विचित्रता। १०—भेक=मेढ़क, बेंग। कि=क्या कुसुम-मकरंद=फूल का पराग।

—०—

"भ्रमरहिता सा कचवत्स्त्रीणां कुचवच्च सरसहिता।
लसदक्षरपीयूषाधरवत्कविता महात्मनां जीयात् ॥"

[१७०]

आकुल चिकुरें बेढ़ल मुख सोभ।
राहु कएल ससि-मंडल लोभ ॥२॥

बड़ अपरुब दुहु चेतन मेलि।
बिपरित रति कामिनि कर केलि ॥४॥

कुच बिपरीत बिलम्बित हार।
कनक कलस बम दूधक धार ॥६॥

पिआ मुख सुमुखि चूम तेजि ओज।
चाँद अधोमुख पिबए सरोज ॥८॥

किंकिनि रनित नितम्बहि छाज।
मदन-महासिधि बाजन बाज ॥१०॥

उभरल चिकुर माल धरु रंग।
जनि जमुना जल गांगतरंग ॥१२॥

बदन सोहाओन स्रम-जल बिन्दु।
मदन मोति लए पूजल इन्दु ॥१४॥

भनइ विद्यापति मने अनुमानि।
नागरि रम पिआ अनुमत जानि ॥१६॥

१—आकुल=व्यग्र, चंचल, छिटके हुए। चिकुर=केश। बेढ़ल=घेरा हुआ। ३—दुहु चेतन=दो चतुर (राधा-कृष्ण)। ५—बिलम्बित=लटका हुआ। ६—बम=वमन करता है, उगलता है। ७—ओज=संकोच, लाज। ९—रनित=रुनझुन आवाज। नितम्बहि=नितम्ब पर। छाज=शोभती है। ११—उभरल=खुले हुए। १६—रम=रमती है।

[१७१]

बिगलित चिकुर मिलित मुखमंडल
चाँद बेढ़ल घनमाला ।
मनिमय कुंडल स्रवन दुलित भेल
घाम तिलक बहि गेला ॥२॥

सुन्दरि तुअ मुख मङ्गल - दाता ।
रति - बिपरीत समर जदि राखब
कि करब हरि हर धाता ॥४॥

किंकिनि किनिकिनि कंकन कनकन
घनघन नूपुर बाजे ।
रति - रन मदन पराभव मानल
जय - जय दुन्दुभि बाजे ॥६॥

तिल एक जघन सघन रब करइत
होअल सैनक भंग ।
विद्यापति कवि ई रस गाबए
जामुन मीललि गंग ॥८॥

१—बिगलित=बिखरे हुए। घनमाला=मेघसमूह। २—स्रवन=कान। दुलित=डोलता हुआ। ४—समर=युद्ध। राखब=रक्षा करोगी। धाता=ब्रह्मा। ६—युद्ध में कामदेव हार गया है उसी की जय-भेरी बज रही है। ७—तिल एक= एक क्षण के लिए। सघन जघन=पुष्ट जाँघ। रव=शब्द। होअल=हो गया। ८—जमुन=यमुना।

[१७२]

सखि हे कि कहब किछु नहि फूर ।
सपन कि परतेख कहए न पारिअ
किअ नियरहि किअ दूर ।।२।।

तड़ित - लता तल जलद समारल
आँतर सुरसरि धारा ।
तरल तिमिर ससि सूर गरासल
चौदिस खसि पड़ु तारा ।।४।।

अम्बर खसल धराधर उलटल
धरनी डगमग डोले ।
खरतम बेग समीरन संचरु
चंचरिगन करु रोले ।।६।।

प्रनय - पयोधि - जलहि तन झाँपल
ई नहि जुग अवसान ।
के बिपरीत कथा पतिआएत
कवि विद्यापति भान ।।८।।

१—किछु नहि फूर=कहने की स्फूर्ति नहीं होती। २—परतेख=प्रत्यक्ष। किअ=क्या। नियरहि=निकट। ३—तड़ित-लता=बिजुली (राधा)। तल=नीचे। जलद=मेघ (कृष्ण)। आँतर=बीच में। सुरसरि धारा=गंगा की धारा (हार)। ४—तरल तिमिर=चंचल अंधकार (केश)। ससि=चन्द्रमा (मुख)। सूर=सूर्य (सिन्दूर-बिन्दु)। खसि पड़ु=गिर पड़े। तारा=नक्षत्र (माथे परके फूल)। ५—अम्बर=(१) आकाश, (२) वस्त्र। धराधर=

[१७३]

दुहुक संजुत चिकुर फूजल ।
दुहुक दुहू बलाबल बूझल ॥२॥

दुहुक अधर दसन लागल ।
दुहुक मदन चौगुन जागल ॥४॥

दुअओ अधर करए पान ।
दुहुक कंठ आलिगन दान ॥६॥

दुअओ केलि सँग-सँग भेलि (?)
सुरत सुखे बिभावरि गेलि ॥८॥

दुअओ सअन चेत न चीर ।
दुहु पिआसल पीबए नीर ॥१०॥

भन विद्यापति संसय गेल ।
दुहुक मदन लिखन देल ॥१२॥

---

(१)पर्वत,(२)कुच। उलटल=उलट पड़ा। धरनी=(१)पृथ्वी,(२)नितम्ब। ६—खरतम=तीव्र। समीरन=(१) हवा, (२) नि:श्वास। चंचरिगन=(१) भ्रमर, (२) किंकिणी, आदि। रोले=शोर। ७—प्रनय पयोधि=(१) प्रेम का समुद्र, पसीना। (२) प्रलय काल का समुद्र। जुग अवसान=युग का अंत, प्रलय। विपरीत रति का अद्भुत वर्णन है।

१—संजुत=साथ-ही-साथ। चिकुर=केश। फूजल=खुल गया। २—बलाबल=ताकत और कमजोरी। ३—अधर=नीचे का ओष्ट। दसन=दाँत। ७—केलि=कामक्रीड़ा। सँग-सँग=साथ-ही-साथ। ८—विभावरि=रात। ९—दोनों ी शय्या पर अपने-अपने वस्त्र तक नहीं सँभालते। १०—पिआसल =प्यासा।

वसन्त

[१७४]

माघ मास सिरि पंचमि गँजाइलि
नवम मास हरुआई हे ।
प्रति घन पीड़ा दुख बड़ पाओल
बनसपती भेलि धाई हे ॥२॥

सुभ खन बेरा सुकुल पक्ख हे
दिनकर उदित समाई हे ।
सोरह सम्पुन बतिस लखन सह
जनम लेल ऋतुराई हे ॥४॥

नाचए जुवतिजना हरखित मन
जनमल बाल मधाई हे ।
मधुर महारस मंगल गाबए
मानिनि मान उड़ाई हे ॥६॥

१—सिरिपंचमि=माघ शुक्ल पंचमी। गँजाइलि=पूर्ण-गर्भा हुई। नवम मास=बैसाख में वसंत का अंत होता है, जेठ से माघ तक नौ महीने हुए। हरुआई=आसन्न-प्रसवा हुई (?)। २—घन=अधिक। ३—खन=क्षण बेरा=बेला, समय। सुकुल पक्ख=शुक्लपक्ष। दिनकर = सूर्य। उदित समाई= उदय के समय। ४—सोरह सम्पुन=सोलह अंगों से सम्पूर्ण। बतिस लखन= बत्तीस लक्षण। ऋतुराई=वसंत। ५—जनमल=जन्म लिया। मधाई=माधव (वसंत)। ६—उड़ाई=उड़ाकर, लुटाकर।

बह मलयानिल ओोत उचित हे
नव घन भउ उजिआरा ।
माधवि फूल भेल मुकुता तुल
तें देल बन्दनवारा ॥८॥

पीअरि पाँड़रि महुअरि गाबए
काहरकार धतूरा ।
नागेसर कलि संख धूनि पुर
तगर ताल समतूरा ॥१०॥

मधु लए मधुकर बालक दए हलु
कमल पखुरिया लाई ।
पौंअनार तोरि कटि सुत बाँधल
केसर कएल बघनाई ॥१२॥

नव - नव पल्लव सेज ओछाओल
सिर देल कदँबक माला ।
बैसली भमरी हरउद गाबए
चक्का चान्द निहारा ॥१४॥

६—मलय पवन बह रहा है, उसे ओट करना उचित है। (क्योंकि शिशु को हवा लगने का भय है; अतः नवीन मेघ छा गये)। ८—मुकुता तुल=मुक्ता के समान। पीअरि पाँड़रि=फूल विशेष। महुअरि=गीत विशेष। काहरकार=तुरही बजाने वाला। तगर=एक प्रकार का फूल जिसका आकार ठीक झाल या मंजीर-जैसा होता है। समतूरा=समान। ११—(जन्म होने पर शिशु को पहले मधु चटाया जाता है)। दए हलु=दे दिया। १२—पौंअनार=पद्मनाल। कटि=कमर में (लड़के की कमर में सूत बाँधा जाता है)। बघनाई=बाघनख (लड़के

कनक केग्रासुति पत्र लिखिए हलु
रासि नछत कए मेला ।
कोकिल गनित - गुनित भल जानए
रितु वसंत नाम देला ।।१६।।

दखिन पवन घन आँग उगारए
किसलय कुसुम परागे ।
सुललित हार मँजरि घन कज्जल
आँखिहि आँजन लागे ।।२०।।

नव वसंत रितु अगुसर जौबति
विद्यापति कवि गावे ।
राजा सिवसिंह रूपनराएन
सकल कला मनभावे ।।२२।।

की कमर में पहनाया जाता है) । १३—ओछाओल=बिछाया । कदम्ब की माला सिरहाने (तकिये के रूप में) रक्खी । १४—हरउद=पलने का गीत । भमरी=भ्रमरी । १५—कनक केग्रासुति=एक प्रकार का फूल । पत्र=जन्म पत्र । नछत=नक्षत्र । १६—कोकिल गणित की गणना खूब जानता था; उसीने वसंत नाम रक्खा । १८—बीच की एक कड़ी गायब है । १९-२०—दक्षिण पवन किसलय और पुष्प-पराग लेकर उस शरीर में उबटन लगाता है । मंजरी का सुन्दर हार गले में है, मेघ ने उसकी आंखों में काजल लगा दिया ।

[१७५]

आएल रितुपति राज वसंत ।
धाओल अलिकुल माधबि-पंथ ।।२।।

दिनकर - किरन भेल पौगंड ।
केसर कुसुम धएल हेमदंड ।।४।।

नृप - आसन नव पीठल पात ।
कांचन कुसुम छत्र धरु माथ ।।६।।

मौलि रसाल - मुकुल भेल ताए ।
समुखहि कोकिल पञ्चम गाए ।।८।।

सिखिकुल नाचए अलिकुल यंत्र ।
आन द्विजकुल पढ़ आसिख मंत्र ।।१०।।

चन्द्रातप उड़ कुसुम पराग ।
मलय पवन सह भेल अनुराग ।।१२।।

१—आएल=आया । २—धाओल=दौड़ा । अलिकुल=भ्रमरसमूह। माधबि-पंथ=माधवी लता की ओर। ३–दिनकर=सूर्य। भेल=हुआ। पौगंड= किशोर, कुछ-कुछ तीव्र। हेमदंड=सोने का डंडा, आसा। "मदन-महीपति-कनकदंड-रुचि-केसर-कुसुमविकासे"—गीतगोविन्द । ५—पीठल=वृक्ष-विशेष, पिठवा। पात=पत्ता। कंचनकुसुम=चम्पा। ७—मौलि=किरीट। रसाल-मुकुल=आम की मंजरी। ताए=उसके। ९—सिखि=मोर। अलिकुल यंत्र =भौंरे बाजा बजा रहे हैं। १०—द्विजकुल=(१) पक्षी, (२) ब्राह्मण (पक्षी को इसलिए कहा जाता है कि उसका भी जन्म दो बार होता है, एक बार अंडे के रूप में, पुनः पक्षी के रूप में)। आन=मोर से भिन्न। आसिख मंत्र=

कुंदबल्ली तरु धएल निसान।
पाटल तून अशोक-दल बान ॥१४॥

किसुक लवँग-लता एक संग।
हेरि सिसिर रितु भेल दल भंग ॥१६॥

सैन साजल मधु-मखिका कूल।
सिसिरक सबहु कएल निरमूल ॥१८॥

उधारल सरसिज पाओल प्रान।
निज नव दल करु आसन दान ॥२०॥

नव वृन्दावन राज बिहार।
विद्यापति कह समयक सार ॥२२॥

आशीर्वादात्मक श्लोक। ११—चन्द्रातप=चंदोवा। फूलों के पराग ही चंदोवे-से उड़ रहे हैं। १२—मलयपवन=मलयाचल से आने वाली हवा, दक्षिण पवन। सह=साथ। कुंदबल्ली=वृक्ष-विशेष। निशान=पताका। पालन तून=पाटल का फूल ही तूण (तरकस) है। असोक-दल बान=अशोक के पत्ते वाण हैं। १५—किसुक=पलास (धनुष के समान), लवँगलता (ताँत के समान)। १६—भेल दल भंग=सैन्यभंग हो गया। १७—कूल=कुल। १९—उधारल=उद्धार किया। पाओल=पाया। २०—दल=पत्ता।

नान्ध्रीपयोधर इवातितरां प्रकाशो
नो गुर्जरीस्तन इवातितरां निगूढः॥
अर्थो गिरामपिहितः पिहितश्च कश्चित्
सौभाग्यमेति मरहट्टवधूकुचाभः॥

[१७६]

नव बृन्दावन नव नव तरुगन
नव नव बिकसित फूल ।
नवल वसंत नवल मलयानिल
मातल नव अलि कूल ॥२॥

बिहरए नवलकिशोर ।
कालिन्दि-पुलिन कुंज वन सोभन
नव नव प्रेम-विभोर ॥४॥

नवल रसाल-मुकुल-मधु मातल
नव कोकिल कुल गाब ।
नवयुवती गन चित उमताबए
नव रस कानन धाब ॥६॥

नव जुवराज नवल बर नागरि
मीलए नव नव भाँति ।
नित नित ऐसन नव नव खेलन
विद्यापति मति माति ॥८॥

१—नव=नवीन । बिकसित=खिले हुए । २—मलयानिल=मलय-पवन । मातल=पागल बना । अलिकूल=भौंरे । ३—बिहरए=बिहार करता है । नवल-किशोर=युवक कृष्ण । ४—कालिंदि=यमुना । पुलिन=किनारे । सोभन=सुशोभित । प्रेम-विभोर=प्रेम में बेसुध । ५—नई आम की मंजरी के मधु में मस्त बनी कोयल गा रही है । ६—उमताबए=उन्मत्त हो जाता है । ८—ऐसन=इस प्रकार का । खेलन=केलि । माति=मत्त बनी ।

[१७७]

लता तरुअर मंडप दीअ ।
निरमल ससधर भिति धबलीअ ॥२॥
पऊअँ नाल अइपन भल भेल ।
रात पल्लव नव पहिरन देल ॥४॥
गाबह माइ हे मंगल आए ।
बसन्त-बिबाह कानन-थलि जाए ॥६॥
मधुकर-रमनी मंगल गाब ।
दुजबर कोकिल मंत्र पढ़ाब ॥८॥
करु मकरंद हथोदक नीर ।
बिधु बरिआती धीर समीर ॥१०॥
कनअ केआसुति तोरन तूल ।
लावा बिथरल बेलिक फूल ॥१२॥
केसु कुसुम करु सिंदुर दान ।
जौतुक पाओल मानिनि मान ॥१४॥
केलि कुतूहल नव पँचबान ।
विद्यापति कवि दिढ़ कए भान ॥१६॥
अभिनव नागर बुझन रसवन्त ।
मंति महेस रेनुका देइ कन्त ॥१८॥

१—लता और वृक्ष से मंडप बनाया गया। २—निरमल=स्वच्छ। ससधर=चन्द्रमा। धबलीअ=उज्ज्वल कर दिया (चूना पोत दिया)। भिति=दीवार। ३—पऊअँ नाल=पद्मनाल, कमल का नाल। अइपन=ऐपन (जमीन पर मांगलिक चित्र)। ४—रात=लाल। पहिरन=परिधान, वस्त्र। ५—माइ हे=अरी मैया। ६—कानन थलि=वनस्थली। ७—मधुकर-रमनी=

[१७८]

नाचहु रे तरुनिहु तेजहु लाज ।
आएल बसन्त रितु बनिक-राज ॥२॥

हस्तिनि, चित्रिनि, पदुमिनी नारि ।
गोरी सामरि एक बूढ़ि वारि ॥४॥

बिबिध भाँति कएलन्हि सिगार ।
पहिरल पटोर गृम झूल हार ॥६॥

केओ अगर चंदन घसि भर कटोर ।
ककरहु खोइँछा करपुर तमोर ॥८॥

केओ कुमकुम रँग मरदाब आँग ।
ककरहु मोतिअ भल छाज माँग ॥१०॥

भौंरी रूपी स्त्री । ८—दुजबर=द्विज श्रेष्ठ । ९—हथोदक=हस्तोदक, जो पानी हाथ में लेकर विवाह का संकल्प पढ़ा जाता है । १०—बिधु=चन्द्रमा । समीर=पवन । ११—कनअ केआसुति=एक प्रकार का फूल । तोरन तूल= तोरण के समान । १२—लाबा=शादी के समय धान का लावा (खील) छींटा जाता है । १४—जौतुक=दहेज । १८—मंति=मन्त्री ।

२—बनिक-राज=व्यापारी-श्रेष्ठ । ४—बारि=बाला, नवयुवती । ६—पटोर=रेशमी वस्त्र । गृम=गले में । ७—घसि=घिसकर । ८—ककरहु= किसीके । करपुर=कपूर । तमीर=पान । ९—कुमकुम=केशर । मरदाव=मर्दन कराती है, मलवाती है । १०—मोतिअ=मोती । छाज=शोभता है । माँग=सींथ, सीमंत ।

Poets are long-lived race than heroes; they breathe more of the air of immortality, —Hazlite

[१७९]

ग्रभिनव पल्लव बइसक देल ।
ग्वल कमल फुल पुरहर भेल ॥२॥

करु मकरंद मंदाकिनि पानि ।
अरुन असोग दीप दहु आनि ॥४॥

माइ हे आज दिवस पुनमंत ।
करिअ चुमाओन राए बसंत ॥६॥

सँपुन सुधानिधि दधि भल भेल ।
भमि भमि भमर हँकारए गेल ॥८॥

केसु कुसुम सिदुर सम भास ।
केतिक धूलि बिथरहु पटबास ॥१०॥

भनइ विद्यापति कविकंठहार ।
रस बुझ सिबसिंह सिव अवतार ॥१२॥

१—अभिनव=नवीन । बइसक=बैठने के लिए आसन । २—धवल= स्वच्छ । पुरहर=ब्याह का मांगलिक कलसा जो चूने से पुता रहता है । ३—मकरंद=पुष्परस । मंदाकिनि-पानि=गंगा का पानी । ४—अरुण=लाल । असोग=अशोक । दीप=दीपक । दहु आनि=ला दिया । ५—पुनमंत=पुण्यमय, शुभ । ६—वसंत रूपी दुलहे का चुमाओन करो, चुमाओ । ७—सँपुन=सम्पूर्ण, पूर्ण । सुधानिधि=चन्द्र । दधि भेल=दही बना । ८—भमि=भ्रमण कर । भमर =भौंरा । हँकारए गेल=निमंत्रण देने चला । ९—केसु=पलास । कुसुम=फूलि । भास=मालूम होता है । १०—धूल=पराग । बिथरहु=बिखेर दिया है ।

[१८०]

दखिन पवन बह दस दिस रोल ।
से जनि बादी भाषा बोल ॥२॥

मनमथ काँ साधन नहि आन ।
निरसाओल से मानिनि मान ॥४॥

माइ हे सीत - वसंत बिबाद ।
कओन बिचारब जय - अबसाद ॥६॥

दुइ दिस मधथ दिवाकर भेल ।
दुजबर कोकिल साखी देल ॥८॥

नव पल्लव जयपत्रक भाँति ।
मधुकर - माला आखर - पाँति ॥१०॥

बादी तह प्रतिबादी भीत ।
सिसिर - बिन्दु हो अन्तर हीत ॥१२॥

कुन्द - कुसुम अनुपम बिकसंत ।
सतत जीति बेकताओ बसंत ॥१४॥

विद्यापति कवि एहो रस भान । 3rd.
राजा सिवसिंह एहो रस जान ॥१६॥

१—रोल=शोर करता हुआ। ४—निरसाओल=निःशेष कर दिया। ५—जय अबसाद=जीत और हार। ६—मधथ=मध्यस्थ। ८—दुजवर=(१) द्विज-श्रेष्ठ, (२) पक्षी-श्रेष्ठ। ९, १०—नये पल्लव जयपत्र (जिस पर फैसला लिखा जाय) है और भौंरों के समूह अक्षरों की पंक्तियाँ हैं। ११, १२—मुद्दई (वसंत) से मुद्दालह डर गया और ओस की बूंदें अन्तर्हित होने लगीं। १४—बेकताओ=प्रकट किया।

१८१]

अभिनव कोमल सुन्दर पात ।
सगर कानन पहिरल पट रात ॥२॥

मलय - पवन डोलए बहु भाँति ।
अपन कुसुम रसे अपनहि माति ॥४॥

देखि-देखि माधव मन हुलसंत ।
बिरिंदावन भेल बेकत बसंत ॥६॥

कोकिल बोलए साहर भार ।
मदन पाओल जग नब अधिकार ॥८॥

पाइक मधुकर कर मधु पान ।
भमि-भमि जोहए मानिनि-मान ॥१०॥

दिसि-दिसि से भमि बिपिन निहारि ।
रास बुझावए मुदित मुरारि ॥१२॥

भनइ विद्यापति ई रस गाव ।
राधा - माधव अभिनव भाव ॥१४॥

१—अभिनव=नवीन। पात=पत्ते। २—सगर=सम्पूर्ण। रात=लाल। मानो समूचे वन ने लाल वस्त्र पहन लिया हो। ३—डोलए=बह रहा है। ४—माति=मत्त होकर फूल अपने रस में आप ही पागल हैं। ५—हुलसंत=हुलसित हुआ। ६—बेकत भेल=प्रकट हुआ। ७—साहर=आम्रमंजरी। ८—मदन=कामदेव। ९—पाइक=पायक, पैकार, ग्राहक (?) दूत। मधुकर=भौंरा। १०—भमि-भमि=भ्रमण कर। जोहए=खोजता है। ११—बिपिन=वन। निहारि=देखकर। १२—प्रसन्न चित्त कृष्ण रासलीला कर रहे हैं।

[१८२]

चलु देखए जाऊ रितु बसंत ।
जहाँ कुंद - कुसुम केतिक हसंत ॥२॥

जहाँ चंदा निरमल भमर कार ।
जहाँ रयनि उजागर दिन अँधार ॥४॥

जहाँ मुगुधलि मानिनि करए मान ।
परिपंथिहि पेखए पंचबान ॥६॥

परिठवइ सरस कवि - कंठहार ।
मधुसूदन राधा बन बिहार ॥८॥

[१८३]

मधुरितु मधुकर पाँति । मधुर कुसुम - मधुमाति ॥
मधुर वृन्दाबन माँझ । मधुर मधुर रससाज ॥
मधुर जुबति जन संग । मधुर मधुर रसरंग ॥
मधुर मृदंग रसाल । मधुर मधुर करताल ॥
मधुर नटन - गति भंग । मधुर नटनि नट संग ॥
मधुर मधुर रस गान । मधुर विद्यापति भान ॥

३—निरमल=स्वच्छ । भमर=भ्रमर, भौंरा । कार=काला । ४—जहाँ रात उजली—प्रकाशमय (फूलों और चन्द्र के कारण) और दिन अन्धकारपूर्ण (भौंरों और गुल्म लताओं के कारण) । ६—परिपंथिहि=पथिकों को, विरोधियों को । पेखए=देखता है । पंचबान=कामदेव ।

मधुरितु=वसंत । मधुकर=भौंरा । मधुमाति=मधु से मत्त । माँझ=में । मधुकर नृत्य का गति भंग (भाव-भंगी) मधुर नाचनेवाली के साथ (मधुर) नट का (मधुर) संग ।

[१८४]

बाजति द्रिगि द्रिगि धौद्रिम द्रिमिया ।
नटति कलावति माति श्याम संग
कर करताल प्रबन्धक धुनिया ।।२।।

डम डम डंफ डिमिक डिम मादल
रुनुझुनु मंजिर बोल ।
किंकिनि रनरनि बलआ कनकनि
निधुबन रास तुमुल उतरोल ।।४।।

वीन रवाब मुरज स्वरमंडल
सा रि ग म प ध नि सा बहु विधि भाव।
घटिता घटिता धुनि मृदंग गरजनि
चंचल स्वरमंडल करु राव ।।६।।

स्रम भर गलित लुलित कबरीयुत
मालति माल बिथारल मोति ।
समय बसंत रास - रस वर्णन
विद्यापति मति छोभित होति ।।८।।

१—नटति=नाच रही है। माति=मत्त होकर। धुनिया=आवाज। ३—मादल=एक बाजा। ४—बलआ=कंगना। निधुबन=निधुवन में रासलीला जोश के साथ हो रही है। ५—रवाब=सारंगी ढंग का एक बाजा। ६—राव=स्वर। ७—परिश्रम के कारण शिथिल और दोलायमान केश में लगी मालती की माला मोती बिखेर रही है। ८—छोभित=क्षोभित, चंचल

[१८५]

रितुपति-राति रसिक रसराज ।
रसमय रास रभस रस माँझ ।।२।।
रसमति रमनि-रतन धनि राहि ।
रास रसिक सह रस अवगाहि ।।४।।
रंगिनि गन रस रंगहि नटई ।
रनरनि कंकन किंकिनि रटई ।।६।।
रहि - रहि राग रचए रसवंत ।
रतिरत रागिनि रमन वसंत ।।८।।
रटति रवाब महति कपिनास ।
राधारमन करु मुरलि विलास ।।१०।।
रसमय विद्यापति कवि भान ।
रूपनराएन भूपति जान ।।१२।।

[१८६]

मलय पवन बह । बसंत बिजय कह ।।
भमर करए रोर । परिमल नहि ओर ।।
रितुपति रँग देला । हृदय रभसँ भेला ।।
अनंग मंगल भेलि । कामिनि करथु केलि ।।
तरुन तरुनि संगे । रइनि खेपब रंगे।।
बिरहि बिपदि लागि । केसु उपजल आगि ।।
कवि विद्यापति भान । मानिनि जीवन जान ।।
नृप रुद्रसिंह बरु । मेदिनि कलपतरु ।।

महति=बड़ी वीणा। कपिनास=एक वाद्य यंत्र। खेपबि=बितायेगा।

विरह

[१८७]

सखि हे बालँम जितब बिदेसे ।
हम कुलकामिनि कहइते अनुचित
तोहहुँ दे हुनि उपदेसे ।।२।।

ई न बिदेसक बेलि ।
दुरजन हमर दुख न अनुमापब
तें तोहे पिया जाह एलि ।।४।।

किछु दिन करथु निबासे ।
हमे पूजल जे सेहे पए भुंजब
राखथु पर - उपहासे ।।६।।

होएताह किए बध - भागी ।
जेहि खन हुनि मने जाएब चिंतब
हमहु मरब धसि आगी ।।८।।

विद्यापति कवि भाने ।
राजा सिवसिंह रूपनराएन
लखिमा देइ रमाने ।।१०।।

१—जितब=जीतेंगे (अपशकुन समझकर 'जायेंगे' ऐसा नहीं कहती)। २—तोहहुँ=तुम भी। हुनि=उनको। ३—बेलि=बेला, समय। ४—अनुमापब=समझेंगे। तें तोहे पिया जाह एलि=इसीलिए तुम प्रीतम के निकट झट से जाओ। ५—करथु=करें। ६—जैसा मैंने किया है, वैसा फल मैं भोगूंगी, वे मुझे केवल दूसरे की निन्दा से बचा लें। ७—होएताह=होवेंगे। किए=क्यों। बध-भागी=हत्या का भागी। ८—जाएव चिंतब=जाने की सोचेंगे।

[१८८]

माधब, तोहें जनु जाह बिदेस ।
हमरो रंग रभस लए जएबह
लएबह कओन संदेस ॥२॥

बनहि गमन करु होइति दोसरि मति
बिसरि जाएब पति मोरा ।
हीरा मनि मानिक एको नहि माँगब
फेरि माँगब पहु तोरा ॥४॥

जखन गमन करु नयन नीर भरु
देखहु न भेल पहु ओरा ।
एकहि नगर बसि पहु भेल परबस
कइसे पुरत मन मोरा ॥६॥

पहु सँग कामिनि बहुत सोहागिनि
चान्द निकट जइसे तारा ।
भनइ विद्यापति सुनु बर जौबति
अपन हृदय धरु सारा ॥८॥

१—जनु जाह=मत जाओ। २—रंग-रभस=आमोद-प्रमोद। ३—मोरा बिसरि जाएब=मुझे भूल जाओगे। ५—नीर=आँसू। पहु ओरा=प्रीतम की ओर। ६—पुरत=पूरा होगा। ८—सारा=(यहाँ) धैर्य।

"सत्सूत्रं सविधानं सदलङ्कारं सुवृत्तमच्छिद्रम् ।
को धारयति न कण्ठे सत्काव्यं माल्यमर्घ्वं च ॥

[१८६]

कालि कहल पिश्रा साँझहि रे
जाएब मएँ मारुश्र देस ।
हमे श्रभागलि नहि जानल रे
जइतश्रों जोगिनि बेस ।।२।।

हृदय मोर बड़दारुन रे
पिया बिनु बिहरि न जाए ।।३।।

× × ×

एकहि सयन सखि सूतल रे
श्रछल बालँम निसि मोर ।
न जानल कखन तेजि गेल रे
बिछुरल चकबा जोर ।।५।।

सून सेज हिश्र सालए रे
पिश्रा बिनु मरब मएँ श्राजि ।
मिनति करश्रों सहलोलिनि रे
मोहि देह श्रगिहर साजि ।।७।।

विद्यापति कवि गाश्रोल रे
श्राबि मिलब पिश्रा तोर ।
लखिमा देइ बर नागर रे
राए सिबसिंह नहि भोर ।।६।।

१—मारुश्र=मथुरा । २—जइतश्रों=जाती । ३—दारुन=कठोर । बिहरि =फट जाना । ४—श्रछल=था । जोर=जोड़ा । ६—सालए=पीड़ा देती है । ७—सहलोलनि=सहेली । मोहि······मुझे श्रग्निचिता सजा दो, जिसमें जल जाऊँ ।

[१९०]

ाधुपुर मोहन गेल रे
मोरा बिहरत छाती ।
ोपी सकल बिसरलन्हि रे
जत छलि अहिबाती ॥२॥

ूतलि छलहुँ अपन घर रे
गेलहुँ सपनाई ।
करसएँ छुटल परसमनि रे
कओन लेल अपनाई ॥४॥

कत कहबों कत सुमिरबों रे
हमे मरिअ गरानि ।
आनक धन सएँ धनबंति रे
कुबजा भेलि रानि ॥६॥

१—मधुपुर=मथुरा । गेल=गया । मोरा=मेरा । बिहरत=फट जायगी । २—बिसरलन्हि=भूल गए । जत=जितनी । छली=थीं । अहिबाती=सौभाग्यवती । ३—सूतलि=सोई । छलहुँ=(मैं) थी । अपन=अपने । गेलहुँ सपनाई=स्वप्न देखने लगी । ४—कर=हाथ । छूटल=छूट गया । परसमनि=स्पर्शमणि, पारस । लेल अपनाई=अपना लिया । ५—कत=कितना । कहबों=कहूँगी । सुमिरबों=स्मरण करूँगी । मरिअ गरानि=ग्लानि से मर रही हूँ । आनक=दूसरे का । सएँ=से । भेलि=हुई ।

गोकुल चान चकोरल रे
चोरी गेल चंदा।
बिछुड़ि चलल दुहु जोड़ी रे
जिब दए गेल धंदा॥८॥

काक भाख निज भाखह रे
पहु आओत मोरा।
खीर खाँड़ भोजन देब रे
भरि कनक कटोरा॥१०॥

भनहि विद्यापति गाओल रे
धैरज धरु नारी।
गोकुल होएत सोहाओन रे
पुनि मिलत मुरारी॥१२॥

७—गोकुल का चन्द्रमा चकोर बन गया—जो यहाँ चन्द्रमा के समान था—जिसे हजार-हजार गोपियाँ चकोरी की तरह देखती थी—वही आज स्वयं चकोर बनकर दूसरी को—कुब्जा को देख रहा है। हा! मेरा चंद्र चोरी चला गया। ८—बिछुड़ि=बिछुड़कर। चललि=चली। दुहु जोड़ी=दोनों (राधा-कृष्ण) की जोड़ी। जिब दए गेल धंदा=प्राणों में सन्देह दे गया। ९—काक=काग, कौआ। भाख=बोली। भाखह=बोलो। पहु=प्रीतम। आओत=आयेगा। १०—खीर=दूध। खाँड़=मिश्री। देब=दूँगी। कनक=सोना। १२—सोहाओन=शोभायमान।

"सुभाषितरसास्वादबद्धरोमाञ्चकञ्चुका:।
विनापि कामिनीसंगं कवय: सुखमासते॥"

[१६१]

सरसिज बिनु सर सर बिनु सरसिज
की सरसिज बिनु सूरे ।
जौवन बिनु तन तन विनु जौबन
की जौबन पिअ दूरे ।।२।।

सखि हे मोर बड़ दैब विरोधी ।
मदन बेदन बड़ पिआ मोर बोलछड़
अवहु देह परबोधी ।।४।।

चौदिस भमर भम कुसुम-कुसुम रम
नीरसि माँजरि पीबे ।
मंद पवन वह पिक कुहु-कुहु कह
सुनि बिरहिनि कइसे जीबे ।।६।।

सिनेह अछल जत हमे भेल न टूटत
बड़ बोल जत सब थीर ।
अइसन के बोल दहु निज सिम तेजि कहु
उछल पयोनिधि नीर ।।८।।

भनइ विद्यापति अरेरे कमलमुखि
गुनगाहक पिया तोरा ।
राजा सिवसिंह रूपनरायन
सहजे एको नहि भोरा ।।१०।।

१—की=क्या ? सूरे=सूर्य । ४—बोलछड़=प्रतिज्ञा भंग करनेवाला । देह=दो । ५—भमर भम=भौंरे भ्रमण कर रहे हैं । ७—अछल=था । बड़ बोल जत सब थीर=बड़े लोग जो कुछ कहते हैं, पक्का होता है । ८—के=कौन । सिम=सीमा ।

[१९२]

सखि हे कतहु न देखिअ मधाई ।
काँप शरीर थीर नहि मानस
अबधि नियर भेलि आई ।।२।।

माधब मास तीथि भंड़ माधब
अबधि कइए पिआ गेला ।
कुच-जुग संभु परसि कर बोललन्हि
तें परतिति मोहि भेला ।।४।।

मृगमद चानन परिमल कुंकुम
के बोल सीतल चंदा ।
पिअ बिसलेख अनल जओं बरिसए
बिपति चिन्हिअ भल मंदा ।।६।।

भनइ विद्यापति सुन बर जौबति
चित जनु झाँखह आजे ।
पिअ बिसलेख-कलेस मेटाएत
बालँम बिलसि समाजे ।।८।।

१—मधाई=माधव, कृष्ण । २—मानस=मन । अबधि=मिलने का दिन । नियर=निकट । ३—माधब मास=बैसाख । माधब तिथि=एकादशी । गेला=गये । ४—कर=हाथ । तें=उससे । ५—के=कौन । ६—बिसलेख=विश्लेष, विच्छेद । अनल=आग । ७—झाँखह=झाँखो, पश्चात्ताप करो ।

[१९३]

लोचन धाए फेधाएल
हरि नहि आएल रे ।
सिव-सिव जिवओ न जाए
आस अरुझाएल रे ।।२।।

मन कर तहाँ उड़ि जाइअ
जहाँ हरि पाइअ रे ।
पेम-परसमनि जानि
आनि उर लाइअ रे ।।४।।

सपनहु संगम पाओल
रंग बढ़ाओल रे ।
से मोर बिहि बिघटाओल
निन्दओ हेराएल रे ।।६।।

भनइ विद्यापति गाओल
धनि धइरज धरु रे ।
अचिरें मिलत तोहि बालम
पुरत मनोरथ रे ।।८।।

१—धाए=दौड़कर । फेधाएल=फेन सहित हो गये, (?) फूल गये । २—जिवओ=प्राण भी । अरुझाएल=उलझ पड़े हैं । ३—मन कर=इच्छा होती है । उर लाइअ=छाती से लगा लूँ । ५—संगम=मिलन, भेंट । पाओल =पाया । ३—बिहि=ब्रह्मा । बिघटाओल=नष्ट किया । निन्दओ हेराएल=नींद भूल गई, जाती रही । ८—अचिरें=शीघ्र ही । पूरत=पूरा होगा ।

[१६४]

सखि मोर पिआ ।
अबहु न आएल कुलिस-हिआ ॥२॥

नखर खेअओलहुँ दिन लिखि-लिखि ।
नयन अँधाओलहुँ पिआपथ देखि ॥४॥

जब हम बाला परिहरि गेला ।
किए दोस किए गुन बुझिओ न भेला ॥६॥

अब हम तरुनि बुझब रस-भास ।
हेन जन नहि जे कहत पिआपास ॥८॥

आब एहेन करि पिआ मोरा गेला ।
पुरबक जत गुन बिसरित भेला ॥१०॥

भनइ विद्यापति सुन अब राइ ।
कानु समुझाबइते अब चलि जाइ ॥१२॥

२—आएल=आया। कुलिस-हिया=वज्र के ऐसा कठोर हृदय। ३—नखर=नख। खेअओलहुँ=घिसा दिया। प्रीतम के आने का दिन लिखते-लिखते मेरे नख घिस गये। ४—अँधाओलहुँ=अंधा बना लिया। पिआपथ=प्रीतम की राह। ५—वाला=भोली-भाली किशोरी। परिहरि गेला=छोड़कर चले गये। ६—किये=क्या। बुझिओ न भेला=कुछ न जान सकी। ७—तरुनि=युवती। रस-भास=रस की बातें। ८—हेन=ऐसा। १०—पुरबक=पूर्व का। बिसरित=विस्मृत। ११—राइ=राधा। १२—कानु=कृष्ण।

[१६५]

आसक लता लगाओलि सजनी
नयनक नीर पटाए ।
से फल अब परिनत भेल सजनी
आँचर तर न समाए ॥२॥

काँच साँच पहुँ देखि गेल सजनी
तसु मन भेल कुह(?)भान ।
दिन-दिन फल परिनत भेल सजनी
अहुखन न करु गेआन ॥४॥

सबकर पहु परदेस बसि सजनी
आएल सुमिरि सिनेह ।
हमर एहन पति निरदए सजनी
नहि मन बाढ़ए नेह ॥६॥

भनइ* विद्यापति गाओल सजनी
उचित आओत गुन साह ।
उठि बधाब करु मन भरि सजनी
अब आओत घर नाह ॥८॥

१, २—सखि, आँखों के पानी से सींचकर आशा की लता मैंने लगाई। अब उस लता का फल (कुच) जवानी में आ गया, पुष्ट हो चला, वह अंचल के नीचे नहीं समाता। ३—साँच=सचमुच। पहु=प्रीतम। तसु=उसके। कुह=कुहेसा (निराशा)। अहुखन=इस समय भी। ६—एहन=ऐसा। ७—आओत=आयेगा। गुनसाह=गुणवान्। ८—बधाव=बधैया। नाह=पति।

---

* मिथिला गीत-संग्रह में इस पद के रचयिता हैं, धैरजपति।

[१९६]

कोने गुने पहु परबस भेल सजनी
बुझल तनिक भल-मंद ।
मनमथ मन मथ तनि बिनु सजनी
देह दहए निसि चंद ।।२।।

कहओ पिसुन सत अवगुन सजनी
तनि सम मोहि नहि आन ।
कतन जतन कए मेटिअ सजनी
मेटए न रेख पखान ।।४।।

जओं दुरजन कटु भाखए सजनी
मोर मन न होए बिराम ।
अनुभव राहु पराभव सजनी
हरिन न तेज हिमधाम ।।६।।

जइओ तरनि जल सोखए सजनी
कमल न तेजए पाँक ।
जे जन रतल जाहि सओं सजनी
कि करत विहि भय बाँक ।।८।।

विद्यापति कवि गाओल सजनी
रस बूझए रसमंत ।
राजा सिवसिंह मन दए सजनी
मोदवती देइ कंत ।।१०।।

१—तनिक=उनका । २—मनमथ मन मथ=कामदेव मन को मंथन कर रहा । तनि=उनके ३—दुष्ट लोग भले ही उनके सैकड़ों अवगुण मुझसे कहें, किन्तु मेरे लिए उनके समान दूसरा कोई नहीं है । ४—पखान=पत्थर । ५—विराम=ठहरना । राहु पराभव=राहु द्वारा पीड़ित होने पर,

[१९७]

माधब हमर रटल दुर देस ।
केओ न कहए सखि कुसल-सनेस ।।२।।

जुग-जुग जिबथु बसथु लाख कोस ।
हमर अभाग हुनक नहि दोस ।।४।।

हमरे करमे भेल बिहि बिपरीत ।
तेजल माधब पुरुब पिरीत ।।६।।

हृदयक बेदन बान समान ।
आनक दुःख आन नहि जान ।।८।।

भनइ विद्यापति कवि जयराम ।
दैब लिखल परिनत फल बाम ।।१०।।

ग्रस लिये जाने पर । हिमधाम=चन्द्रमा । ७—तरनि=सूर्य । ८—**रतल=अनुरक्त** । कि करत=ब्रह्मा बिमुख होकर क्या करेगा ?

१—रटल=चला गया । २—केओ=कोई । सनेस=संदेश । ३—**जिबथु**=जियें । बसथु=बसें । ४—हुनक=उनका । ५—बिहि=ब्रह्मा । ६—**तेजल**=छोड़ दिया । ७—बेदन=वेदना, दुःख । ८—आनक=दूसरे का ।१०—**बाम**=विपरीत ।

"कृतमन्दपदन्यासा विकचश्रीश्चारुशब्दभगवती ।
कस्य न कम्पयते कं जरेव जीर्णस्य सत्कवेर्वाणी ।।"

[१६८]

जौबन रतन अछल दिन चारि।
ताबे से आदर कएल मुरारि ।।२।।

आबे भेल झाल कुसुम रस छूछ।
बारि बिहून सर केओ नहि पूछ।।४।।

हमरि ए बिनति कहब सखि रोए।
सुपुरुष नेह अन्त नहि होए ।।६।।

जाबे से धन रह अपना हाथ।
ताबे से आदर कर संग-साथ ।।८।।

धनिकक आदर सबतहु होए।
निरधन बापुर पुछ नहि कोए ।।१०।।

भनइ विद्यापति राखब सील।
जओं जग जिबिअ नबओ निधि मील।।१२।।

१—अछल=था। २—ताबे से=तबतक। कएल=किया। ३—झाल=कटु, गंधहीन। रस छूछ=रस से हीन। ४—बारि-बिहून=पानी से रहित। सर=तालाब। केओ=कोई। ५—रोए=रो कर। ८—जाबे=जबतक। ताबे=तबतक। संग-साथ=संगी-साथी, मित्र-कुटुम्ब। ९—धनिक=धनियों का। सबतहु=सर्वत्र। १०—बापुर=बेचारा। ११—सील=मर्यादा। १२—यदि जग में जीवित रहो तो नवो निधियाँ प्राप्त हो सकती हैं।

—:०:—

Poetry is at bottom a criticism of life. The greatness of a poet lies in his powerful and beatiful application of ideas to life.

—*Mathew Arnold*

[१९९]

सखि हे हमर दुखक नहि ओर ।
ई भर बादर माह भादर ।
सून मंदिर मोर ॥२॥

झंपि घन गरजंति संतत
भुवन भरि बरसंतिया ।
कन्त पाहुन काम दारुन
सघन खर सर हंतिया ॥४॥

कुलिस कत सत पात मदित
मयूर नाचत मातिया ।
मत्त दादुर डाक डाहुक
फाटि जाएत छातिया ॥६॥

तिमिर दिग भरि घोरि यामिनि
अथिर बिजुरिक पाँतिया ।
विद्यापति कह कइसे गमाओब
हरि बिना दिन-रातिया ॥८॥

२—(इस पद्य का चरण अत्यन्त प्रसिद्ध है। स्वयं रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कई बार इसे उद्धृत किया है)। भर=भरा हुआ। बादर=मेघ। ३—संतत =सदा। ४—पाहुन=प्रवासी। खर सर=तेज वाण। हंतिया=मारता है। ५—कत सत=कई सौ। पात=गिरता है। माति=मत्त होकर। ६—डाक= पुकारता है। डाहुक=एक बरसाती पक्षी। ७—दिग=दिशा। अथिर=चंचल। ८—कइसे=किस प्रकार। गमाओब=बिताऊँगी।

[२००]

मोर बन-बन सोर सुनइत
बढ़ए मनमथ पीर।
प्रथम छार असाढ़ आओल
अबहु गगन गँभीर ॥२॥

दिबस रयनी कइसे रे सखी
मन मोहन बिनु जाए ॥३॥

आबए साओन बरिख भाओन
घन सोहाओन बारि।
पंचसर-सर छुटए कइसे
जिअए बिरहिनि नारि ॥५॥

आबए भादो बेगर माधो
काहि कहु एहो दूख।
निडर डर-डर डाक डाहुक
छुटए मदन बनूक ॥७॥

आबए आसिन गगन-भासिन(?)
घनन घनघन रोल।
सिंह भूपति भनइ ऐसन
चतुर मास कि बोल ॥८॥

४—भाओन=जो मन को भावे। ५—पंचसर=कामदेव। ६—बेगर=बिना। काँसों=किससे। ७—डर-डर डाक डाहुक=डाहुक (पक्षी विशेष) डर-डर शब्द से पुकार रहा है—मानों कामदेव की बंदूक छूट रही हो।

* यह पद विद्यापति का नहीं प्रतीत होता।

[२०१]

फुटल कुसुम नव कुंज कुटिर बन
कोकिल पंचम गाबे रे ।
मलयानिल हिमसिखर सिधारल
पिया निज देश ने आबे रे ॥२॥

चान चानन तन अधिक उतापए
उपबन अलि उतरोले रे ।
समय बसंत कंत रहु दुर देस
जानल बिधि प्रतिकूले रे ॥४॥

अनिमिख नयन नाह मुख निरखइते
तिरपित न भेल नयाने रे ।
ई सुख समय सहए एत संकट
अबला कठिन पराने रे ॥६॥

दिन-दिन खिन तनु हिम कमलिनि जनु
न जानि कि जिब परजंत रे ।
विद्यापति कह धिकधिक जीवन
माधव निकरुन कंत रे ॥८॥

१—फुटल=प्रस्फुटित हुआ, खिल उठा। २—मलयानिल हिमसिखर सिधारल=मलय-पवन हिमालय की ओर चला—दक्षिण-पवन बहने लगा। ३—चान=चन्द्रमा। चानन=चन्दन। उतापए=उत्तप्त कर देता है, जलाता है। ४—अलि उतरोले रे=भौंरे गुंजार कर रहे हैं। ५—अनिमिख=अपलक। ७—हिम=बर्फ। परजंत=पर्यन्त। ८—निकरुन=करुणा रहित, कठोर।

[२०२]

सजनी कान्ह कें कहब बुझाई ।
रोपि पेम बिज अंकुर मूड़ल ।
बाँचब कओने उपाई ॥२॥

तेल - बिन्दु जैसे पानि पसारिअ
ऐसन मोर अनुराग ।
सिकता जल जैसे छनहि सुखाए सखि
तैसन मोर सोहाग ॥४॥

कुल - कामिनि छलौं कुलटा भए गेलौं
तनिकर बचन लोभाई ।
अपनेहि करें हमे मूड़ मुड़ाओल
कान्ह सओं पेम बढ़ाई ॥६॥

चोर - रमनि जनि मने - मने रोइअ
अम्बर बदन झपाई ।
दीपक लोभ सलभ जनि धाएल
से फल भुजइत चाई ॥८॥

भनइ विद्यापति ई कलिजुग रिति
चिन्ता करह न कोई ।
अपन करम - दोष आपहि भुंजइ
जे जन पर - बस होई ॥१०॥

१—कान्हकें=कृष्ण को । २—मूड़ल=तोड़ दिया । पसारिअ=फैलता है । ४—सिकता=बालू । तैसन=वैसा । सोहाग=सौभाग्य । ५—छलौं=थी । कुलटा=व्यभिचारिणी । तनिकर=उनके । ६—मूँड़ मुड़ाओल (मैथिली मुहावरा)=बदनाम हुई । ७—चोर-रमनि=चोर की स्त्री । अम्बर=वस्त्र ।

[२०३]

के पतिआ लए जाएत रे
मोरा पिअतम पास ।
हिए नहि सहए असह दुख रे
भेल साओन मास ।।२।।

एकसरि भवन पिआ बिनु रे
मोहि रहलो न जाए ।
सखि अनकर दुख दारुन रे
जग के पतिआए ।।४।।

मोर मन हरि हरि लए गेल रे
अपनो मन गेल ।
गोकुल तेजि मधुपुर बस रे
कत अपजस लेल ।।६।।

विद्यापति कवि गाओल रे
धनि धरु मन आस ।
आओत तोर मन भावन रे
एहि कातिक मास ।।८।।

('चोरनारि जिमि प्रगट न रोई'—तुलसी) ८—सलभ=पतंग। जनि=ऐसा। भुजइत चाई=भोगना ही चाहिये। १०—भुंजइ=भोगता है।

१—के=कौन। २—भेल=हुआ, आया। ३—एकसरि=अकेली। ४—अनकर=दूसरे का। पतिआए=विश्वास करता है। ५—हरि लए गेल=हरकर ले गये। अपनो=स्वयं भी। ८—आओत=आवेगा।

[२०४]

सजनी, के कह् आग्रोब मधाई।
बिरह - पयोधि पार किग्र पाग्रोब
मोर मन नहि पतिग्राई ॥२॥

एखन - तखन करि दिवस गमाग्रोल
दिवस - दिवस करि मासा।
मास - मास करि बरस गमाग्रोल
छाड़लि जीवन - ग्रासा ॥४॥

बरस - बरस करि समय गमाग्रोल
तेजल कान्हक ग्रासे।
हिमकर - किरिन नलिनि जदि जारब
कि कहब माधब मासे ॥६॥

ग्रंकुर तपन - ताप जदि जारब
कि करब बारिद मेहे।
इह नव जौबन बिरह गमाग्रोब
कि करब से पिग्रा गेहे ॥८॥

भनइ विद्यापति सुनु बर जौबति
ग्राब नहि होग्रह निरासे।
से ब्रजनन्दन हृदय-ग्रानन्दन
तोरित मिलब तुग्र पासे ॥१०॥

१—ग्राग्रोब=ग्रावेंगे। २—पयोधि=समुद्र। ३—एखन-तखन=ग्रब-तब। ५—कान्हक=कृष्ण की। ६—हिमकर=चन्द्रमा। नलिनि=कमलिनी। जारब=जलायेगा। कि=क्या। माधब मास=वैशाख (वसंत)। ७—तपन-ताप=सूर्य की ज्वाला। ९—होग्रह=होग्रो। १०—तोरित=शीघ्र।

[२०५]

अंकुर तपन ताप यदि जारब
कि कहब बारिद मेह।
ई नव जौबन बिरह गमाओब
कि करव से पिअ गेह ।।२।।

हरि हरि के कह दैब - दुरासा।
सिन्धु निकट जदि कंठ सुखाएब
के दुर करब पिआसा ।।४।।

चंदन-तरु जब सौरभ छोड़ब
ससधर बरिखव आगि।
चिन्तामनि जब निज गुन छोड़ब
की मोर करम अभागि ।।६।।

साओन माह घन-बिन्दु न बरिखब
सुरतरु बाँझ कि छाँदे।
गिरिधर सेबि ठाम नहि पाएब
विद्यापति रहु धाँदे ।।८।।

३—के=कौन। ४—दुर करब=दूर करेगा। ५—सौरभ=सुगंध। ससधर=चन्द्रमा। वरिखव=वर्षा करेगा। ६—चितामणि=वह मणि, जिससे जो कुछ माँगे, दे दे। ७—घन-विन्दु=मेघ की बूँद। सुरतरु=कल्पवृक्ष। बाँझ=बन्ध्या। कि छाँदे=किस प्रकार। ८—सेबि=सेवा कर। ठाम=जगह। धाँदे=चिन्ता।

[२०६]

चानन भेल विषम सर रे
भूषन भेल भारी ।
सपनहुँ नहि हरि आएल रे
गोकुल गिरधारी ॥२॥

एकसरि ठाढ़ि कदम-तर रे
पथ हेरथि मुरारी ।
हरि बिनु देह दगध भेल रे
झामर भेल सारी ॥४॥

जाह जाह तोहें ऊधव हे
तोहें मधुपुर जाहे ।
चन्द्रवदनि नहि जीउति रे
वध लागत काहे ॥६॥

भनइ विद्यापति मन दए रे
सुनु गुनमति नारी ।
आज आओत हरि गोकुल रे
पथ चलु झटझारी ॥८॥

१—चानन=चन्दन । विषम=कठोर । सर=बाण । भारी=भार-स्वरूप । ३—एकसरि=अकेले । पथ हेरथि=राह देख रही है । ४—दगध=दग्ध, जला हुआ । झामर=मलिन । ५—जाहे=जाओ । मधुपुर=मथुरा । ६—जीउति= जीयेगी । बध=हत्या । काहे=क्यों । ८—झट-झारी=झटक कर, शीघ्र-शीघ्र ।

[२०७]

विपत अपत तरु पाओल रे
पुन नव नव पात।
बिरहिनि-नयन बिहल बिहि रे
अबिरल वरिसात ॥२॥

सखि अंतर बिरहानल रे
नित बाढ़ल जाए।
बिनु हरि लाख उपचारहु रे
हिअ दुख न मेटाए ॥४॥

पिआ पिआ रटए पपिहरा रे
हिअ दुख उपजाव।
कुदिना हित जन अनहित रे
थिक जगत सोभाव ॥६॥

कवि विद्यापति गाओल रे
दुख मेटत तोर।
हरखित चित तोहि भेटत रे
पिअ नन्दकिसोर ॥८॥

१—विपत्ति-रूपी पत्रहीन वृक्ष ने पुनः (वर्षा आने पर) नये-नये पत्ते प्राप्त किये। २—बिहल=विधान किया, बनाया। बिहि=ब्रह्मा। अबिरल=लगातार, निरन्तर। ३—अंतर=भीतर, हृदय में। बिरहानल=बिरह-रूपी अग्नि। ४—उपचार=उपाय। ६—कुदिना=कुदिन आने पर। अनहित=शत्रु। सोभाव=स्वभाव। थिक=है। ७—मेटत=मिटेगा।

[२०८]

मोर पिअतम सखि गेल दुर देस ।
जौवन दए गेल साल सनेस ।।१।।

मास अषाढ़ उनत नव मेघ ।
पिआ बिसलेख रहुओं निरथेघ ।।
कोन पुरुष सखि कोन से देस ।
धरब तहाँ मएँ जोगिनि भेस ।।२।।

माओन मास बरिस घन बारि ।
पंथ न सूझए निसि अँधियारि ।।
चौदिसि देखिअ बीजुरि रेह ।
हे सखि कामिनि जिवन संदेह ।।३।।

भादब मास बरिस घन घोर ।
सभ दिसि कुहुकए दादुर मोर ।
चिहुँकि चिहुँकि पिआ कोर समाए ।
गुनमति सूतलि अंक लगाए ।।४।।

आसिन मास आस घर चीत ।
निकरुन नाह भेल नहि हीत ।।
सर-वर खेलए चकबा हास ।
बिरहिनि वैरि भेल आसिन मास ।।५।।

१—साल=काँटा। सनेस=भेंट। २—उनत=उन्नत, चढ़ता हुआ। बिसलेख=विश्लेष, वियोग। रहुओं=रहती हूँ। निरथेघ=निरवलम्ब। से=वह। ४—दादुर=मेढ़क। कोर=गोद। सूतलि=सोई। अंक=हृदय। ५—निकरुन=निष्करुण। ६—दिगन्तर=दर देश। बास=रहना। सुखराति=

कातिक कंत दिगन्तर बास ।
पिअ-पथ हेरि-हेरि भेलहुँ निरास ।।
सुख सुखराति सबहुँ काँ भेल ।
मोहि दुखसाल सोआमि दए गेल ।।६।।

अगहन मास जीव मोर अंत ।
आबहु न आएल निरदय कंत ।
एकसरि हमे धनि सूतओं जागि ।।
आओत नाह देत मोहि आगि ।।७।।

पूस खीन दिन दीघरि राति ।
पिआ परदेस मलिन भेल काँति ।।
हेरओं चौदिस झाँखओं रोए ।
नाह बिछह काहु जनु होए ।।८।।

माघ-मास घन पड़ए तुसार ।
झिलमिल केचुआँ उनत थन हार ।।
पुनमति सूतलि पिअतम कोर ।
विधि बस दैव बाम भेल मोर ।।९।।

दीपावली की रात। सोआमि=स्वामी। ७—सूतओं जागि=जागकर सोती हूँ। जब मैं विरहज्वाला में मर जाऊँगी, तब प्रीतम मुझे आग देने के लिए आयेंगे। ८—दीघरि=दीर्घ, बड़ी। झाँखओं=झँखती हूँ। ९—तुसार—बर्फ। झिलमिल=बारीक चोली में उभड़े हुए कुच है जिनके ऊपर हार है। बाम भेल=**विमुख हुआ।**

फागुन मास धनि जीव उचाट ।
विरह बिखिनि भेलि हेरग्रों बाट ।।
मधु मातल पिक पंचम गाब ।
से सुनि कामिनि जीबहु सँताब ।।१०।।

चैत चतुरपन पिग्र परबास ।
मालि जानए नहि कुसुम बिकास ।।
भमि-भमि भमरा करु मधुपान ।
नागर भए पहु भेल ग्रगेग्रान ।।११।।

बैसाख तव खर मरन समान ।
कामिनि कंत हनए पँचबान ।।
नहि जुड़ि छाहरि न वरिस बारि ।
हम जे ग्रभागिनि पापिनि नारि ।।१२।।

जेठ मास ऊजर नव रंग ।
कंत चाहए खेलु कामिनि-संग ।।
रूपनरायण पूरथु ग्रास ।
भनइ विद्यापति बारह मास ।।१३।।

१०—धनि जीव उचाट=बाला का जी उचट गया। बिखिनि=विखिन्न। पिक=कोयल। से=यह। सँताब=सताता है। ११—परबास=प्रवास, बिदेश में। कुसुम बिकास=फूल का खिलना। भमि=भ्रमण कर। भमरा=भौंरा। नागर=चतुर। पहु=प्रीतम। १२—तव=तब जाता है, गर्म हो उठता है। खर=तीक्ष्ण। जुड़ि=ठंढी। छाहरि=छाया। बरिस=बरसता है। बारि=पानी। १३—ऊजर नवरंग=नये रंग उजड़ गये। पूरथु=पूरा करें।

[२०६]

माधव **देखलि** वियोगिनि वामे
अधर न **हास** बिलास सखी संग ।
अह**निस** **जप** तुअ नामें ॥२॥

आनन **सरद** सुधाकर सम तसु
बोलए **मधुर** धुनि बानी ।
कोमल **अरुन** कमल कुम्हिलाएल
देखि **मएँ** अइलिहुँ जानी ॥४॥

हृदयक हार भार भेल सुवदनि
नयन **न** होय निरोधे ।
सखि सब **आए** खेलाओल रँग करि
तसु **मन** किछुओ न बोधे ॥६॥

रगड़ल **चानन** मृगमद कुंकुम
सभ **तेजल** तुअ लागी ।
धनि **जलहीन** मीन जकँ फिरइछ
अहनिस रहइछ जागी ॥८॥

दूतिक **सुनि** उपदेस सुमिरि गुन
तहिखन चललाह धाई ।
मोदवतीपति राघबसिंह गति
कवि **विद्यापति** गाई ॥१०॥

३—तसु=उसका। ४—**कुम्हिलाएल**=मुरझा गया। **अइलिहुँ**=मैं आई। ६—निरोधे=बन्द। ७—**रगड़ल**=घिसा। चानन=चन्दन। **मृगमद**=कस्तुरी। कुंकुम=केशर। ८—**जकँ=समान**। फिरइछ=करती है। ९—तहिखन=उसी क्षण।

[२१०]

लोचन नीर तटिनि निरमाने ।
करए कलामुखि तथिहि सनाने ॥२॥

सरस मृनाल करइ जपमाली ।
अहोनिस जप हरिनाम तोहारी ॥४॥

वृन्दाबन कान्हु धनि तप करई ।
हृदय-बेदि मदनानल बरई ॥६॥

जिब करि समिध समर कर आगी ।
करति होम बध होएबह भागी ॥८॥

चिकुर सँभारि बरहि करि लेअई ।
फल उपहार पयोधर देअई ॥१०॥

भनइ विद्यापति सुनह मुरारी ।
तुअ पथ हेरइत अछि बर नारी ॥१२॥

१, २—आँखों के आँसुओं से नदी का निर्माण कर वह चन्द्रवदनी उसी में स्नान करती है। ३—मृनाल=कमल-नाल। ४—करइ=बनाती है। जपमाली=जपमाला, सुमरिणी। ६—हृदय-स्वरूप वेदी पर काम की अग्नि धधक रही है। ७, ८—अपने प्राणों को समिध (अग्निहोत्र की लकड़ी) बनाकर और स्मर कामदेव को अग्नि बना करके वह होम कर रही है, तुम इसकी हत्या के भागी बनोगे। ९—चिकुर=केश। बरहि=बर्ही, कुश। सँभारि=सँभालकर। १०—पयोधर=कुच। १२—अछि=है।

[२११]

अकामिक मन्दिर भेलि बहार ।
चहुँदिस सुनलक भमर-झंकार ।।२।।

मुरुछि खसलि महि न रहलि थीर ।
न चेतए चिकुर न चेतए चीर ।।४।।

केओ सखि बेनि धुन केओ धुरि झार ।
केओ चानन अरगजहि सँभार ।।६।।

केओ बोल मंत्र कान कर जोलि ।
केओ कोकिल खेद डाकनि बोलि ।।८।।

अरे अरे अरे कान्हु की रभसि बोरि ।
मदन-भुजँग डसु बालहि तोरि ।।१०।।

भनइ विद्यापति एहो रस भान ।
एहि विष गारुड़ि एक पए कान ।।१२।।

१—अकामिक=अकस्मात् । भेलि बहार=बाहर हुई । २—भमर=भौंरा । ३—खसलि=गिर पड़ी । थीर=स्थिर । ४—चेतए=सँभालती है । चिकुर =केश । चीर=साड़ी । ५—केओ=कोई । बेनि धुन=पंखा झलती है । धुरि झार=धूल झाड़ती है । ६—अरगजहि=कस्तूरी आदि के लेप से । सँभार =सँभालती है । ७—कान कर जोलि=कान में हाथ जोड़कर । ८—खेद= खदेड़ती है । ९—कि रभसि बोरि=क्या रभस कर बोल रहे हो ? १०— तुम्हारी प्रेमिका को (बालहि) कामदेव-रूपी सर्प ने काट लिया है । ११—एक कृष्ण ही इस विष के लिए गारुड़ि (विष उतारनेवाला) है ।

[२१२]

माधब, कठिन हृदय परबासी।
तुअ पेअसि मएँ देखलि बियोगिनि
अबहुँ पलटि घर जासी ॥२॥

हिमकर हेरि अवनत कर आनन
कर करुना पथ हेरी।
नयन कागज लए लिखए बिधुन्तुद
भयें रह ताहेरि मेरी ॥४॥

दखिन पवन बह से कइसे जुबति सह
कर कवलित तसु अंगे।
गेल परान आस दए राखए
घस नख लिखि भुजंगे ॥६॥

मीनकेतन भएँ सिव सिव सिव कए
धरनि लोटाबए देहा।
कर-सरसिज लए कुच सिरिफल दए
सिव पूजए निज गेहा ॥८॥

दुतर पयोधि फेने नहि सन्तरु।
विद्यापति कवि भाने।
राजा सिवसिह रूपनराएन
लखिमा देइ रमाने ॥१०॥

१—परवासी=प्रवासी, विदेश मे रहनेवाला। २—पेअसि=प्रेयसि, प्रेमिका। जासी=जाओ। ३—हिमकर=चन्द्रमा। अवनत=नीचे। विधुन्तुद =राहु। ताहेरि मेरी=उसकी शरण में। ६—विरहरूपी समुद्र फेन के सहारे मत तैरो। ५—कवलित=ग्रस्त, खा जाना। ६—गेल=गया हुआ।

[२१३]

कुसुमित कानन हेरि कमलमुखि
मुँदि रहु दुअओ नयान ।
कोकिल कलरव मधुकर धुनि सुनि
कर लए झाँपए कान ।।२।।

माधब सुन सुन बचन हमारा ।
तुअ गुने सुन्दरि अति भेलि दूबरि
गुनि-गुनि पेम तोहारा ।।४।।

धरनी धरि धनि कत बेरि बइसए
पुन तहिं उठए न पारा ।
कातर दिठि करि चौदिस हेरि हेरि
नयन ढारए जलधारा ।।६।।

तोहर बिरह दिन छन छन तनु छिन
चौदसि चाँद समान ।
भनइ विद्यापति सिवसिंह नरपति
लखिमा देइ रमान ।।८।।

भुजंगे=सर्प (सर्प वायु को खा जायगा, यह समझ कर)। ७—मीनकेतन=कामदेव। ८—कर सरसिज लए=हाथ रूपी कमल लेकर। सिरिफल=बेल

१—कुसुमित कानन=खिला हुआ बन। २—मधुकर=भौरा। ५—पृथ्वी पकड़कर वह बाला कई बार बैठ जाती है और पुनः (चेष्टा करने पर) उठ नहीं सकती। ७—दिन=गरीब, असहाय। चौदसि=चतर्दशी।

[२१४]

सरदक ससधर मुखरुचि सोंपलक
हरिनकें लोचन-लीला ।
केसपास लए चमरिकें सोंपलक
पाए मनोभव पीला ॥२॥

माधव, जानल न जिअति राही ।
जतबा जकर लेले छलि सुन्दरि
से सब सोंपलक ताही ॥४॥

दसन - दसा दाड़िमकें सोंपलक
बन्धुर अधर - रुचि देली ।
देह - दसा सौदामिनि सोंपलक
काजर सनि धनि भेली ॥६॥

भौंहक - भंग अनंग - चाप देल
कोकिलकें देल बानी ।
केवल देह नेह अछि लओल
एतबा अएलहुँ जानी ॥८॥

भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
चित झाँखह जनु आवे ।
राजा सिवसिंह रूपनराएन
लखिमा देइ रमाने ॥१०॥

१—ससधर=चन्द्रमा। मुखरुचि=मुख की शोभा। सोंपलक=समर्पण किया। २—चमरि=वह गाय जिसकी दुम का चँवर होता है। मनोभव=कामदेव। पीला=पीड़ा। ४—जतवा=जितना। जकर=जिसका। लेले=

[२१५]

आएल उनमद समय बसंत ।
दारुन मदन निदारुन कंत ॥टेक॥

ऋतुराज आज बिराज हे सखि
नागरी जन बंदिते ।

नव-रंग नव दल देखु उपवन
सहज सोभित कुसुमिते ।
आरे कुसुमित कानन कोकिल साद ।
मुनिहुक मानस उपजु विखाद ॥१॥

अति मत्त मधुकर मधुर रव कर
मालती मधु-संचिते ॥
समय कंत उदंत नहि किछु
हमहि विधि-बस-बंचिते ॥
बंचित नागर मेह्न संसार ।
एहि रितुपति जे न कर विहार ॥२॥

लिये हुई थी । ५—दाड़िम=अनार । बन्धुर=बन्धुली फूल । ६—सौदामिनि =बिजली । समि=समान । ७—अनंग-चाप देल=कामदेव के धनुष को दिया । ८—अछि=है । एतबा=इतना । ९—आँखह=आँखो ।

१—उनमद=उन्मत्त, पागल । दारुन=कठिन । निदारुन=करुणाहीन । नागरी जन बंदिते=नागरी स्त्रियों द्वारा पूजित । नव=नवीन । दल=पत्ता । कुसुमित=खिले हुए । कानन=वन । साद=ध्वनि । २—मधुकर=भौंरा ।

अति हार भार मनोज मारए
चान्द रबि सन भान ए ।
पुरुष पाप संताप जत हो
मन मनोभव जान ए ।।

जारए मनसिज मार सर साधि ।
चानन देह चौगुन ही धाधि ।।३।।

सब धाधि आधि बेआधि जाइति
धरिअ धैरज कामिनी ।
सुपहु मन्दिर तुरित आओत
सुफल जाइति जामिनी ।।

जामिनि सुफल जाइति अवसान ।
धैरज धरु विद्यापति भान ।।४।

रव=आवाज। उदंत=वार्त्ता। सेहे=वहीं। ३—मनोज=कामदेव। चान्द रबि सन भान ए=चन्द्रमा सूर्य के समान मालूम होता है। जत=जितना। मनसिज=कामदेव। मार=मारता है। चानन=चन्दन। धाधि=ज्वाला। ४—आधि बेआधि=शोक और पीड़ा। जाइति=जायगी। सुपहु=सुप्रभु, प्यारे प्रीतम। आओत=आवेगा। जामिनी=रात। अवसान=अन्त। भान =कहते है।

[२१६]

माधव, कत परबोधब राधा ।
हा हरि हा हरि कहितहि बेरि बेरि
अब जिव करब समाधा ।।२।।

धरनी धरि धनि जतनहि बइसए
पुनहि उठए नहि पारा ।
सहजहि बिरहिनि जग महा तापिनि
बैरि मदन-सर-धारा ।।४।।

अरुन नयन नोरें तितल कलेबर
बिलुलित दीरघ केसा ।
मन्दिर बाहिर करइत संसय
सहचरि गन तहि सेसा ।।६।।

आनि नलिनि केओ रमनि सुताओलि
केओ देअ मुख पर नीरे ।
निसबद पेखि केओ साँस निहारए
केओ देअ मन्द समीरे ।।८।।

कि कहब खेद भेद जनि अन्तर
घन घन उतपत साँस ।
भनइ विद्यापति सेहो कलावति
जीव बाँधल आस-पास ।।१०।।

२—समाधा=समाप्त। ३—बइसए=बैठती है। ५—नोरें=आँसू। तितल=भींगा हुआ। ६—सेसा=अन्त, मृत्यु। ७—सुताओलि=सुलाई। ८—उतपत=उत्तप्त, गर्म। १०—आस-पास=आशा के बन्धन में।

[२१७]

अनुखन माधब माधब सुमरइते
सुन्दरि भेलि मधाई ।
ओ निज भाव सुभावहि बिसरल
अपनेहि गुन लुबुधाई ॥२॥

माधब, अपरुब तोहर सिनेह ।
अपनेहि बिरहें अपन तनु जरजर
जिबइते भेल सन्देह ॥४॥

भोरहि सहचरि कातर दिठि हेरु
छल-छल लोचन पानि ।
अनुखन राधा राधा रटइत
आधा आधा बानि ॥६॥

राधा संग जब पुन तहि माधब
माधब संग जब राधा ।
दारुन प्रेम तबहि नहि टूटत
बाढ़त बिरहक बाधा ॥८॥

दुहुदिस दारुन-दहन जैसे दगधइ
आकुल कीट परान ।
ऐसन बल्लभ हेरि सुधामुखि
कवि विद्यापति भान ॥१०॥

इस पद्य में प्रेम की पराकाष्ठा हो गई है। राधा विरहवश, प्रेम में तल्लीन हो, अपने ही को कृष्ण समझ लेती है और 'राधा-राधा' चिल्लाने लगती है। पुनः जब होश में आती है, तब कृष्ण के लिए व्याकुल हो उठती है। यों दोनो अवस्थाओं में मर्म-व्यथा सहती है।

कृष्ण का विरह

[२१८]

रामा हे, से किश्र बिसरल जाई ।
कर धरि माथुर अनुमति मँगइत
ततहि परल मुरुछाई ॥२॥

किछु गदगद सरे लहु-लहु आखरे
कान्ह कहल वर रामा ।
कठिन कलेबर तहि चलि आश्रोल
चित्त रहल ओहि ठामा ॥४॥

तनि बिनु राति दिबस नहि भावए
ताहि रहल मन लागी ।
आन रमनि सँग राज सम्पद हमे
आछिअ जइसे विरागी ॥६॥

दुइ एक दिवस निचय हम जाओब
तोहें परबोधह राई ।
विद्यापति कह चित्त रहल नहि
पेम मिलाएब जाई ॥८॥

१—रामा=सुन्दरी (सखि) । से=वह । किश्र=क्यों । बिसरल=भूलना । ३—सरे=स्वर में । लहु-लहु आखरे=मधुर शब्दों में । ४—तहि=उसीसे । ५—तनि=वह (राधा) । ६—आन=अन्य । आछिअ=हूँ । —निचय=निश्चय । तोहें=तुम ।

[२१६]

तिला एक सयन ओत जिब न सहए
न रहए दुहु तनु भीन ।
माँझे पुलक गिरि-अन्तर मानए
अइसन रह निसि-दीन ॥२॥

सजनी कोन परि जीबए कान
राहि रहलि दुर हमे मथुरापुर
एतवाहु सहए परान ॥४॥

अइसन नगर अइसनि नव नागरि
अइसन सम्पद मोर ।
राधा बिनु सब बाधा मानिअ
नयन न तेजिअ नोर ॥६॥

से जमुना जल से रमनीगन
सुनइते चमकित चीत ।
कह कबिसेखर अनुभवि जनलहुँ
बड़ जन बड़िहि पिरीत ॥८॥

१—तिला एक=एक क्षण के लिए भी। ओत=ओट। भीन=भिन्न। माँझे=मध्य में। २—मिलने के समय रोमांच हो जाने से मिलने में किंचित् नाम-मात्र का व्याघात हो जाता था, अतएव, रोमांच हमलोगों को पहाड़ के समान मालूम पड़ता था, इस प्रकार हम दिन-रात मिले हुए थे। ३—कोन परि=किस प्रकार। ५—अइसन=ऐसा। ६—नोर=आँसू। ८—अनुभवि=अनुभव करके। जनलहुँ=जान गया।

भावोल्लास

[२२०]

सरस बसंत समय भल पाओल
दछिन पवन बहु धीरे ।
सपनहुँ रूप बचन एक भाखिए
मुख सओं दुरि करु चीरे ।।२।।

तोहर बदन सन चान होअथि नहि
जइओ जतन बिहि देला ।
कए बेरि काटि बनाओल नव कए
तइओ तुलित नहि भेला ।।४।।

लोचन-तूल कमल नहि भए सक
से जग के नहि जाने ।
से फेरि जाए नुकाएल जल भए
पंकज निज अपमाने ।।६।।

भनइ विद्यापति सुनु बर जौबति
ई सभ लछमी समाने ।
राजा सिबसिंह रूपनराएन
लखिमा देइ रमाने ।।८।।

१—पाओल=पाया । २—स्वप्न में एक आदमी ने आकर कहा—अरी, मुख से अंचल हटाओ (?) । ३—बदन=मुख । चान=चन्द्रमा । जइओ=यद्यपि । बिहि=विधाता । ४—कए=कितने । तइओ=तो भी । तुलित=तुल्य, समान । ५—तूल=तुल्य । भए सक=हो सकता । नुकाएल=छिप गया । जलभए=जल में । पंकज=कमल । ई सभ=यह सब ।

[२२१]

सुतलि छलहुँ हमे घरबा रे
गरबा मोतिहार ।
राति जखन भिनुसरबा रे
पिआ आएल हमार।।२।।

कर कौसल कर कपइत रे
हरबा उर टार ।
कर - पंकज उर थपइत रे
मुख - चन्द्र निहार ।।४।।

केहनि अभागलि बैरिनि रे
भाँगलि मोर निन्द ।
भल कए नहि देखि पाओल रे
गुनमय गोबिन्द ।।६।।

विद्यापति कबि गाओल रे
धनि मन धरु धीर ।
समय पाए तरुबर फर रे
कतबो सिचु नीर ।।८।।

१—सुतलि छलहुँ=सोई थी । गरबा=गले में । २—जखन=जिस समय । भिनुसरबा=भोर, उषःकाल । आएल=आया । ३—चतुराई करते हुए काँपते हाथ से हृदय का हार हटाया । ४—कर-पंकज=कमल रूपी हाथ । थपइत=स्थापित करते, धरते । छाती पर हाथ देकर मुँह देखने लगे । ५—केहनि=कैसी । अभागलि=अभागिनी । ६—भल कए=अच्छी तरह । ८—फर=फरता है । कतबो सिचु नीर=कितना भी पानी पटाओ ।

[२२२]

मोरा रे आँगना चानन केरि गछिआ
ताहि चढ़ि कुररए काग रे।
सोने चोंच बाँधि देब तोहि बायस
जओं पिआ आओत आज रे ॥२॥

गाबह सखि सब झूमरि लोरी
मयन-अराधए जाउँ रे।
चहुदिस चम्पा मउली फूललि
चान इजोरिआ राति रे।
कइसे कए हमे मयन अराधब
होइति बड़ि रति-साति रे ॥५॥

विद्यापति कवि गाबए तोहर
पहु अछ गुनक निधान रे।
राअ भोगीसर सब गुन आगर
पदमा देइ रमान रे ॥७॥

१—आँगना=आँगन में। चानन केरि=चन्दन का। गछिआ=वृक्ष। कुररए=बोल रहा है। २—सोने=स्वर्ण से। तोहि=तुझे। बायस=काग। ३—गाबह=गाओ। मयन अराधए=कामदेव की आराधना करने। ४—मउली =मल्लिका। चान=चन्द्रमा। इजोरिआ=चाँदनी। कइसे कए=किस प्रकार। होइति=होगी। रति-साति=रति-जनित पीड़ा। ६—पहु=प्रीतम। अछ=है। ७—रमान=पति।

[२२३]

आँगने आओब जब रसिआ ।
पलटि चलब हमे ईषत हँसिआ ।।२।।

रसबति-नागरि रमानी ।
कत कत जुगति मनहि अनुमानी ।।४।।

आबेसे आँचर पिआ धरबे ।
जाएब हमे न जतन पहु करबे ।।६।।

केंचुआ धरब जब हठिआ ।
करे कर बारब कुटिल आध दिठिआ ।।८।।

रभस माँगब पिआ जबही ।
मुख मोड़ि बिहुँसि बोलब नहि तवही ।।१०।।

सहजहि सुपुरुख भमरा ।
चिर धरि पिअब अधर-रस हमरा ।।१२।।

तखन हरब मोर गेआने ।
विद्यापति कह धनि तुअ धेआने ।।१४।।

१—आँगने=आँगन में । आओब=आयेंगे । २—ईषत=थोड़ा-थोड़ा । ४—कत=कितनी । जुगति=युक्ति । ५—आबेसे=आवेश में; उत्तेजित होकर वे यत्न करेंगे, किन्तु मैं न जाऊँगी । ७—केंचुआ=कंचुकी, चोली । हठिआ=हठकर । ८—(अपने) हाथ से (उनके) हाथ को रोकूँगी और तिरछी एवं आधी चितवन से देखूँगी । ९—रभस=रति-क्रीड़ा । १०—बिहुँसि=हँसकर । ११—भमरा=भौंरा । पिअब=पियेगा । १३—तखन=उस समय । (काम-क्रीड़ा के समय) ज्ञान हर लेंगे ।

[२२४]

आओब जखन पिआ मोर गेहे ।
मंगल जतन करब निज देहे ।।२।।

कनअ कुम्भ करि कुच जुग राखि ।
दरपन धरब काजर दए आँखि ।।४।।

बेदि बनाओब अंकम अपने ।
झाड़ि करब ताहि चिकुर बिछाने ।।६।।

कदलि रोपब हम गरुअ नितम्ब ।
आम पल्लब ताहे किंकिनि सुझम्प ।।८।।

दिसि-दिसि आनब कामिनि ठाट ।
चौदिस पसारब चाँदक हाट ।।१०।।

विद्यापति भन पूरब आस ।
दुइ एक पलके मिलब तुअ पास ।।१२।।

१—आओब=आवेंगें । गेहे=घर में। जितना मंगल करना होगा, अपने शरीर में करूँगी। ३—कनअ-कुम्भ=सोने के घड़े। कुच जुग=दोनो कुच । ४—आँखों में काजर लगाकर उसे दर्पण-रूप में धरूँगी=मेरी आँखों में प्रीतम अपना रूप देखेंगे। ५—बेदी=चौका। अंकम=गोदी । ६—उसे झाड़कर बालों का बिछावन करूँगी। ७—कदलि=केला । गरुअ=विशाल । सुझम्प= आन्दोलित, शब्दित । ६—आनब=लाऊँगी । ठाट=समूह । हाट= बाजार (स्त्रियों के मुख-चन्द्रमा ही चन्द्रमा-से दीख पड़ेंगे।)

[२२५]

दुहुक दुलह दुहु दरसन भेल ।
बिरह जनित दुख सबे दुर गेल ॥२॥
कर धरि बइसाओल विचित्र आसन ।
रमन - रतन - स्याम रमनी रतन ॥४॥
बहु बिधि बिलसए बहु विधि रंग ।
कमल मधुप जनि पाओल संग ॥६॥
नयन नयन दुहु बयन बयान ।
दुहु गुन दुहु गुन दुहुजन गान ॥८॥
भनइ विद्यापति नागरि भोरि ।
त्रिभुवनविजयी नागर चोरि ॥१०॥

[२२६]

चिर दिन से बिहि भेल अनुकूल रे ।
दुहु मुख हेरइत दुहु आकुल रे ॥२॥
बाहु पसारिए दुहु दुहु धर रे ।
दुहु अधरामृत दुहु मुख भरु रे ॥४॥
दुहु तनु काँपए मदन उछल रे ।
किन किन किन करि किंकिनि रुचल रे ॥६॥
जइतहिँ स्मित नव बदन मिलहु रे ।
दुहु पुलकावलि ते लहु - लहु रे ॥८॥
रस - मातल दुहु बसन खसल रे ।
विद्यापति रस - सिन्धु उछलल रे ॥१०॥

१—दुलह=दुर्लभ । ३—बइसाओल=बिठलाया । ९—भोरि=बेसुध ।

[२२७]

सुनु रसिआ,
आब न बजाउ बिपिन बँसिआ ॥२॥

बेरि बेरि चरनारबिंद गहि
सदा रहब बनि दसिआ ।
कि छलहुँ कि होएब से नहि जानह
बृथा होएत कुल हँसिआ ॥४॥

अनुभव ऐसन मदन-भुजंगम
हृदय मोर गेल डँसिआ ।
नंद - नन्दन तुअ सरन न त्यागब
बरु जग होए दुरजसिआ ॥६॥

विद्यापति कह सुनु बनितामनि
तोर मुख जीतल ससिआ ।
धन्य धन्य तोर भाग गोआरिनि
हरि भजु हृदय हुलसिआ ॥८॥

७—स्मित=हँसते हुए । ८—पुलकावलि=रोमांच । ६–मातल=मत्त बना । खसल=गिर पड़ा ।

१—रसिआ=रसिक । २—बँसिआ=वंशी । ३—दसिआ=दासी । ४—कि=क्या । छलहुँ=थी । होएब=होऊँगी, बनूँगी । से=यह बात । के=कौन । कुल हँसिआ=कुल की निन्दा । ४—ऐसन=ऐसा । मदन-भुजंगम=काम रूपी सर्प । गेल डसिआ=डँस गया, काट गया । ६—बरु=भले ही, वरंच । दुरजसिआ=अपयश, कलंक । ७—बनितामनि=स्त्रियों में रत्न समान । जीतल=जीत लिया । ससिआ=चन्द्रमा ।

[२२८]

सखि हे, कि पुछसि अनुभव मोए ।
सेह पिरिति अनुराग बखानिअ
तिल तिल नूतन होए ॥२॥

जनम अबधि हम रूप निहारल
नयन न तिरपित भेल ।
सेहो मधुर बोल स्रवनहि सूनल
स्रुति पथ परस न गेल ॥४॥

कत मधु-जामिनि रभस गमाओलि
न बूझल कइसन केलि ।
लाख लाख जुग हिअ हिअ राखल
तइओ हिअ जरनि न गेल ॥६॥

कत बिदगध जन रस अनुमोदए
अनुभव काहु न पेख ।
विद्यापति कह प्रान जुड़ाइते
लाखे न मीलल एक ॥८॥

१—कि पुछसि=क्या पूछती हो? मोए=मुझसे । २—सेह=वही । तिल तिल=क्षण-क्षण । निहारल=देखा । स्रवनहि=कानों से । परस=स्पर्श । ५–मधु-जामिनि=वसंत की रात । रभस=कामक्रीड़ा । गमाओलि=बिता दी । तइओ=तो भी । जरनि न गेल=जलन न गई । ७–विदगध=विदग्ध, रसिक । रस अनुमोदए=रस का उपभोग करते हैं । पेख=दखना । ८—लाख में एक न मिला ।

प्रार्थना श्रौर नचारी

[२२९]

बिदिता देबी बिदिता हो (मोह)
अबिरल - केस सोहन्ती ।
एक अनेक सहस को धारिनि
जरि रंगा पुरनन्ती ? ॥२॥

कज्जल रूप तुअ काली कहिअए
उज्जल रूप तुअ बानी ।
रविमंडल परचंडा कहिअए
गंगा कहिअए पानी ॥४

ब्रह्मा-घर ब्रह्मानी कहिअए
हर-घर कहिअए गोरी ।
नारायन-घर कमला कहिअए
के जान उतपति तोरी ॥६॥

विद्यापति कविवर एहो गाओल
जाचक जन के गति ।
हासिनि देइ पति गरुड़नाराएन
देवसिंह नरपति ॥८॥

[२३०]

कनक - भूधर - शिखर - बासिनि
चन्द्रिका - चय - चारु - हासिनि-
दशन - कोटि - विकास - बंकिम-
तुलित - चन्द्रकले ॥१॥

क्रुद्ध-सुररिपु - बलनिपातिनि
महिष - शुम्भ - निशुम्भघातिनि
भीत-भक्त - भयापनोदन-
पाटव - प्रबले ॥२॥

जय देवि दुर्गे दुरिततारिणि
दुर्गमारि - विमर्द - कारिणि
भक्ति - नम्र - सुरासुराधिप-
मंगलप्रवरे ॥३॥

गगन - मंडल - गर्भगाहिनि
समर - भूमिषु सिंहवाहिनि
परशु - पाश - कृपाण - सायक
शंख - चक्र - धरे ॥४॥

अष्ट - भैरवि - संग - शालिनि
स्वकर - कृत्त - कपाल - मालिनि
दनुज - शोणित - पिशित - वर्द्धित—
पारणा - रभसे ॥५॥

संसारबन्ध - निदानमोचिनि
चन्द्र - भानु - कृशानु - लोचनि
योगिनी - गण - गीत - शोभित—
नृत्यभूमि - रसे ॥६॥

जगति पालन - जन्म - मारण-
रूप - कार्य - सहस्र - कारण-
हरि - विरंचि - महेश - शेखर-
चुम्ब्यमान - पदे ॥७॥

सकल - पापकला - परिच्युति-
सुकवि - विद्यापति - कृतस्तुति
तोषिते शिवसिंह - भूपति-
कामना - फलदे ॥८॥

[२३१]

जय जय संकर जय त्रिपुरारि ।
जय अध पुरुष जयति अध नारि ॥२॥

आध धवल तनु आधा गोरा ।
आध सहज कुच आध कटोरा ॥४॥

आध हड़माल आध गजमोति ।
आध चानन मोह आध विभूति ॥६॥

आध चेतन मति आधा भोरा ।
आध पटोर आध मुँजडोरा ॥८॥

आध जोग आध भाग बिलासा ।
आध पिधान आध दिग-वासा ॥१०॥

आध चान आध सिंदुर सोभा ।
आध बिरूप आध जग लोभा ॥१२॥

भने कविरतन विधाता जाने ।
दुई कए बाँटल एक पराने ॥१४॥

[२३२]

भल हर भल हरि भल तुअ कला ।
खन पित बसन खनहि बघछला ॥२॥

खन पंचानन खन भुजचारि ।
खन संकर खन देव मुगारि ॥४॥

भूत पिसाच अनेक दल साजल
सिर सञों बहि गेल गंग ।
भनइ विद्यापति सुनु ए मनाइनि
थिकाह दिगम्बर अंग ॥८॥

[२३४]

वेरि वेरि अरे सिब हमे तोहि कइलहुं
किरिषि करिअ मन लाए ।
रहिअ निमंक भीख मंगइते सब
गुन गौरव दुर जाए ॥२॥

निरधन जन बोलि सब उपहासए
नहि आदर अनुकम्पा ।
तोहें सिव आक धतुर फुल पाओल
हरि पाओल फुल चम्पा ॥४॥

खटंग[१] काटि हर हर जे बनाबिअ
त्रिसूल तोड़ि करु फार ।
बसहा धुरन्धर हर लए जोतिअ
पाटिअ सुरसरि धार ॥६॥

भन विद्यापति सुनहु महेसर
इ लागि कएलि तुअ सेवा ।
एतए जे होएत से बरु होअओ
ओतए बिसरि जनि देवा ॥८॥

१—खटंग=खट्वांग, सोंटा ।

[२३५]

हम नहि आजु रहब एहि आँगन
जँ बुढ़ होएत जमाए, गे माइ ।

एक तँ बइरि भेल बीध, बिधाता
दोसर धिआ केर बाप ।
तेसरे बइरि भेल नारद बाभन
जे बुढ़ आनल जमाए, गे माइ ।।

पहिलुक बाजन डामरु तोड़ब
दोसरे तोड़ब रुडमाल ।
बड़द हाँकि बरिआत बैलाएब
धिआलए जाएब पड़ाए, गे माइ ।।

धोती लोटा पतरा पोथी
सेहो सभ लेबन्हि छिनाए ।
जँ किछु बजता नारद बाभन
दाढ़ी धए लेब घिसिआए, गे माइ ।।

भनइ विद्यापति सुनु हे मनाइनि
दिढ़ करु अपन गेआन ।
सुभ सुभ कए सिरी गौरी बिआहू
गौरी हर एक समान, गे माइ ।।

[२३६]

नाहि करब वर हर निरमोहिग्रा ।

बित्ता भरि तन बसन न तन्हिका
बाघ छाल काँख तर रहिग्रा ॥२॥

बन बन फिरथि मसान जगाबथि
घर ग्राँगन ग्रो बनौलनि कहिग्रा ।
सासु ससुर नहि ननदि जेठौनी
जाए बैसति धिग्रा ककरा ठहिग्रा ॥४॥

बूढ़ बड़द ढकढोल गोल एक
सम्पति भाँगक झोरिग्रा ।
भनइ विद्यापति सुनु हे मनाइनि
सिव सन जग के कहिग्रा ॥६॥

[२३७]

कतए गेलाह मोर बुढ़वा जती ।
घीसल भाँग रहल सेह गती ॥२॥

ग्रान दिन निकहि रहथि मोर पती ।
ग्राज लगाए देल कग्रोने उदगती ॥४॥

एकसरि जोहए जाएब कोन गती ।
ठेसि खसब होएत दुरगती ॥६॥

नन्दनबन बिच मिलला महेस ।
गौरी हरखित भेली छुटल कलेस ॥८॥

भनइ विद्यापति सुनु हे सती ।
एहो जोगिआ थिका त्रिभुवन पती ॥१०॥

[२३८]

जोगिआ एक हमे देखल गे माई ।
अनहद रूप कहलो नहि जाई ॥२॥

पच बदन तिन नयन बिसाला ।
वसन बिहून ओढ़न वघछाला ॥४॥

सिर वह गंग तिलक सोह चन्दा ।
देखि सरूप मेटल दुखदंदा ॥६॥

एही जोगिआ लए रहलि भवानी ।
मन आनल वर कोन गुन जानी ॥८॥

कुल नहि सिल नहि तात महतारी ।
वएस हिनक थिक लछ जुग चारी ॥१०॥

भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि ।
एहो जोगिया थिका त्रिभुवन दानि ॥१२॥

[२३६]

सिव हो, उतरब पार कओन बिधि ।

लोढ़ब कुसुम तोरब बेलपात ।
पुजब सदासिव गौरिक साथ ।।

वसहा चढ़ल सिब फिरए मसान ।
भँगिआ जरठ दरदो नहि जान ।।

जप तप नहि कएलहुँ किछु दान ।
विति गेल तिन पन करइत आन ।।

भन विद्यापति सुनह महेस ।
निरधन जानि मोर हरह कलेस ।।

[२४०]

जखन देखल हर हो गुननिधी ।
पुरल मनोरथ मोर सब विधि ।।२।।

वसहा चढ़ल हर हो बूढ़ जती ।
काने कुंडल सोभ गले गजमोती ।।४।।

वइसल महादेव चौका चढ़ी ।
जटा छिरिआओल माओलि भरी ।।६।।

विधिकरु बिधिकरु विधिकरी करू ।
विधि न करए हर हो हठ धरू ।।८।।

त्रिधिए करइत हर हो घुमि खसु ।
ससरि खसल फनि सिरि गौरी हँसु ।।१०।।

केओ नहि किछु सखि हिनका कहु ।
पुरुब लिखल छला ई मोर पहु ।।१२।।

कवि विद्यापति गाओल ना ।
गौरी उचित बर पाओल ना ।।४।।

[२४१]

हर जनि बिसरब मोर ममता
हम नर अधम परम पतिता ।

तुअ सन अधमउधार न दोसर
हम सन जग नहि पतिता ।।२।।

जम के द्वार जवाब कओन देब
जखन पुछत कर धरिआ ।

जब जम किंकर कोपि पठाओत
तखन के होत धरहरिया ।।४।।

भन विद्यापति सुकवि पुनित मति
संकर बिपरीत बानी ।

असरन सरन चरन सिर नाओल
दया करह सलपानी ।।६।।

[२४२]

एत जप-तप हम की लागि कएलहुँ
कथिला कएल नित दान ।
हमरि धिया के एहो वर होएताह
आब नहि रहत परान ॥२॥

हर कें माए बाप नहि थिकइन
नहि छइन सोदर भाए ।
मोर धिआ जओं सासुर जइती
बइसती ककर लग जाए ॥४॥

घास काटि लौती बसहो चरौती
कुटती भाँग धथूर ।
एको पल गौरी बैसहु न पौती
रहती ठाढ़ि हजूर ॥६॥

भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि
दिढ़ करु अपन गेआन ।
तीन लोक के एहो छथि ठाकुर
गौरा देवी जान ॥८॥

[२४३]

कखन हरब दुख मोर
हे भोलानाथ ।
दुखहि जनम भेल दुखहि गमाओल
सुख सपनहु नहि भेल, हे भोलानाथ ।

एहि भव-सागर थाह कतहु नहि
भैरव धरु करुआर; हे भोलानाथ ।
भन विद्यापति मोर भोलानाथ गति
देहु अभय वर मोहि, हे भोलानाथ ।

[२४४]

एहि बिधि चलला बिआहए
मोर बाउर जोगी ।
टपर टपर कए बसहा आएल खटर खटर रुँडमाल ।।
भकर भकर सिव भाँग भकोसथि डमरू लेल कर लाए ।।
ऐपन मेटल पुरहर फोड़ल फेकल चौमुख दीप ।।
धिया लय मनाइनि मंडप पइसलि गाबहु जनु सखि गीत ।।
भन बिद्यापति सुनु ए मनाइनि ई थिका त्रिभुवन ईस ।।

[२४५]

आजु नाथ एक ब्रत महा सुख लागत हे ।
तोहें सिव धरु नट बेष कि डमरु बजाबह हे ।।
तोहें गौरी कहैछह नाचए हमे कोना नाचब हे ।।
चारि सोच मोहि होए कोन बिधि बाँचब हे ।।
अमिअ चुबिअ भुमि खसत बघम्बर जागत हे ।।
होएत बघम्बर बाघ बसहा धरि खाएत हे ।।
सिरसँ ससरत साँप पुहुमि लोटाएत हे ।।
कातिक पोसल मजूर सेहो धरि खाएत हे ।।

जटासँ छिलकत गंग भूमि भरि पाटत हे ।।
होएत सहस मुखि धार समेटलो न जाएत हे ।।
मुंडमाल टुटि खसत, मसानी जागत हे ।।
तोहें गौरी जएबह पड़ाए नाच के देखत हे ।।
भनहि विद्यापति गाश्रोल गावि सुनाश्रोल हे ।।
राखल गौरी केर मान चारु बचाश्रोल हे ।।

[२४६]

श्रागे माइ, जोगिश्रा मोर जगत सुखदायक
दुख ककरहु नहि देल ।
दुख ककरहु नहि देल महादेव
दुख ककरहु नहि देल ।
एहि जोगिश्रा के भाँग भुलश्रोलक
धथुर खोश्राए धन लेल ।।
श्रागे माइ, कार्तिक, गनपति दुइ जन बालक
जग भरि के नहि जान ।
तनिका श्रभरन किछुश्रो न थिकइन
रति एक सोन नहि कान ।।
श्रागे माइ, सोना रूपा श्रनका सुत श्रभरन
श्रापन रुद्रक माल ।
श्रपना सुत लए किछुश्रो न जुरइनि
श्रनका लए जंजाल ।।

आगे माइ, छनमे हेरथि कोटि धन बकसथि
ताहि देवा नहि थोर।

भनहि विद्यापति सुनु हे मनाइनि
थिकाह दिगम्बर भोर।।

[२४७]

जोगिआ भँगवा खाइत भेला रँगिआ
भोला बौड़हवा।

सबके ओढ़ाबे भोला साल दोसलबा
आप ओढ़ए मृगछलबा।।

सबके खिलावे भोला पाँच पकवनमा
आप खाए भाँग धथुरवा।

कोइ चढ़ावे भोला अच्छत चानन
कोइ चढ़ावे बेलपात।।

जोगिनि भूतिनि सिव के संपतिआ
भरो बजाबे मिरदंगिआ।

भन विद्यापति जय जय संकर
पारवती गौरी सँगिआ।।

[२४८]

जओं हम जनितहुँ भोला भेला ठकना
होइतहुँ राम गुलाम, गे माइ।

भाइ बिभीखन बड़ तप कएलन्हि
जपलन्हि रामक नाम, गे माइ।।

पूरुब पच्छिम एको नहि गेला
अचल भला ठामे ठाम, गे माइ ।

बीस भुजा दस माथ चढ़ाओल
भाँग देल भरि गाल, गे माइ ।

नीच-ऊँच सिव किछु नहि गुनलन्हि
हरपि देलन्हि रुंडमाल, गे माइ ।

एक लाख पूत सवा लाख नाती
कोटि सोवनरक दान, गे माइ ।

गुन अवगुन सिव एको नहि बुझलन्हि
रखलन्हि रावनक नाम, गे माइ ।

भन विद्यापति सुकवि पुनित मति
कर जोरि विनमओं महेस, गे माइ ।

गुन अवगुन हर मन नहि आनथि
सेवकक हरथि कलेस, गे माइ ।

जानकी वन्दना

[२४६]

रे नरनाह सतत भजु ताही ।
जाहि नहि जननि जनक नहि जाही ।।२।।

बसु नइहरा ससुरा के नाम ।
जननिक सिर चढ़ि गेलि ओही गाम ।।४।।

—सासुक कोर मे सुतल जमाए ।
समधि विलह तें विलहल जाए ॥६॥

जाहि उदर सँ वाहर भेलि ।
से पुनि पलटि ततहि चलि गेलि ॥८॥

भन विद्यापति सुकवि सुजान ।
कविक मरम कें कवि पहिचान ॥१०॥

गंगा-स्तुति

[२५०]

बड़ सुख सार पाओल तुअ तीरे ।
छाड़इते निकट नयन वह नीरे ॥२॥

कर जोरि बिनमओं विमल तरंगे ।
पुन दरसन होअ पुनमति गंगे ॥४॥

एक अपराध छेमब मोर जानी ।
परसल माए पाए तुअ पानी ॥६॥

कि करब जप-तप जोग धेआने ।
जनम कृतारथ एकहि सनाने ॥८॥

भनहि विद्यापति समदओं तोहि ।
अन्त काल जनु बिसरह मोहि ॥१०॥

[२५१]

ब्रह्मकमडलु वास सुवासिनि
सागर नागर गृहबाले ।
पालक महिप विदारण कारण
धृत करवाल बीचि-माले ।।

जय गंगे जय गंगे
शरणागत भय भंगे ।।

सुर मुनि मनुज रचित पूजा-चित
कुसुम विचित्रित तीरे ।
त्रिनयन मौलि जटाचय चुम्बित
भूति भूषित सित नीरे ।।

हरिपद कमल गलित मधुसोदर
पुण्य पुनित सुरलोके ।
प्रविलसदमरपुरी - पद दान
बिधान विनाशित शोके ।।

सहज दयालुतया पातकि जन
नरकविनाशन निपुणे ।
रुद्रसिंह नरपति वरदायक
विद्यापति कवि भणित गुणे ।।

श्रीकृष्ण-कीर्त्तन

[२५२]

माधव, कत तोर करब बड़ाई ।

उपमा तोहर कहब ककरा हम
कहितहुँ अधिक लजाई ।।

जओं सिरिखंड सौरभ अति दुरलभ
तओं पुनि काठ कठोरे ।

जओं जगदीस निसाकर तओं पुनि
एकहि पच्छ उजोरे ।

मनिक समान आन नहि दोसर
तनिकर पथर नामे ।।

कनक कदलि छोटि लज्जित भय रह
की कहु ठामहि ठामे ।।

तोहर सरिस एक तोहीं माधव
मन होइछ अनुमाने ।

सज्जन जन सओं नेह उचित थिक
कवि विद्यापति भाने ।।

[२५३]

माधव, बहुत मिनति कर तोहि ।

दए तुलसी तिल देह समरपल
दया जनि छाड़ब मोहि ।।

गनइत दोस गुन-लेस न पाओब
जब तोहें करब बिचार ।
तोहें जगत जगनाथ कहाओसि
जग बाहर नहि छार ।।

किअ मानुस पसु पखि भए जनमिअ
अथवा कीट पतंग ।
करम बिपाक गतागत पुनु पुनु
मति रह तुअ परसंग ।।

भनइ विद्यापति अतिसय कातर
तरइते ई भव-सिन्धु ।
तुअ पद-पल्लव केर अवलम्बन
तिला एक देह दिनबंधु ।।

[२५४]

तातल सैकत, बारि-बिन्दु-सम
सुत-मित-रमनि-समाज ।
तोहि बिसारि मन ताहि समरपल
आब होएब कोन काज ।।

माधव, हम परिनाम निरासा ।
तोहें जगतारन दीन दयामय
अतए तोहर बिसबासा ॥

आध जनम हम नींद गमाओल
जरा सिसु कत दिन गेला ।
नधुबन रमनि-रभस रँग मातल
तोहि भजब कोन बेला ॥

कत चतुरान मरि मरि जाएत
न तुअ आदि अवसाना ।
तोहि जनमि पुनु तोहि समाएत
सागर लहरि स माना ॥

भनइ विद्यापति सेष समन भय
तुअ बिनु गति नहि आरा ।
तोहें अनाथक नाथ कहाओसि
तारन भार तोहारा ॥

[२५५]

जतने जतेक धन पापें बटोरल
मिलि-मिलि परिजन खाए ।

मरनक बेरि हरि केओ नहि पुछए
एक करम सँग जाए ।।

ए हरि, बन्दओं तुअ पद नाए ।

तुअ पद परिहरि पाप-पयोनिधि
पारक कओन उपाए ।।

जनम अबधि नहि तुअ पद सेबल
जुबती रति-रंग मेलि ।
अमिअ तेजि, हालाहल पीउल
सम्पद आपदहि भेलि ।।

भनइ विद्यापति लेह मनहि गुनि
कहलें कि होएत काज ।
साँझक बेरि सेवकाई मँगइते ।
हेरइते तुअ पद लाज ।।

विविध

व्यथा

[२५६]

माधव, कि कहब तोहर गेग्रान ।
सुपहु कहल जब रोष कएल तब
करें मूँनल दुहु कान ॥२॥

आएल गमनक बेरि न नीन टरु
तें किछु पुछिओ न भेला ।
एहनि करमहिनि हम सनि के धनि
करसँ परसमनि गेला ॥४॥

जओं हम जनितहुँ एहन निठुर पहु
कुच - कंचन - गिरि - साँधि ।
कौसल करतल बाहु-लता लए
दिढ़ करि रखितहुँ बाँधि ॥६॥

ई सुमिरिअ जब जाओं मरिए तब
बुझि पड़ हृदय पषाने ।
हिमगिरि - कुमरि चरन हृदय धरि
कवि विद्यापति भाने ॥८॥

प्रेम

[२५७]

फुल एक बाड़ी लाओल मुरारि ।
जतने पटाओल सुबचन-बारि ॥२॥

चौदिस बान्हल सीलक आरि ।
जिबे अबलम्बन कए अवधारि ॥४॥

ततहु फुलल फुल अभिनव पेम ।
जसु मूल लहए न लाखहु हेम ॥६॥

अति अपुरुव फल परिनत भेल ।
दुइ जिव अछल एक भए गेल ॥८॥

पिसुन-कीट नहि लागल ताहि ।
साहसें फल देल बिहि निरबाहि ॥१०॥

विद्यापति कह सुन्दर सेह ।
करिअ जतन फलमत होए जेह ॥१२॥

शिवसिंह का युद्ध

[२५८]

दूर दुग्गम दमसि भंजेओ
गाढ़ गढ़ गूढ़िअ गंजेओ
पातिसाह समीप सीमा
समर दरसेओ रे ॥१॥

ढोल तरल निसान सद्दहि
भेरि काहल संख नद्दहि
तीनि भुवन निकेत
केतकि सान भरिओ रे ॥२॥

कोहे नीर पयान चलिओ
वायु मध्ये राअ गरुओ
तरनि तेअ तुलाधरा
परताप गहिओ रे ॥३॥

मेरु कनक सुमेरु कम्पिअ
धरनि पूरिअ गगन झम्पिअ
हाथि तुरअ पदाति पअभर
कमन सहिओ रे ॥४॥

तरल तर तरवारि रंगे
बिज्जुदाम छटा तरंगे
घोर घन संघात बारिस-
काल दरसेओ रे ॥५॥

तुरत कोटिअ चाप चूरिअ
चारि दिसि चौ विदिस पूरिअ
विषम सार असार धारा
धरनि भरिओ रे ॥६॥

अन्ध कूअ कबन्ध लाइअ
फेरवी फफ्फरिस गाइअ
रुहिर मत्त परेत भूत
बेताल चलिओ रे ॥७॥

पार भइ परिपंथि गंजिअ
भूमि मंडल मुंडे मंडिअ
चारु चन्द्र कलेव कित्ति
सुकेत तुलिओ रे ।।८।।

राम रूप सुधम्म सिक्खिअ
दान दप्प दधीचि रक्खिअ
सुकवि नव जयदेव
भनिओ रे ।।९।।

देवसिंह नरेन्द नन्दन
शत्रु नरवइ कुल निकन्दन
सिंह सम सिवसिंह राआ
सकल गुनक निधान गनिओ रे ।।१०।।

दृष्टकूट

[२५९]

हरि सम आनन हरि सम लोचन
हरि तहाँ हरि बर आगी ।
हरिहि चाहि हरि हरि न सोहाबए
हरि हरि कए उठ जागी ।।

माधब हरि रहु जलधर छाई ।
हरि नयनी धनि हरि घरिनी जनि
हरि हेरइत दिन जाई ।।

हरि भेल भार हार भेल हरि सम
हरिक बचब न सोहाबे ।
हरिहि पइसि जे हरि जे नुकाएल
हरि चढ़ि मोर बुझाबे ।

हरिहि बचन पुनु हरि सएँ दरसन
सुकवि विद्यापति भाने ।
राजा सिवसिंह रूपनरायन
लखिमा देवि रमाने ॥

[२६०]

माधब, आब बुझल तुअ साजे ।
पाँच दुगुन दस गुन सए गुन पुनि
से देलह कोन काजे ॥

चालिस चारि काटि चौठाइ
से हम से पिआ मोरा ।
से निरखैत मुख पेखैत चौदिस
करत जनम के ओरा ॥

साठिहु मह वह बिन्दु बिबरजित
के से सहत उपहासे ।
हम अबला अब पहुक दोसरँ
दुइ बिन्दु करब गरासे ॥

नव बुंदा दए नवए बाम कए
से डर हमर पराने ।
कपटी बालमु हेरि न हेरए
कारन के नहि जाने ।।

भनइ विद्यापति सुनु बर जौबति
ताहि करथि के बाधा
अपन जीव दए परक बुझाइअ
नालकमल दुइ आधा ।

[२६१]

कुसुमित कानन कुंजे बसी ।
नयनक काजर घोरि मसी ।।

नखसँ लिखल नलिनि दल पात ।
लीखि पठाओल आखर सात ।।

पहिलहि लिखलनि पहिल बसंत ।
दोसरें लिखलनि तेसरक अंत ।।

लिखि नहि सकली अनुज बसंत ।
पहिलहि पद अछि जीवक अंत ।।

भनइ विद्यापति आखर लेख ।
बुध-जन हो से कहए बिसेख ।।

[२६२]

द्विज आहर आहर सुत नंदन
सुत आहर सुत कामा ।
बनज बंधु सुत दए सुन्दरि
चललि संकेतक ठामा ।।

माधब, बूझल कथा बिसेखी ।
तुअ न लुबुधलि प्रेम पिआसलि
माधब आइलि उपेखी ।।

हरि अरि अरि पति तातक वाहन
जुवति नामे से होई ।
गोपति पति अरि बाहन दस मिलि
बिरमति कबहुँ न सोई ।।

सायक जोगे नाम तसु नायक
हरि अरि अरि पति जाने ।
नौमि दशा हे एक मिलु कामिनि
सुकवि विद्यापति भाने ।।

बालबिबाह

[२६३]

पिआ मोर बालक हम तरुनी ।
कोन तप चूकि भेलहुँ जननी ।।

पहिरि लेल सखि दछिनक चीर ।
पिश्रा के देखैंत मोर दगध सरीर ।।

पिश्रा लेल गोद कए चललि बाजार ।
हटिश्राक लोक पूछ के लागु तोहार ।।

नहि मोर देश्रोर कि नहि छोट भाइ ।
पुरब लिखल छल बालमु हमार ।।

बाटरे बटोहिश्रा कि तुहु मोरा भाइ ।
हमरो समाद नैहर लेने जाइ ।।

कहिहुन बाबा के किनए धेनु गाइ ।
दुधबा पिश्राइकें पोसता जमाइ ।।

नहि मोरा टाका श्रछि नहि धेनु गाइ।
कोन बिधि पोसब बालक जमाइ ।।

भनइ विद्यापति सुनु ब्रजनारि ।।
धैरज धए रहु मिलत मुरारि ।

परकीया (स्वयंदूतिका)

[६४]

श्रपर पयोधि मगन भेल सूर ।
नखि-कुल-संकुल बाट बिदूर ।।

नरि परिहरि नाविक घर गेल ।
पथिक गमन पथ संसय भेल ।।

अनतए पथिक करिअ परबास ।
हमे धनि एकलि अंत नहि पास ।।

एक चिंता आओक मनमथ सोस ।
दसनि दसा मोहि करमक दोस ।।

रयनि न जाग सखी जन मोर ।
अनुखन सगर नगर भम चोर ।।

तोहें तरुन हमे बिरहिनि नारि ।
उचितहु बचन उपज कुलगारि ।।

बामा बचन बाम पथ धाव ।
अपन मनोरथ जुगुति बुझाव ।।

भनइ विद्यापति नारि सयानि ।
भल कए रखलक दुहु अनुमानि ।।

[२६५]

हमे जुबती पति गेलाह बिदेस ।
लग नहि बसए पड़ोसिअहु लेस ।।

सासु ननन्दि किछुओ नहि जान ।
आँखि रतौंधी सुनए न कान ।।

जागह पथिक जाह जनु मोर ।
राति अँधार गाम बड़ चोर ।।

भरमहु भौंरि न देख कोतवार ।
पश्रोलहु नेश्रोते न करए बिचार ।।

राश्रा काहु करए नहि साति ।
पुरुष महतें सब हमरे सजाति ।।

विद्यापति कवि एह रस गाब ।
उकुतिहि श्रबला भाव जनाब ।।

[२६६]

(विद्यापति की मृत्यु)

दुल्लहि तोहर कतए छथि माए ।
कहुन्ह श्रो श्राबथु एखन नहाए ।।

बृथा बुझथु संसार बिलास ।
पल पल नाना भौतिक त्रास ।।

माए बाप जश्रों सदगति पाब ।
सन्तति काँ श्रनुपम सुख जाब ।।

विद्यापतिक श्रायु श्रबसान ।
कातिक धवल त्रयोदसि जान ।।

।। इति ।।